ISSN No. 2583-9594

जल चेतना

खण्ड 13, अंक 2, जुलाई 2024

तकनीकी पत्रिका

भारत भूमि के आभूषण : रामसर स्थल (आमुख कथा)

- यमुना नदी का जलविज्ञानीय विश्लेषण
- जल की गुणवत्ता अति आवश्यक
- जल समाचार

NATIONAL INSTITUTE OF HYDROLOGY
Central India Hydrology Regional Centre, Bhopal
22nd REGIONAL COORDINATION COMMITTEE MEETING
April 2024, 10:30 AM

A Workshop on
Resilience of Flooding From Persistent Heavy Monsoon Rain In Northwest India
18 July 2024 at Chandigarh
Supported by
CARA (FCDO)
UK Government
CII

Theme
नारी शक्ति स्वच्छता का प्रयास, हम सब मिलकर करेंगे राष्ट्र का विकास
28, March 2024
Jal Tarang Auditorium
National Institute of Hydrology Roorkee

विषय सूची

जल चेतना
खण्ड 13, अंक 2, जुलाई 2024
मूल्य : निशुल्क

संरक्षक की कलम से 3
विशेष अनुरोध 4
सम्पादकीय 5
आमुख कथा : भारत भूमि के आभूषण : रामसर स्थल 6
• डॉ. प्रविण रंगराव पाटील, डॉ. मनीष कुमार नेमा, डॉ. पी.के. मिश्रा एवं डॉ. ए.आर. सेन्थिल कुमार
यमुना नदी का जलविज्ञानीय विश्लेषण 13
• विभा अग्रवाल एवं पुष्पेन्द्र कुमार अग्रवाल
जल की गुणवत्ता अति आवश्यक 19
• संजय गोस्वामी
जल का अधिकार क्यों आवश्यक है? 22
• डॉ. दीपक कोहली
कौन सुने नदिया की पीर रे 26
• डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा ''अरुण''
जल संसाधनों में उदीयमान प्रदूषकः स्त्रोत प्रभाव, एवं उपचार 27
• सुजाता कश्यप, राजेश सिंह, विनय कुमार त्यागी एवं पूजा त्यागी
कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर भारत 31
• डॉ. ऋचा पाण्डेय
भारत की कृषि और आर्थिक स्थिरता के लिए व्यापक जल प्रबंधन रणनीतियाँ 36
• डॉ. चन्द्र प्रकाश
महिला सशक्तिकरणः कृषि उद्यमिता व तकनीकी क्षेत्र में महिलाओं का योगदान 41
• पूनम पाण्डेय
माइक्रोप्लास्टिक-पर्यावरण में एक उभरता हुआ प्रदूषक 45
• डॉ. प्रशान्त कुमार साहू
हरी-भरी धरती 49
• सुनीता अग्रवाल
भूजल संसाधनों का महत्व एवं आंकलन 50
• गोपाल कृष्ण एवं अंजू चौधरी
वर्षा जल संग्रहण 54
• विपिन कुमार त्यागी
21वीं शताब्दी में वैश्विक ऊष्णता और हिमनद गलन में वृद्धिः एक वैश्विक समस्या 56
• डॉ. लवकुश पटेल
क्रुद्ध नदी 59
• डॉ. दीपक सिंह बिष्ट
जल समाचार 60
• पी.के. अग्रवाल
कार्टून संकलन
• हंसराज

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान

(जल शक्ति मंत्रालय, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, भारत सरकार)

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान की स्थापना जलविज्ञान तथा जल संसाधन विकास के क्षेत्र में आधारभूत, अनुप्रयुक्त एवं सामरिक अनुसंधान को संचालित करने के उद्देश्य से जल संसाधन मंत्रालय के अधीन एक स्वायत्तशासी संगठन के रूप में सन् 1978 में की गई थी। यह संस्थान उत्तराखण्ड राज्य के हरिद्वार जनपद के अंतर्गत रूड़की शहर में स्थित है।

अभिदृष्टि (विजन)

भारतवर्ष में जल क्षेत्र में दीर्घकालिक विकास तथा आत्म निर्भरता सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी अनुसंधान एवं विकास उपायों के माध्यम से जलविज्ञानीय शोध को नेतृत्व प्रदान करना।

मिशन

- जलविज्ञानीय अध्ययनों के लिए किफायती तकनीकों, प्रणालियों, सॉफ्टवेयर पैकेज, क्षेत्रीय मापयंत्रण आदि का विकास।
- निदर्शन तकनीकों के माध्यम से परिवर्तनशील जल–भूविज्ञानीय मौसम, सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों के अंतर्गत जल संसाधन उपलब्धता के परिदृश्यों का अध्ययन।
- जल संसाधनों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का आंकलन करना तथा न्यूनीकरण और अनुकूलन के लिए उपाय सुझाना।
- जल संसाधन विकास तथा प्रबंधन के लिए भावी प्रौद्योगिकियों के अनुप्रयोग का प्रचार करना।
- आवश्यकता–आधारित जल संबंधी समस्याओं के लिए किफायती अनुसंधान एवं विकास उपाय प्रदान करना।
- विभिन्न हिस्सेदारों को विश्वसनीय परामर्श देना।
- क्षमता विकास तथा जल संसाधन विकास एवं संरक्षण के प्रति जागरूक बनाकर समुदायों को समर्थ बनाना।

अनुसंधान के मुख्य विषय

- भूजल निदर्शन एवं प्रबन्धन।
- जल संसाधन नियोजन एवं प्रबन्धन।
- बाढ़ एवं सूखा भविष्यवाणी तथा प्रबंधन।
- हिम तथा हिमनद गलित प्रवाह आंकलन।
- अमापित बेसिनों में निस्सरण की भविष्यवाणी।
- विशिष्ट क्षेत्रों में जल गुणवत्ता निर्धारण।
- शुष्क, अर्ध–शुष्क तटीय तथा डेल्टाई क्षेत्रों का जलविज्ञान।
- जलाशय / झील अवसादन।
- जल संसाधनों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव।
- जलविज्ञानीय समस्याओं के समाधान हेतु आधुनिक प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग।

अनुसंधान एवं विकास कार्य

- छोटे जलग्रहण क्षेत्रों के लिए क्षेत्रीय बाढ़ सूत्र।
- बड़े बाँधों के लिए बाँध भंग बाढ़ विश्लेषण।
- हिमालयी क्षेत्र में अमापित बेसिनों से जल लब्धि।
- सुदूर संवेदन तथा जी.आई.एस. के प्रयोग द्वारा बड़े जलाशयों का अवसादन विश्लेषण।
- बहुउद्देश्यीय तथा बहु–जलाशय तंत्रों का प्रचालन।
- छोटे जल विभाजकों से उपलब्धता तथा मृदा क्षरण।
- महानगरीय शहरों का जलगुणवत्ता विश्लेषण।
- भारतीय मानक ब्यूरो के लिए मानकों का विकास।
- जलविज्ञानीय विश्लेषण के लिए पद्धति।
- हिमालयी हिमनदों का जलविज्ञानीय विश्लेषण।
- नदियों के अन्तर्योजन का जलविज्ञानीय अध्ययन।
- सूखा प्रबन्धन तथा शमन अध्ययन।
- समस्थानिकीय तकनीकों के प्रयोग से झीलों में अवसादन दर का निर्धारण।
- भूजल पुनःपूरण एवं सिंचाई प्रतिगमन प्रवाह।
- रेडियल कलक्टर कूपों का डिजायन।
- जलविज्ञानीय उपकरणों का विकास।
- समुद्र–जल के अवांछित प्रवेश का निर्धारण।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :–
डॉ. मनमोहन कुमार गोयल, निदेशक
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, जलविज्ञान भवन
रूड़की – 247 667 (उत्तराखंड)
ई–मेल – mkg.nihr@gov.in
दूरभाष : +91 – 1332 – 272106,
फैक्स + 91 – 1332 – 272123
website : www.nihroorkee.gov.in

जलविज्ञान तथा जल संसाधन के क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास कार्यों के लिए प्रतिबद्ध

संरक्षक की कलम से ...

प्रिय पाठकों

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि पृथ्वी पर सिर्फ मानवमात्र ही नहीं अपितु समस्त जीवधारियों एवं पेड़-पौधों के लिए जल प्रकृति प्रदत्त एक आवश्यक, अपरिहार्य एवं महत्वपूर्ण तत्व है। जल जीवन का आधार है, अतः इसके बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। जल का उपयोग हम पेयजल, कृषि, उद्योग, स्वच्छता, ऊर्जा उत्पादन, पर्यावरण संरक्षण, स्वास्थ्य एवं अन्य अनेक कार्यों में करते हैं। विभिन्न कार्यों में जल की महती आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए जल का संरक्षण एवं संचयन करना हमारी नैतिक जिम्मेवारी बन जाती है। उल्लेखनीय है कि हमारे देश में जल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है परंतु इसके समुचित संरक्षण, संचयन एवं प्रबंधन के अभाव में आज हमारे देश के कई हिस्सों को जल संकट का सामना करना पड़ रहा है। जनसंख्या वृद्धि एवं तीव्र शहरीकरण के कारण जल की बढ़ती मांग और प्राकृतिक संसाधनों के अतिदोहन की वजह से भूजल स्तर नीचे जा रहा है जिसके फलस्वरूप भूमि और जल की उपलब्धता निरंतर घटती जा रही है। यह एक चिंता का विषय है।

आज पूरा विश्व अनेक प्राकृतिक आपदाओं और चुनौतियों का सामना कर रहा है। इनमें जल भी है जो यद्यपि प्रकृति द्वारा सर्वसुलभ और सर्व-सहज तत्व है फिर भी इसके संरक्षण को लेकर विश्व के समस्त देश चिंतित हैं। आज हमारे देश में ही नहीं अपितु समूचे विश्व में शुद्ध जल की उपलब्धता में निरंतर गिरावट आ रही है। विभिन्न स्रोतों से प्रदूषक भार बढ़ने के कारण सतही और भूजल संसाधनों की गुणवत्ता खराब हो रही है। हमें ऐसे जल की आवश्यकता है जो मानव उपभोग, कृषि, उद्योग और पर्यावरण के लिए उपयुक्त एवं पर्याप्त हो।

आज ग्लोबल वार्मिंग, यानि वैश्विक तापवृद्धि के कारण पृथ्वी के तापमान में धीरे-धीरे वृद्धि हो रही है जिससे मौसम के रुख और हमारे प्राकृतिक संसाधनों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इस बदलाव के कारण सूखा, बाढ़ एवं तूफान आदि जैसी घटनाएं बढ़ रही हैं। इस ग्लोबल वार्मिंग के लिए काफी हद तक मानवीय गतिविधियां जिम्मेवार हैं। ग्लोबल वार्मिंग को जीवाश्म ईंधन की खपत कम करके, वनस्पतियों का संरक्षण करके, ऊर्जा-कुशल प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके कम कर सकते हैं।

हमारे देश के जल संसाधन, पेयजल एवं कृषि के साथ-साथ जलविद्युत उत्पादन, पशुधन उत्पादन, वानिकी, मत्स्य पालन, नौपरिवहन, मनोरंजक गतिविधियों और पारिस्थितिक आवश्यकताओं आदि जैसे विभिन्न क्षेत्रों में बढ़ती मांगों को पूर्ण करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यद्यपि आज हमारे वैज्ञानिकों, अभियंताओं, प्रशासकों एवं नियोजकों के निरंतर प्रयासों से देश के जल संसाधनों के समुचित उपयोग में उल्लेखनीय सुधार हुआ है तथापि जल गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारकों यथा जल प्रदूषण, जल की कठोरता, जल में खनिजों की अत्यधिक मात्रा आदि कारकों को नियंत्रित करके जल संसाधन प्रबंधन एवं अनुसंधान पर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। आज व्यर्थ बहने वाले जल को सतही एवं भूजल जलाशयों में एकत्र करना हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिए।

विगत 14 वर्षों से निरंतर प्रकाशित की जा रही प्रस्तुत पत्रिका का मुख्य उद्देश्य तकनीकी क्षेत्र में हो रहे शोध कार्यों की नित-नई जानकारी को हिंदी भाषा के माध्यम से आम-नागरिक तक पहुंचाना है। आज हमें जल के महत्व, उसके संरक्षण तथा जल की प्रत्येक बूंद के सदुपयोग की जानकारी आम-जनता को देने की आवश्यकता है। देश के हर नागरिक को जल संरक्षण से जुड़ना होगा क्योंकि इस संसाधन की सुरक्षा की जिम्मेवारी देश के हर नागरिक की है।

मुझे यह अवगत कराते हुए प्रसन्नता हो रही है कि राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की सरकारी कामकाज में राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग को समुचित बढ़ावा देने के लिए वर्षभर हिंदी की भिन्न-भिन्न गतिविधियां आयोजित करता रहता है। हिंदी में पत्रिकाओं का प्रकाशन भी इन्हीं गतिविधियों का एक हिस्सा है। हमारा प्रयास रहता है कि प्रशासनिक कार्यों के साथ-साथ तकनीकी एवं वैज्ञानिक प्रकृति के कार्यों में भी राजभाषा हिंदी का यथासंभव प्रयोग किया जाए। बड़े हर्ष का विषय है कि हमारे वैज्ञानिकगण एवं तकनीकी स्टाफ अपने रोजमर्रा के सामान्य प्रकृति के कार्यों में राजभाषा हिंदी का आवश्यकतानुसार प्रयोग कर रहे हैं।

इस पत्रिका के लिए जिन प्रबुद्ध लेखकों ने अपने रोचक, ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी लेख भेजकर हमें सहयोग दिया है मैं उनका हृदय से आभार व्यक्त करता हूं। पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े समस्त परामर्शदाता, समीक्षाकर्ता एवं संपादक मंडल के सदस्य बधाई के पात्र हैं।

मैं पत्रिका की अपार सफलता की कामना करता हूं ।

मनमोहन

(डॉ. मनमोहन कुमार गोयल)

विशेष अनुरोध

प्रिय पाठकों,

हम सभी जानते हैं कि प्राणियों के लिए जल प्रकृति प्रदत्त एक अनमोल उपहार है। धरती पर जीवन के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए जल का संचयन एवं संरक्षण अत्यन्त जरूरी है। आज जल के अतिदोहन, बर्बादी एवं दुरूपयोग की वजह से हमारा देश जल से जुड़ी भिन्न-भिन्न समस्याओं से जूझ रहा है। आज जल की समस्या किसी एक देश की नहीं अपितु संपूर्ण विश्व की समस्या बन गई है। हमारे देश में समय और स्थान के साथ-साथ जल से जुड़ी समस्याएं भिन्न-भिन्न हैं। एक ही समय में कहीं बाढ़ तो कहीं सूखा हमारे जीवन को प्रभावित कर रहे हैं। एक क्षेत्र में जहां जल के लिए घोर संघर्ष करना पड़ता है वहीं दूसरे क्षेत्र में अत्यधिक बारिश, बादल फटने और कुछ अन्य कारणों से बाढ़ का संकट पैदा हो जाता है। आज जल का संकट केवल शहरों में ही नहीं बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी व्याप्त है। हालत यह है कि देश में खाने के लिए अनाज तो है, किन्तु पीने के लिए शुद्ध जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है। आज हमें पीने के लिए जो जल मिलता है उसकी गुणवत्ता की भी कोई गारंटी नहीं है। आज हमारे सम्मुख जल की बर्बादी को रोकने, उसका सही ढंग से इस्तेमाल करने और उसकी गुणवत्ता को बरकरार रखने की गंभीर चुनौती है। जल से जुड़ी भिन्न-भिन्न समस्याओं एवं उनके उपायों को जन-जन तक पहुंचाने की मंशा को ध्यान में रखकर हमारे संस्थान ने वर्ष 2011 से अपनी इस तकनीकी पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया है और तब से यह पत्रिका निरंतर छमाही आधार पर प्रकाशित की जा रही है।

जब से हमारे संस्थान ने अपनी इस तकनीकी पत्रिका ''जल चेतना'' को प्रकाशित करने का कार्य प्रारम्भ किया है, तब से निरन्तर हमारे पास बहुसंख्य प्रबुद्ध पाठकों के प्रशंसा पत्र, फोन तथा ईमेल आ रहे हैं। पाठकगण अपनी स्थानीय समस्याओं के बारे में लिखकर उनका समाधान जानने के लिए हमसे अनुरोध भी करते रहते हैं। इन्हीं समस्याओं के बारे में सुनकर हमें पूरे देश में दिनों-दिन बढ़ रहे जल संकट के संबंध में जानकारी मिलती है। हमारा ध्यान इन समस्याओं पर केन्द्रित है तथा हमारे वैज्ञानिक पूरी एकाग्रता और समर्पण भाव से इस दिशा में कार्य कर रहे हैं। पाठकों की सकारात्मक प्रतिक्रियाओं एवं उपयोगी सुझावों से ही राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान को अपनी इस तकनीकी पत्रिका ''जल चेतना'' को नियमित रूप से प्रकाशित करने में सहयोग मिल रहा है। इस पत्रिका में तकनीकी लेखों के साथ-साथ लघु लेख, कविता, प्रश्नोत्तरी, शिक्षा एवं रोजगार जैसे विषयों को भी शामिल किया जाता है।

सामान्य सरकारी कामकाज के साथ-साथ जल जैसे महत्वपूर्ण विषय से जुड़ी विभिन्न जानकारियों को हिंदी भाषा के माध्यम से जन मानस तक पहुंचाने का संस्थान का यह एक विशेष प्रयास है। किसी भी पत्रिका की श्रीवृद्धि एवं सफलता में सुधी पाठकों की प्रतिक्रियाओं एवं सुझावों का योगदान अपेक्षित होता है। अतः हमें समस्त पाठकों से उनकी प्रतिक्रियाओं एवं सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी जिससे पत्रिका को और भी रोचक एवं उपयोगी बनाया जा सके।

हम आपसे विशेष रूप से आग्रह करते हैं कि आप सूचना प्रौद्योगिकी, नेनो टेक्नोलॉजी, जैव प्रौद्योगिकी तथा चिकित्सा विज्ञान के साथ-साथ भौतिक एवं रसायन विज्ञान में भी जल के उपयोग सम्बन्धित उपलब्धियों को केन्द्र बिन्दु बनाते हुए अपने लेख भेजने का कष्ट करें। हम उन सभी लेखकों के आभारी होंगे जो अपने लेख यूनिकोड प्रणाली या कृतिदेव-10 फोंट में पेज मेकर (6.5 या 7.0) अथवा माइक्रोसॉफ्ट वर्ड का प्रयोग करते हुए हमें भेजने का कष्ट करेंगे। लेख तथ्यों पर आधारित एवं रंगीन चित्रों से सुसज्जित होने चाहिये। संदर्भ और आकड़ों की जिम्मेवारी स्वयं लेखक की होगी।

हमारा यह भी अनुरोध है कि किसी भी रचना को लिखने का कार्य प्रारंभ करने से पहले सुनिश्चित कर लें कि यह आपकी मौलिक रचना है और आसान भाषा में तथ्यों के आधार पर लिखी गई है। किसी भी केस स्टडी पर लेख लिखते समय आवश्यक है कि उस स्थान के बारे में फोटो/संदर्भ सहित संपूर्ण जानकारी उपलब्ध करायी जाए। पत्रिका में छपे लेखों के प्रबुद्ध लेखकों को राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान द्वारा निर्धारित दरों पर मानदेय का भुगतान किए जाने का भी प्रावधान है।

लेख भेजते समय अपना संपर्क सूत्र, ईमेल एड्रस एवं फोन नं. आदि अवश्य भेजें। कृपया रचना भेजते समय यह भी सुनिश्चित कर लें कि विस्तृत लेख की सामग्री कम से कम पांच पेज (टाइप की हुई) की अवश्य हो एवं चार-पांच कविताओं (कम से कम दो पेज) को मिलाकर भी एक रचना के रूप में भेजा जा सकता है। साथ ही अपने लेख से संबंधित कम से कम 10 फोटोग्राफ (हाई रिजोल्यूशन, जे.पी.ई.जी. फॉरमेट) उसके अनुशीर्षक (कैप्शन) सहित ई-मेल : jalchetna44@gmail.com पर भेजने का कष्ट करें।

सभी लेखकों से विनम्र अनुरोध है कि वे अपने बैंक एकाउंट की जानकारी निम्नानुसार देने का कष्ट करें ताकि मानदेय राशि को सीधे लेखक के एकाउंट में भेजा जा सके।

बैंक एकाउंट विवरण
बैंक का नाम एवं शाखा –
खाता संख्या –
IFSC कोड –
बैंक पासबुक के प्रथम पृष्ठ की फोटो कॉपी –
पैन (PAN) नं.

सोबन सिंह रावत,
सम्पादक, जल चेतना
वैज्ञानिक 'एफ' एवं राजभाषा प्रभारी
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
रूड़की-247667, जिला-हरिद्वार
(उत्तराखण्ड)
Email : jalchetna44@gmail.com
दूरभाष : 01332-249227

जुलाई 2024

संरक्षक
डॉ. मनमोहन कुमार गोयल

मुख्य संपादक
डॉ. अनिल कुमार लोहनी

परामर्शदाता
डॉ. सुरजीत सिंह
डॉ. मुकेश कुमार शर्मा
डॉ. मनीष कुमार नेमा
डॉ. पुष्पेन्द्र कुमार सिंह
डॉ. दीपक सिंह बिष्ट

संपादक
डॉ. सोबन सिंह रावत

उप संपादक
प्रदीप कुमार उनियाल

सह संपादक
पवन कुमार

प्रकाशक
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
जलविज्ञान भवन,
रूड़की-247667
उत्तराखंड

मुद्रक
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
रूड़की

संपादकीय

तकनीकी पत्रिका ''जल चेतना'' का नूतन अंक अपने प्रबुद्ध पाठकों को सौंपते हुए हमें अपार प्रसन्नता हो रही है। हर बार की तरह इस बार भी वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयों से जुड़ी विभिन्न जानकारियों को सरल, सुबोध एवं प्रचलित भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है ताकि हर वर्ग का पाठक जल संबंधी शोध एवं विकास कार्यों की नई-नई जानकारियों का लाभ उठा सके। हमें विश्वास है कि यह अंक भी हमारे पाठकों को रोचक, ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी लगेगा। सुधी पाठकों की सकारात्मक प्रतिक्रिया और प्रबुद्ध लेखकों के सहयोग से ''जल चेतना'' पत्रिका के प्रकाशन का यह क्रम वर्ष 2011 से सतत रूप से जारी है।

प्रस्तुत अंक में भारत भूमि के आभूषणः रामसर स्थल, यमुना नदी का जलविज्ञानीय विश्लेषण, जल संसाधनों में उदीयमान प्रदूषकः स्त्रोत, प्रभाव एवं उपचार, माइक्रो प्लास्टिक-पर्यावरण में एक उभरता हुआ प्रदूषक, वर्षा जल संग्रहण इत्यादि जैसे रोचक, महत्वपूर्ण एवं उपयोगी लेखों को शामिल किया गया है। जल से जुड़े लेखों के अलावा कुछ अन्य रोचक विषयों जैसे जल का अधिकार क्यों आवश्यक है, कौन सुने नदिया की पीर रे, महिला सशक्तिकरणः उद्यमिता व तकनीकी क्षेत्र में महिलाओं का योगदान, जल समाचार आदि विषयों पर लिखे गए लेखों को भी सम्मिलित किया गया है।

जल समस्त प्राणियों के लिए अपरिहार्य तथा प्रकृति प्रदत्त एक अनमोल द्रव है जिसका कोई विकल्प नहीं है। आज जल संरक्षण को लेकर समूचा विश्व चिंतित है। यद्यपि प्रकृति ने हमें पर्याप्त मात्रा में जल सुलभ कराया है तथापि आज पूरे विश्व में जल का संकट गहराता जा रहा है। इसके लिए कई कारक जिम्मेवार हैं लेकिन जल का समुचित प्रबंधन न करना सबसे महत्वपूर्ण कारक है। जल से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए यह आवश्यक है कि जनमानस को जल के विभिन्न पहलुओं की पर्याप्त जानकारी हो। आज जल के अनियंत्रित दोहन के चलते स्वच्छ जल की कुल उपलब्धता धीरे-धीरे घटी है। इसका एक अन्य प्रमुख कारण जल प्रदूषण भी है। आज शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि के कारण जल की मांग में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। अतः इस पत्रिका के प्रकाशन का मुख्य उद्देश्य जल से संबंधित महत्वपूर्ण एवं उपयोगी जानकारियों को सामान्य जनमानस तक उनकी बोलचाल की भाषा के माध्यम से पहुंचाना है। जन जागरूकता अभियान तथा प्रचार-प्रसार की दृष्टि से यह पत्रिका निःशुल्क वितरित की जाती है।

संपादक मंडल उन समस्त विद्वत लेखकों का हृदय से आभार व्यक्त करता है जिन्होंने इस पत्रिका के लिए अपने रोचक एवं उपयोगी लेख देकर हमारा उत्साह बढ़ाया है। जल चेतना के इस अंक में जिन स्रोतों से चित्रों का संकलन किया गया है, संपादक मंडल उनका भी हार्दिक आभार व्यक्त करता है।

हमें विश्वास है कि यह पत्रिका पाठकों को अत्यन्त रोचक तथा उपयोगी लगेगी। पत्रिका के आगामी अंकों को और बेहतर बनाने तथा सामग्री व साज-सज्जा में अपेक्षित सुधार लाने के लिए समस्त सुधी पाठकों से उनके महत्वपूर्ण सुझाव आमंत्रित हैं।

जल चेतना

मूल्य : निःशुल्क
शिकायतः 01332-249228, 249227
ई–मेल : jalchetna44@gmail.com

सम्पादकीय : 01332-249214, 249227,
फैक्स : 01332-272123
ई–मेल : jalchetna44@gmail.com
वेब साइट : www.nihroorkee.gov.in

© राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान
पत्रिका में प्रकाशित आलेख एवं रचनाओं में प्रस्तुत तथ्य लेखकों के अपने विचार हैं, संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।
पत्रिका से सम्बन्धित सभी विवाद रूड़की न्यायालय द्वारा ही निपटाए जायेंगे।

डॉ. प्रविण रंगराव पाटील,
डॉ. मनीष कुमार नेमा,
डॉ. पी.के. मिश्रा एवं
डॉ. ए.आर. सेन्थिल कुमार

भारत भूमि के आभूषण : रामसर स्थल

आर्द्रभूमियों में संचित जल, स्थानीय सूक्ष्म पर्यावरण एवं जैव-विविधता के संरक्षण और संपोषण के प्रमुख कारक हैं। आर्द्रभूमियां, भूजल पुनर्भरण व गुणवत्ता वृद्धि, प्राकृतिक जल भंडारण, पीने और सिंचाई के जल के मुख्य स्रोत, प्रदूषकों और भारी धातुओं को तलछट और जलीय वनस्पतियों में संग्रहित जल शुद्धिकरण एवं प्रदूषण नियंत्रण, बाढ़ शमन एवं क्षरण नियंत्रण, गाद संग्रहण व मृदा निर्माण, कार्बन पृथक्करण, पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण, जलवायु विनियमन, सूखा नियंत्रण, औषधीय पौधों का उत्पादन, मत्स्य पालन, जल-विद्युत, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, मनोरंजन एवं पर्यटन अवसर जैसी अपरिहार्य एवं पारिस्थितिक तंत्र सेवाएं प्रदान करती हैं, तथा आजीविका भी सुनिश्चित करती हैं। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, प्रकृति के साथ सद्भाव की सीख तथा भारतीय संस्कृति में विरासत के रूप में अंतर्निहित है।

प्रस्तावना

अंतर्राष्ट्रीय महत्व की आर्द्रभूमियों के रूप में नामित रामसर स्थल उनके अमूल्य संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग, संरक्षण एवं प्रबंधन के लिए प्रतिबद्ध हैं। भूमि और जल के अंतरापृष्ठ पर स्थित ये आर्द्रभूमियाँ विश्व के अत्यधिक उत्पादक तथा जलवायु परिवर्तन के प्रति अति संवेदनशील पारिस्थितिक तंत्र के रूप में जल चक्र का अभिन्न अंग हैं, और समृद्ध जैव विविधता का समर्थन करती हैं। देश की पारिस्थतिकी और आर्थिक सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण इन आर्द्रभूमियों को 'मानव सभ्यता का पालना' एवं 'प्राकृतिक परिदृश्य के गुर्दे (किडनीज़ ऑफ द लैंडस्केप) भी कहते हैं। कच्छ भूमि या दलदल, वनस्पतियों से आच्छादित जलमग्न भूमि, लैगून, मैंग्रोव, पीटलैंड, मरुद्यान, तालाब, जलाशय, ऑक्सबो झीलें, लैकस्टारिन (झीलें), भूमिगत जलभृत, बाढ़कृत मैदान, डेल्टा, ज्वारीय समतल क्षेत्र व अन्य तटीय क्षेत्र और मूंगा चट्टानें आदि आर्द्रभूमि के मुख्य उदाहरण हैं। मुख्य नदी धारा, सिंचित कृषि भूमि तथा जलीय कृषि एवं कृत्रिम नमक पैन आदि आर्द्रभूमि में शामिल नहीं हैं। बाढ़ के परिणामस्वरूप आर्द्रभूमियों की मिट्टी में ऑक्सीजनमुक्त प्रक्रियाएँ प्रबल होती हैं। जलमग्न मिट्टी में पनपी जलीय पौधों की विशिष्ट प्रजातियाँ आर्द्रभूमियों को अन्य जल निकायों से अलग करती हैं। आर्द्रभूमि का जलस्रोत अक्सर भूजल होता है, परंतु यह सतही जल या समुद्री जल भी हो सकता है, जहाँ बड़े ज्वार आते हों।

अपनी उत्पत्ति, चरम जलवायु, भूवैज्ञानिक, रसायन विज्ञान, जैव विशेषताओं और स्थलाकृतिक विभिन्नताओं के कारणों से भारत आर्द्रभूमियों की समृद्ध विविधता से संपन्न है, जिसमें ऊँचाई वाली हिमालयीन झीलों से लेकर देश के 8,000 कि.मी. से अधिक लंबे समुद्रतट के समानान्तर आपस में जुड़े हुए विस्तृत मैंग्रोव, दलदल और मूंगा चट्टान क्षेत्र आदि शामिल हैं। अधिकांश आद्रर्भूमियाँ प्रमुख भारतीय नदियों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध हैं। ट्रांस-हिमालय से लेकर भारतीय द्वीपों तक दस जैव-भौगोलिक क्षेत्रों में विस्तृत आर्द्रभूमियाँ प्रजातियों, और पारिस्थितिकी प्रणालियों की विविधता प्रदर्शित करती हैं। आर्द्रभूमियाँ संकट में पड़ी बायोम तथा लुप्तप्राय प्रजातियों के उच्चतम अनुपात का संरक्षण करती हैं इनमें घुमंतु पक्षी, स्तनपायी, सरीसृप, उभयचर, और मछलियों की विभिन्न प्रजातियों की उच्च विविधता पनपती है। आर्द्रभूमियाँ प्रवासी पक्षियों की हजारों मीलों की यात्रा के दौरान आश्रय, भोजन और प्रजनन के लिए ठहराव प्रदान करती हैं। प्रवासी पक्षी प्रजातियों की अनुमानित संख्या 1200 से 1300 के बीच है, जो भारत की कुल पक्षी प्रजातियों का लगभग 24% है। आर्द्रभूमियाँ विभिन्न पौधों और जीव-जंतुओं की 40% प्रजातियों (1200 से अधिक पौधों और 18000 जीव प्रजातियों) के लिए सम्पन्न आवास हैं। जिनमें स्थानीय, राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर संरक्षित प्रजातियाँ भी हैं।

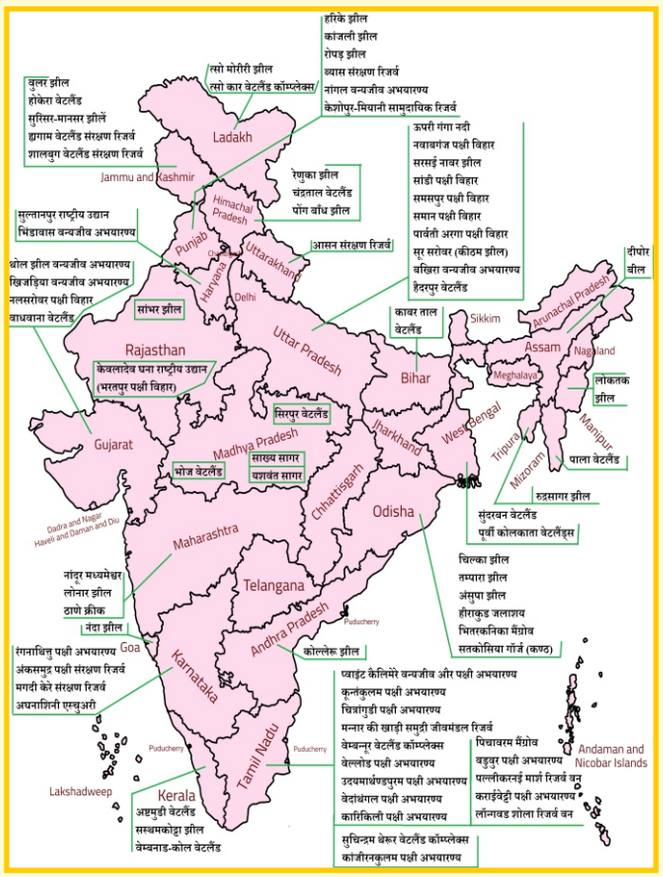

भारतीय रामसर स्थल

आर्द्रभूमि द्वारा प्रदत्त सेवाएं और लाभ

आर्द्रभूमियाँ, संचित जल, स्थानीय सूक्ष्म पर्यावरण एवं जैव-विविधता के संरक्षण और संपोषण के प्रमुख कारक हैं। आर्द्रभूमियाँ, भूजल पुनर्भरण व गुणवत्ता वृद्धि, प्राकृतिक जल भंडारण, पीने और सिंचाई के जल के मुख्य स्रोत, प्रदूषकों और भारी धातुओं को तलछट और जलीय वनस्पतियों में संग्रहित जल शुद्धिकरण एवं प्रदूषण, नियंत्रण, बाढ़ शमन एवं क्षरण नियंत्रण, गाद संग्रहण व मृदा निर्माण, कार्बन पृथक्करण, पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण, जलवायु विनियमन, सूखा नियंत्रण, औषधीय पौधों का उत्पादन, मत्स्य पालन, जल-विद्युत, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, मनोरंजन एवं पर्यटन अवसर जैसी अपरिहार्य एवं पारिस्थितिक तंत्र सेवाएं प्रदान करती हैं, तथा आजीविका भी सुनिश्चित करती हैं। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, प्रकृति के साथ सद्भाव की सीख तथा भारतीय संस्कृति में विरासत के रूप में अंतर्निहित है।

जलवायु परिवर्तन के प्रति प्राकृतिक लचीलापन

जलवायु परिवर्तन जलवायुतात्त्विक प्रबंधों पर सीधे प्रभाव डालता है तथा तापमान, वर्षा, समुद्र जलस्तर और चरम जलवायु घटनाओं जैसेः हानिकारक कारकों में अप्रत्यक्ष रूप से वृद्धि करता है। जल का उच्च तापमान, जल प्रदूषण को बढ़ावा देता है। अनियमित वर्षा पद्धति तटीय आर्द्रभूमियों (डेल्टा और मुहाना) की लवणता और तलछट एवं पोषक तत्वों की आपूर्ति को भी प्रभावित करती है। तटीय मूंगा चट्टानें एवं मैंग्रोव, उष्णकटिबंधीय शुष्क और अर्धशुष्क वन, उप-आर्कटिक वन और आर्कटिक/अल्पाइन आर्द्रभूमियां गंभीर खतरे में हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण समुद्री जलस्तर में 1 मीटर की संभावित वृद्धि होने पर भारत की लगभग 84% तटीय आर्द्रभूमि और 13% खारी आर्द्रभूमि नष्ट हो जाएंगी। आर्द्रभूमियाँ जल, जैव-विविधता पारिस्थितिकी तंत्र और स्थानीय समुदाय संरक्षण का एक अभिन्न अंग हैं। यद्यपि आर्द्रभूमियाँ जलवायु परिवर्तन के हानिकारक प्रभावों के प्रति प्राकृतिक लचीलापन प्रदान करती हैं। आर्द्रभूमियाँ नदियों के लिए मूलधाराएँ प्रदान करती हैं और हिमनदों के गलित हाने पर बफर क्षेत्र के रूप में योगदान देती हैं। आर्द्रभूमि में मौजूद बोग्स और फेन्स (मायर्स) बाढ़ के पानी को अवशोषित कर बाढ़ की तीव्रता, गति एवं ज्वारीय प्रभाव को भी कम कर देते हैं। सितंबर, 2014 में कश्मीर घाटी और दिसंबर, 2015 में चेन्नई में आई बाढ़ इस बात का उदाहरण है कि कैसे आर्द्रभूमि का विनाश जीवन को असुरक्षित बना सकता है। मैंग्रोव, मूंगा चट्टानें और समुद्री घास के मैदान उष्णकटिबंधीय चक्रवातों के प्रभाव को कम करने में तथा तटरेखा स्थिरीकरण में भौतिक बफर के रूप में सहायता करते हैं। 1999 के सुपर चक्रवात कलिंग, 2004 की हिंद महासागर सुनामी, और 2013 के फैलिन चक्रवात के साक्ष्य, तटीय आर्द्रभूमियों द्वारा समुदायों को बचाने में निभाई गई भूमिका को रेखांकित करते हैं। पीटलैंड में दीर्घावधि के लिए सर्वाधिक वैश्विक कार्बन भंडार उपलब्ध हैं जो वैश्विक वनस्पति जैव संसाधन में मौजूद कार्बन से दोगुने कार्बन का संचयन करती हैं, भूमि-आधारित कार्बन का लगभग 30% पीटलैंड तलछट में संग्रहीत होता है। आर्द्रभूमि की मृदा में इसमें पोषित वनस्पतियों की तुलना में 200 गुना अधिक कार्बन हो सकता है। इसके विपरीत आर्द्रभूमियां ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का स्रोत भी हैं। यद्यपि, आर्द्रभूमियां वैश्विक मीथेन (CH_4) उत्सर्जन में लगभग 40% का योगदान देती हैं, पोटलैंड, मैंग्रोव और नमक के दलदल, वायुमंडलीय ग्रीनहाउस गैसों के प्राकृतिक सिंक के रूप में कार्य करते हैं। पीटलैंड में जैविक मृदा के विकसित होने में हजारों वर्ष लग सकते हैं। विक्षुब्ध कार्बनिक मृदा के ऑक्सीकरण से वातावरण में पर्याप्त मात्रा में CO_2 का योगदान प्राप्त होता है। अबाधित आर्द्रभूमियां अन्य आर्द्रभूमियों की तुलना में लगभग दोगुना कार्बन संग्रहीत करती हैं। मैंग्रोव प्रति वर्ष प्रति हेक्टेयर लगभग 1.5 मीट्रिक टन कार्बन सोखने में सक्षम हैं। पुनर्जीवित आर्द्रभूमियों की कार्बन संग्रहण की क्षमता (50 वर्षीय अवधि के लिए) प्रति वर्ष लगभग 0.4 टन कार्बन/हेक्टेयर है।

आर्द्रभूमियों हेतु अंतर्राष्ट्रीय 'रामसर कन्वेंशन'

अति-संवेदनशील आर्द्रभूमियों को 'आर्द्रभूमि पर रामसर कन्वेंशन' के तहत संरक्षित किया गया है। यह आर्द्रभूमियों के अद्वितीय पारिस्थितिक तंत्र को संरक्षित करने और संसाधनों के न्यायसंगत उपयोग को बढ़ावा देने के लिए की गई एक अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण संधि है, जो कि राष्ट्रीय क्रियावली और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए एक रूपरेखा प्रदान करती है। इस समझौते पर यूनेस्को द्वारा दिनांक 2 फरवरी, 1971 को ईरान के शहर 'रामसर' में हस्ताक्षर किए गये थे, तथा दिसंबर, 1975 में इसे अपनाया गया था। इस उपलक्ष में प्रत्येक वर्ष 2 फरवरी को 'विश्व आर्द्रभूमि दिवस' मनाया जाता है। वर्तमान में रामसर कन्वेंशन के अनुबंध पक्षकार कुल 171 देश हैं। दुनिया के पहले रामसर स्थल (1974) की पहचान ऑस्ट्रेलिया के 'कोबोर्ग प्रायद्वीप' के रूप में की गई। विश्वभर में 25,61,926.02 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में 2471 से अधिक रामसर स्थल हैं। सर्वाधिक रामसर स्थलों की संख्या यूनाइटेड किंगडम (175) और मेक्सिको (142) में है। रामसर कन्वेंशन प्रभावी आर्द्रभूमि प्रबंधन पर जोर देता है और प्रबंधन उपायों की प्रभावकारिता का आंकलन और निगरानी करने के लिए उपकरणों एवं संरचना के अनुप्रयोग को प्रोत्साहित करता है।

रामसर स्थलों के रूप में नामांकन का उद्देश्य 'वैश्विक जैव विविधता एवं आर्द्रभूमियों के लाभों एवं पारिस्थितिकी, को अविरत रखते हुए मानव जीवन के कल्याण के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय नेटवर्क का विकास और पुनःस्थापना करना है। रामसर सूची में भारतीय आर्द्रभूमियों की 'पारिस्थितिक तंत्र के रखरखाव' के प्रति प्रतिबद्धता की एक स्वीकृति है, जिसे बुद्धिमानीपूर्ण/विवेकपूर्ण/न्यायसंगत उपयोग भी कहते हैं। अनुबंधकर्ता के रूप में, भारत संवहन के तीन स्तंभोंः (अ) आर्द्रभूमियों का न्यायसंगत उपयोग सुनिश्चित करने; (ब) रामसर सूची के लिए उपयुक्त आर्द्रभूमियों को नामित करने तथा उनका प्रभावी प्रबंधन करने एवं (स) सीमांत साझा आर्द्रभूमि और साझा प्रजातियों पर अंतर्राष्ट्रीय सहयोग करने के लिए प्रतिबद्ध है।

आर्द्रभूमियों के नामांकन हेतु मानदंड

1. आर्द्रभूमि को कमज़ोर, लुप्तप्राय या अत्यधिक संकटग्रस्त प्रजातियों अथवा धारित पारिस्थितिक समुदायों का आवास होना चाहिए।

2. आर्द्रभूमि को विशेष जैव-भौगोलिक क्षेत्र की विशिष्टता बनाऐ रखने के लिए महत्वपूर्ण पौधों/जीव/जन्तुओं की प्रजातियों का आश्रय स्थल होना चाहिए तथा उनके जीवन चक्र में सहायक होना चाहिए।

3. आर्द्रभूमि 20,000 या उससे अधिक जल पक्षियों की पनाहगार हो।

4. आर्द्रभूमि स्थानीय मछलियों की उप-प्रजातियों की कुल आबादी के पर्याप्त अनुपात का समर्थन करती हो तथा मछलियों के भोजन, प्रजनन नर्सरी या आवागमन का मुख्य स्थल हो।

5. आर्द्रभूमि भोजन और जल का महत्वपूर्ण स्रोत हो, तथा आजीविका, मनोरंजन एवं पर्यावरण-पर्यटन वृद्धि के लिए संभावनाएं बढ़ाती हो।

भारतीय रामसर स्थल

भारत द्वारा 1 फरवरी, 1982 को रामसर कन्वेंशन का अनुमोदन कर 1981 से 2014 तक कुल 26, 2015 से 2023 तक कुल 49 और जनवरी, 2024 तक कुल 05 आर्द्रभूमियों को रामसर स्थल घोषित किया गया है। वर्तमान में भारतवर्ष में कुल 80 रामसर स्थल उपलब्ध हैं। सर्वाधिक 16 रामसर स्थल तमिलनाडु में हैं। जैविक और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण भारतीय आद्रभूमियों (रामसर स्थलों सहित) की कुल संख्या 1301 है। अंतरिक्ष अनुप्रयोग केंद्र अहमदाबाद के नेशनल वेटलैंड्स डेकाडल चेंज एटलस (2021) के अनुसार, भारत में कुल 7,57,060 आर्द्रभूमि क्षेत्र उपलब्ध हैं, जिनमें 15.98 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में विस्तृत आर्द्रभूमि क्षेत्र उपलब्ध हैं, जो भारत के भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 5% है। इनमें 2.25 हेक्टेयर से कम क्षेत्रफल वाले कुल 5,55,557 क्षेत्र हैं। पश्चिम बंगाल का सुंदरबन सबसे बड़ा रामसर स्थल है, जिसका क्षेत्रफल 42,3000 हेक्टेयर है। जो कि 23 राज्यों में फैले भारत के कुल रामसर स्थल क्षेत्र का लगभग 32% है। हिमाचल प्रदेश में स्थित रेणुका वेटलैंड भारत की सबसे छोटी (क्षेत्रफल-20 हेक्टेयर) आर्द्रभूमि है।

भौतिक व पारिस्थितिक संरक्षण की आवश्यकता

विगत शताब्दियों से आर्द्रभूमियों को बेनामी या बंजर भूमि को जैव आवास भूमि मानकर उनके अमूल्य संसाधनों का अनियंत्रित दोहन होता रहा है। दिल्ली के राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में चिन्हित 629 जल निकायों में से 232 को अतिक्रमण के कारण पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता है। 1973 से 2007 के मध्य, शहरीकरण के कारण बैंगलौर के लगभग 1100 हेक्टेयर जल विस्तार क्षेत्र में स्थित 66 आर्द्रभूमि लुप्त हो गई हैं। यू.एस.ए. के जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं पर अंतर्शासकीय मंच के वैश्विक मूल्यांकन के अनुसार कई आर्द्रभूमियां अनियंत्रित जल निकासी; पुनर्ग्रहण; क्षरण; प्रदूषण; औद्योगिक अनुपचारित अपशिष्टों, प्रदूषक पदार्थ/ठोस अपशिष्ट/सीवेज की डंपिंग; अतिक्रमण और मृदा भराव; जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन के कारण अत्यधिक संवेदनशील पारिस्थितिक तंत्रों में शामिल हुई हैं। जलविज्ञान व जल रसायन विज्ञान में परिवर्तन, आर्द्रभूमियों की जलमग्नता, जलागम क्षेत्र का सिकुड़ना, जल निकासी एवं मार्ग परिवर्तन, भूजल का ह्रास, अत्यधिक चराई, कृषि अपवाह, अनुपचारित सीवेज, रासायनिक प्रदूषण, अतिरिक्त पोषक तत्व और संचयन खरपतवार संक्रमण आदि आर्द्रभूमियों में क्षरण के मुख्य कारक हैं। मृदा संरचना में परिवर्तन, मृदा में संग्रहीत कार्बन की हानि, सूखा या बाढ़ की अत्यधिक आवृत्ति, पौधों और पशुओं के प्रजातियों में परिवर्तन, तटीय आर्द्रभूमियों में खारे जल का अतिक्रमण, हिमनद गलन से प्राप्त जल की मात्रा और समय में परिवर्तन आदि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव हैं। आश्रित समुदाय विकल्प, बुनियादी आवश्यकताओं एवं जागरूकता के अभाव में इनके सीमित संसाधनों के दोहन के लिए विवश हैं। शहरीकरण के चलते स्थानीय लोगों का आर्द्रभूमियों से अलगाव हो गया है। जिसके परिणामस्वरूप जैव विविधता का पतन हो रहा है और समाज को मिलने वाले पारिस्थितिक तंत्र के लाभों में व्यवधान उत्पन्न हो रहे हैं। 'ग्लोबल वेटलैंड आउटलुक' के अनुसार अनियंत्रित मानवीय गतिविधियों और जलवायु परिवर्तन के कारण 1970 के बाद से वैश्विक स्तर पर 35% आर्द्रभूमियां नष्ट हो चुकी हैं।

विविधतापूर्ण भारतीय आर्द्रभूमियाँ

भारत द्वारा 1 फरवरी, 1982 को रामसर कन्वेंशन का अनुमोदन कर 1981 से 2014 तक कुल 26, 2015 से 2023 तक कुल 49 और जनवरी, 2024 तक कुल 05 आर्द्रभूमियों को रामसर स्थल घोषित किया गया है। वर्तमान में भारतवर्ष में कुल 80 रामसर स्थल उपलब्ध हैं। सर्वाधिक 16 रामसर स्थल तमिलनाडु में हैं। जैविक और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण भारतीय आद्रभूमियों (रामसर स्थलों सहित) की कुल संख्या 1301 है। अंतरिक्ष अनुप्रयोग केंद्र अहमदाबाद के नेशनल वेटलैंड्स डेकाडल चेंज एटलस (2021) के अनुसार, भारत में कुल 7,57,060 आर्द्रभूमि क्षेत्र उपलब्ध हैं, जिनमें 15.98 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में विस्तृत आर्द्रभूमि क्षेत्र उपलब्ध है, जो भारत के भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 5% है। इनमें 2.25 हेक्टेयर से कम क्षेत्रफल वाले कुल 5,55,557 क्षेत्र हैं। पश्चिम बंगाल का सुंदरबन सबसे बड़ा रामसर स्थल है, जिसका क्षेत्रफल 42,3000 हेक्टेयर है। जो कि 23 राज्यों में फैले भारत के कुल रामसर स्थल क्षेत्र का लगभग 32% है। हिमाचल प्रदेश में स्थित रेणुका वेटलैंड भारत की सबसे छोटी (क्षेत्रफल-20 हेक्टेयर) आर्द्रभूमि है।

'पारिस्थितिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मूल्यों' तथा 'अपार जैव-विविधता और प्राकृतिक अनुकूलन क्षमता' के महत्वपूर्ण भंडार हैं। इसके बावजूद आर्द्रभूमियाँ सबसे तेजी से नष्ट होने वाले पारिस्थितिक तंत्रों में से एक हैं। जल की बढ़ती मांग के कारण, संपोषित जैव विविधता की हानि और आर्द्रभूमियों द्वारा प्रदान की जाने वाली पारिस्थितिक सेवाओं की अनिश्चितता में भी वृद्धि हुई है एवं उनकी निरंतरता भंग हुई है, जिससे मानव कल्याण सीधे प्रभावित होता है। पारिस्थितिकी प्रणालियों की अखंडता और स्वास्थ्य का बनाए रखना उनके द्वारा प्रदत्त असंख्य लाभों एवं सेवाओं को निरंतर बहाल रखने की राष्ट्रीय प्रतिबद्धता का अभिन्न अंग है। अतः संतुलित जीवनशैली बहाल रखने में आर्द्रभूमियों की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते हुए, हमारे लिए इनका

पिचावरम मैंग्रोव

प्रभावी प्रबंधन और संरक्षण करना अनिवार्य है। जिसके माध्यम से अतिरिक्त आजीविका उत्पन्न करना संभव एवं अत्यावश्यक है। आर्द्रभूमि प्रबंधन में जलवायु जोखिमों को समाहित करना अत्यावश्यक है, जो कि जलवायु परिवर्तन के कारकों के शमन और प्रभावों के अनुकूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। आर्द्रभूमि प्रबंधन में भारत के सामाजिक पर्यावरण परिदृश्य के भीतर पारिस्थितिकी संरक्षण, सामुदायिक भागीदारी और विनियामक अनुपालनों के बीच संतुलन स्थापित करना आवश्यक है।

हिमनद आर्द्रभूमियों के संरक्षण, प्रबंधन एवं पुनर्वास हेतु प्रतिबद्धता, संस्थागत रणनीतियां, कानून, विनियामक व्यवस्थाएं, प्रयास, कार्यक्रम एवं परियोजनाएं

आर्द्रभूमियां सामाजिक संपत्ति हैं। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय आर्द्रभूमि संरक्षण के नीति और कार्यक्रमीय पहलुओं के समन्वय के लिए नोडल संस्था है। आर्द्रभूमि संरक्षण, भारतीय नीतियों, कानूनों और विनियामक व्यवस्थाओं में निहित पर्यावरण संरक्षण की समृद्ध विरासत से शक्ति प्राप्त करता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51-ए (ग) में इस भावना को समाहित किया गया है कि 'हर भारतीय नागरिक का यह दायित्व है कि वह वनों, झीलों, नदियों और वन्य जीवन सहित प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और उसमें सुधार करे और जीवित प्राणियों के प्रति करुणा का भाव रखे।' सक्रिय पहलों के माध्यम से भारत सरकार ने आर्द्रभूमियों के संरक्षण और स्थायी प्रबंधन के लिए दृढ नीतियों को लागू किया है, स्थानीय समुदायों को शामिल किया है और वैज्ञानिक एवं भागीदारी पूर्ण दृष्टिकोण अपनाए हैं। सन् 2006 की 'राष्ट्रीय पर्यावरण नीति' ने पारिस्थितिक सेवाएं प्रदान करने में आर्द्रभूमि के महत्व को मान्यता दी एवं विशेष नीति कारक स्थापित किए। जल संसाधनों के घटक के रूप में आर्द्रभूमियों को चिन्हित कर उनके संरक्षण हेतु सिफारिश की गई जिसके अन्तर्गत 'नीति कार्रवाई' में विकासात्मक योजनाओं का एकीकरण, विवेकपूर्ण उपयोग रणनीतियों पर आधारित प्रबंधन, इको-पर्यटन को बढ़ावा देना, और नियामक ढाँचे का कार्यान्वयन तथा इनकी राष्ट्रीय सूची विकसित करना आदि शामिल थे।

राष्ट्रीय आर्द्रभूमि संरक्षण कार्यक्रम (NWCP)

आर्द्रभूमियों का विवेकपूर्ण उपयोग सुनिश्चित कर उनकी संभावित दुर्दशा रोकने एवं स्थानीय समुदायों के लाभ और जैव विविधता के समग्र संरक्षण के लिए राष्ट्रीय वेटलैंड्स संरक्षण कार्यक्रम को वर्ष 1985-1986 में लागू किया गया था। जिसके मुख्य उद्देश्य (क) आर्द्रभूमियों के संरक्षण और प्रबंधन के लिए नीति बनाना, (ख) संरक्षण कार्यक्रम के वृहत्त कार्यान्वयन के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करना एवं कार्यक्रम की निगरानी करना, और (ग) आर्द्रभूमियों की सूची तैयार करना आदि थे। जिसमें तत्काल संरक्षण और प्रबंधन हस्तक्षेप की आवश्यकता वाली 115 आर्द्रभूमियों का चयन किया गया। आर्द्रभूमियों की पहचान के मानदंड वही थे जो रामसर कन्वेंशन के तहत निर्धारित किए गए हैं। इसी क्रम में 1993 में, विशेष रूप से शहरी और उप-शहरी झीलों के लिए NWCP से अद्यतन राष्ट्रीय झील संरक्षण योजना (NLCP) बनाई गई। 1995 की राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना (NRCP) का उद्देश्य प्रदूषण निवारण कर प्रमुख भारतीय नदियों के जल की गुणवत्ता को निर्दिष्ट सर्वोत्तम उपयोग के स्तर तक सुधारना था।

भारत में आर्द्रभूमि संरक्षण पर कार्रवाई मुख्य रूप से रामसर कन्वेंशन के तहत की गई अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं और अप्रत्यक्ष रूप से अन्य नीतिगत उपायों, जैसे तटीय क्षेत्र विनियमन अधिसूचना, 1991; पर्यावरण और विकास पर राष्ट्रीय संरक्षण रणनीति और नीति वक्तव्य, 1992; जैव विविधता पर राष्ट्रीय नीति और वृहत्त स्तर की कार्रवाई रणनीति, 1999; और राष्ट्रीय जल नीति, 2002 आदि के माध्यम से प्रभावित होकर की गई।

जैव विविधता और जलवायु संरक्षण के लिए आर्द्रभूमि प्रबंधन

जैव विविधता के संपोषण और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं सुनिश्चित करने के लिए पर्यावरण मंत्रालय द्वारा ''जैव विविधता और जलवायु संरक्षण के लिए आर्द्रभूमि प्रबंधन'' नामक अंतर्राष्ट्रीय जलवायु पहल के कार्यान्वयन के लिए चयनित, 04

वडुवुर पक्षी अभयारण्य

पायलट रामसर स्थलों में, पोंग बाँध और रेणुका झील (हिमाचल प्रदेश); भितरकनिका मैंग्रोव (ओडिशा), और प्वाइंट कैलिमेरे वन्यजीव और पक्षी अभयारण्य (तमिलनाडु) शामिल हैं। चिल्का विकास प्राधिकरण एक संसाधन केंद्र के रूप में कार्यरत है। जर्मन संघीय मंत्रालय के अधीन पर्यावरण, प्रकृति संरक्षण एवं परमाणु सुरक्षा (बी.एम.यू.) के सहयोग से यह परियोजना पर्यावरण मंत्रालय की योजना एन.पी.सी.ए. के साथ निकट सहयोग से कार्यान्वित की जा रही है।

राष्ट्रीय जलीय पारिस्थितिकी तंत्र संरक्षण योजना (एन.पी.सी.ए.)

वर्तमान में केंद्र सरकार और संबंधित राज्य/केंद्र शासित प्रदेश सरकारों के बीच लागत साझाकरण के आधार पर आर्द्रभूमियों (रामसर स्थलों सहित) के लिए एक केंद्र प्रायोजित योजना, अर्थात् राष्ट्रीय जलीय पारिस्थितिकी तंत्र संरक्षण योजना प्रशासित की जा रही है। यह 'राष्ट्रीय झील संरक्षण योजना' और 'राष्ट्रीय आर्द्रभूमि संरक्षण कार्यक्रम' के सम्मेलन के परिणामस्वरूप, आर्द्रभूमि और झीलों के लिए समर्पित एक व्यापक संरक्षण और पुनर्वास पहल है। इसके अन्तर्गत अपशिष्ट जल का अवरोधन, एवं उपचार; सीमांकन; तटरेखा संरक्षण; जैव-बाड़ गाद निकालना और खरपतवार नियंत्रण; बरसाती जल प्रबंधन; बायोरेमेडिएशन; मत्स्य पालन; जलग्रहण क्षेत्र उपचार; आर्द्रभूमि सौंदर्यीकरण; शिक्षार्थी और जागरूकता; सर्वेक्षण और सामुदायिक भागीदारी; आदि गतिविधियों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल है। यह योजना राज्यों के साथ एकीकृत प्रबंधन योजनाओं के गठन एवं कार्यान्वयन, क्षमता विकास और अनुसंधान को बढ़ावा देकर, आर्द्रभूमियों को मुख्य धारा में समेकित करने का लक्ष्य रखती है।

एन.पी.सी.ए. द्वारा आर्द्रभूमियों की एकीकृत प्रबंधन योजना (आई.एम.पी.) के दिशानिर्देश तैयार किए गए हैं, जो कि आर्द्रभूमियों का स्वास्थ्य निदान एवं सहभागी मूल्यांकन निर्धारित करते हैं। इस परियोजना के तहत स्थल स्तरीय जलवायु जोखिम मूल्यांकन मार्गदर्शिका विकसित की गई है। जिससे विवेकपूर्ण उपयोग सुनिश्चित करते हुए पारिस्थितिक सह-लाभ प्राप्त करने की दिशा में रामसर कन्वेंशन का अनुपालन किया जा सके।

एन.पी.सी.ए. के मुख्य उद्देश्यः एन.पी.सी.ए. के प्रमुख उद्देश्यों में आर्द्रभूमियों के स्वास्थ्य और स्थिरता को संबोधित करने वाले उपायों को अपनाना, लक्षित जलीय पारिस्थितिकी प्रणालियों की जल गुणवत्ता में टिकाऊ सुधार लाना, आर्द्रभूमियों के भीतर प्रजातियों की विविधता और प्रचुरता हेतु पहल व प्रयास करना, बहु-विषयक रणनीति को अपनाना, संरक्षण प्रयासों को सुव्यवस्थित और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए नियमों और दिशानिर्देशों का एकीकृत संग्रह एवं अनुपालन सुनिश्चित करना, आर्द्रभूमियों के प्रदूषण भार को कम करना, हितधारकों का लाभ तथा जलीय पारिस्थितिक तंत्र के संरक्षण हेतु स्वामित्व और जिम्मेदारी की भावना पैदा करने के लिए स्थानीय समुदायों की सक्रिय भागीदारी और सहयोग को प्रोत्साहित करना सम्मिलित है।

एन.पी.सी.ए. का व्यापक दृष्टिकोण आर्द्रभूमियों के लिए एक स्थायी और समृद्ध वातावरण बनाना है, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र और इस पर निर्भर समुदाय दोनों को लाभ हो।

सहभागिता से संरक्षण और संरक्षण से समृद्धि

अप्रैल-2022 में, माननीय प्रधानमंत्री जी ने "अमृत सरोवर" मिशन का शुभारंभ किया, जिसमें देश के प्रत्येक जिले में कम से कम 75 अमृत सरोवर (तालाबों) का निर्माण करना था। मई-2022 में, पर्यावरण मंत्रालय ने आर्द्रभूमियों के संरक्षण और विवेकपूर्ण उपयोग के लिए 'मिशन सहभागिता' को शुरू किया था। यह मिशन समाज और सरकार के सामूहिक दृष्टिकोण पर आधारित है, जो समुदायों और प्राथमिक हितधारकों को साथ लाने हेतु प्रतिबद्ध हैं। फरवरी, 2023 में मिशन सहभागिता के तहत प्रारम्भ किये गये 'सेव वेटलैंड्स/आर्द्रभूमि बचाओ अभियान' के उद्देश्यों में आर्द्रभूमि संरक्षण को एक जन आंदोलन बनाना, आर्द्रभूमियों के संरक्षण के लिए आर्द्रभूमि मित्रों की साझेदारियों को बनाना, हितधारकों में गौरव और स्वामित्व को बढ़ावा देना ताकि स्वस्थ आर्द्रभूमियों के लिए स्थायी जीवन शैली को अपनाया जा सके और आर्द्रभूमियों के विवेकपूर्ण उपयोग को प्रोत्साहित किया जा सके, पर्यावरण अनुकूल जीवन शैली (आर्द्रभूमियों के प्रति समर्पित जीवन) के माध्यम से आर्द्रभूमि संरक्षण में भारत के नेतृत्व को स्थापित करना, जैव विविधता और कार्बन संचयन को बढ़ावा देना, पर्यटन अवसरों और आय सृजन को बढ़ावा देना, रामसर स्थलों का प्रभावी प्रबंधन करने के लिए उनके विवेकपूर्ण उपयोग का मॉडल बनाने के लिए उन्हें सशक्त बनाना आदि सम्मिलित हैं।

वेल्लोड पक्षी अभयारण्य

पर्यावरण मंत्रालय ने पर्यटन और अन्य आजीविका के अवसरों के विकास के साथ-साथ रामसर स्थलों के विवेकपूर्ण उपयोग एवं अद्वितीय संरक्षण मूल्यों और सेवाओं के महत्व को स्वीकार करते हुए, उनके प्रोत्साहन के लिए 'अमृत धरोहर' पहल जून-2023 में की थी। यह पहल चार मुख्य घटकों अर्थात् पर्यावास संरक्षण, आर्द्रभूमि आजीविका, प्रकृति पर्यटन और आर्द्रभूमि कार्बन मूल्यांकन' पर केंद्रित है। अमृत धरोहर योजना विभिन्न विभागों/संस्थानों की योजनाओं/कार्यक्रमों और समुदायों की सहायता से कार्यान्वित की जा रही है। यह दीर्घकालिक कार्यान्वयन रणनीति, 'सहभागिता से संरक्षण और संरक्षण से समृद्धि' के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता का एक और उदाहरण है। ठोस परिवर्तन के लिए 'संपूर्ण सरकार और संपूर्ण समाज' वाला दृष्टिकोण समय की मांग है। अमृत धरोहर के 'संरक्षण और सतत प्रबंधन के लिए संपूर्ण समाज' दृष्टिकोण को आगे बढ़ाने के लिए मिशन सहभागिता का मसौदा तैयार किया गया है।

आर्द्रभूमि पुनर्जीवन कार्यक्रम

पर्यावरण मंत्रालय ने भारत सरकार के 169 परिवर्तनात्मक विचारों के तहत 100 आर्द्रभूमियों के पुनर्जीवन कार्यक्रम को देश के सभी जिलों तक पहुँचाते हुए, 1,000 आर्द्रभूमियों के पुनर्वास और कायाकल्प का लक्ष्य रखा है। कार्यक्रम के प्रथम चरण में, राज्य सरकारों के परामर्श से 130 आर्द्रभूमियों को चयनित किया गया था। 100 दिनों की कार्यान्वयन अवधि में, आधारभूत जानकारी का संग्रह और आर्द्रभूमि की स्थिति का त्वरित मूल्यांकन कर, 33 संवेदनशील आर्द्रभूमियों की सूची बनाई

उदयमार्थण्डपुरम पक्षी अभयारण्य

गई। यह कार्यक्रम एन.पी.सी.ए. संरचना के अंतर्गत मानकीकृत चार-आयामी दृष्टिकोणों (क) आधारभूत/मूलभूत जानकारी का विकास (ख) पारिस्थितिकी तंत्र का त्वरित मूल्यांकन, (ग) सहयोगी और भागीदारी प्रबंधन को सक्षम व संभव बनाने के लिए हितधारक मंच और (घ) आर्द्रभूमियों की जैव विविधता और पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं, मूल्यों और खतरों का आंकलन एवं संबोधन करने वाली एकीकृत आर्द्रभूमि प्रबंधन योजना पर आधारित है।

आर्द्रभूमि संरक्षण व प्रबंधन नीति एवं नियामक कानूनी संरचना

आर्द्रभूमियां कई केंद्रीय विधानों और नियमों से संरक्षित है। पर्यावरण मंत्रालय ने वेटलैंड्स (संरक्षण और प्रबंधन) नियम, 2017 को पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के प्रावधानों के तहत अधिसूचित किया है, जो देश के सभी अधिसूचित रामसर आर्द्रभूमियों पर लागू हैं। इन प्रावधानों के अनुरूप, प्रत्येक राज्य और केंद्र शासित प्रदेश के अधीन मुख्य नीति और नियामक निकायों के रूप में, राज्य/संघ राज्य क्षेत्र वेटलैंड प्राधिकरण के गठन/स्थापना का प्रावधान है, जो सभी आर्द्रभूमियों के संरक्षण के लिए उत्तरदायी है। इस प्राधिकरण में जलविज्ञान, सामाजिक अर्थशास्त्र, मत्स्य पालन और आर्द्रभूमि पारिस्थितिकी के एक-एक विशेषज्ञ तथा प्रशासकीय अधिकारी सम्मिलित होंगे। वे 'बुद्धिमानीपूर्ण उपयोग के सिद्धांत' का निर्धारण करेंगे, जो आर्द्रभूमि के प्रबंधन को निर्देशित करेगा। 'बुद्धिमानीपूर्ण उपयोग' को संरक्षण के साथ संगत 'स्थायी उपयोग के सिद्धांत' के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। आर्द्रभूमि की पहचान करने का दायित्व राज्यों का होगा। नए नियमों में विकेंद्रीकृत दृष्टिकोण अपनाया गया है, ताकि क्षेत्रीय आवश्यकताओं को पूर्ण किया जा सके और राज्य अपनी प्राथमिकताओं को निर्धारित कर सकें। ज्यादातर निर्णय प्राधिकरण द्वारा लिए जाएंगे, जिसकी निगरानी राष्ट्रीय वेटलैंड समिति करेगी। नए नियमों में 'आर्द्रभूमि' की परिभाषा से बैकवाटर, लैगून, खाड़ियाँ और मुहाना जैसे जल निकायों को हटा दिया गया है। पुराने संस्करण (2010) में 'सेंट्रल वेटलैंड रेगुलेटरी अथॉरिटी/केंद्रीय वेटलैंड नियामक प्राधिकरण (सी.डब्ल्यू.आर.ए.)' का प्रावधान था, लेकिन 2017 के संशोधित वैधानिक ढाँचे ने इसे राज्य-स्तरीय निकायों से बदल दिया और 'एन.डब्ल्यू.सी.' की स्थापना की अनुशंसा की, जो एक सलाहकार की भूमिका अदा करेगी। एन.डब्ल्यू.सी., सी.डब्लू.आर.ए. की जगह लेगी और इसका नेतृत्व पर्यावरण मंत्रालय के सचिव महोदय द्वारा किया जाएगा। NWC के नियम आर्द्रभूमि के भीतर पुनर्ग्रहण, आसपास उद्योग स्थापित करने, ठोस अपशिष्ट डंपिंग, खतरनाक पदार्थों के निर्माण या भंडारण, अनुपचारित अपशिष्टों के निर्वहन, स्थायी निर्माण आदि गतिविधियों पर प्रतिबंध लगाते हैं। यह उन गतिविधियों को भी नियंत्रित करते है, जिन्हें राज्य सरकार की सहमति के बिना अनुमति नहीं दी जाती जैसे द्रवीय परिवर्तन, अस्थिर चराई, प्राकृतिक उत्पादों की कटाई, उपचारित अपशिष्टों का निर्वहन, जलीय कृषि, कृषि और ड्रेजिंग आदि। आर्द्रभूमि संरक्षण कार्यक्रमों का समग्र समन्वय केंद्र सरकार की जिम्मेदारी है, जो राज्य सरकारों को दिशानिर्देश प्रदान करने के साथ वित्तीय और तकनीकी सहायता भी प्रदान करती है।

संरक्षण एवं प्रबंधन अधिनियम (2010) के अन्तर्गत विनियमित आर्द्रभूमियों का वर्गीकरणः

संरक्षण एवं प्रबंधन अधिनियम के अन्तर्गत विनियमित आर्द्रभूमियों को रामसर कन्वेंशन के तहत चयनित तथा यूनेस्को से विश्व धरोहर के रूप में मान्यता प्राप्त आर्द्रभूमियां, पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील/ पर्यावरणीय आर्द्रभूमियाँ जैसे कि राष्ट्रीय उद्यान आदि, समुद्र तल से 2500 मी. से कम ऊँचाई पर स्थित आर्द्रभूमियां, जिनका क्षेत्रफल $\geq$ 500 हैक्टर या उससे अधिक है, समुद्र तल से 2500 मी. की या उससे अधिक ऊँचाई पर स्थित आर्द्रभूमियां, जिनका क्षेत्रफल $\geq$ 5 हैक्टर है, तथा प्राधिकरण द्वारा चिन्हित आर्द्रभूमियों में वर्गीकृत किया गया है। नदी धाराओं और सिंचाई टैंकों को आर्द्रभूमि नियमों के तहत संरक्षण से विमुक्त रखा गया है।

राष्ट्रीय वन्यजीव कार्य योजना (2017-2031) ने अंतर्देशीय जलीय पारिस्थितिक तंत्र के संरक्षण को 17 प्राथमिकता वाले क्षेत्रों के रूप में चिन्हित किया है और 'राष्ट्रीय वेटलैंड्स मिशन' और 'राष्ट्रीय वेटलैंड्स जैव विविधता रजिस्टर' के विकास को मुख्य हस्तक्षेप के रूप में दृष्टिगत किया है। जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (एन.ए.पी.सी.सी.) के 'राष्ट्रीय जल और हरित भारत मिशन' में आर्द्रभूमियों का संरक्षण और स्थायी प्रबंधन शामिल है।

इसके अलावा, भारतीय वन अधिनियम (1927), वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम (1972), वन (संरक्षण) अधिनियम (1980), वन्यजीव (संरक्षण) संशोधन अधिनियम (1991), संशोधित राज्य वन अधिनियम, और तटीय विनियमन क्षेत्र अधिसूचना (2011), जैसे नियमों और अधिनियमों की विभिन्न प्रावधानिकताएं रामसर स्थलों सहित, जंगलों और नामित संरक्षित क्षेत्रों के भीतर स्थित आर्द्रभूमियों के लिए नियामक ढाँचा परिभाषित करती हैं। इसी प्रकार, भारतीय मत्स्य अधिनियम (1897); जल (प्रदूषण और नियंत्रण) अधिनियम (1974); जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम (1974); प्रादेशिक जल, महाद्वीपीय शेल्फ, विशिष्ट आर्थिक क्षेत्र और अन्य समुद्री क्षेत्र अधिनियम (1976); जल उपकर अधिनियम (1977); भारत का समुद्री क्षेत्र (विदेशी जहाजों द्वारा विनियमन और मछली पकड़ना) अधिनियम (1980); पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम (1986); जैव विविधता अधिनियम (2002); और अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम (2006) भारतीय आर्द्रभूमियों के संरक्षण के लिए अप्रत्यक्ष रूप से कानूनी और नियामक शर्तें प्रदान करते हैं (एम.ओ.ई.एफ., 2007)।

अंतर्राष्ट्रीय सहयोग

पर्यावरण मंत्रालय ने आर्द्रभूमि प्रबंधन, निगरानी क्षमताओं में सुधार और संस्थागत संरचनाओं को मजबूत करने हेतु द्विपक्षीय और बहुपक्षीय अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ साझेदारी की है, जिससे ''राष्ट्रीय पारिस्थितिक संरक्षण अधिनियम'' के प्रभावी कार्यान्वयन में भी सहायता प्राप्त होती है।

ज्ञानवर्धन और अनुसंधान

पर्यावरण मंत्रालय का 'राष्ट्रीय वेटलैंड पोर्टल' (2021), आर्द्रभूमि संरक्षण और प्रबंधन में शामिल होने के

लिए प्राधिकरणों, प्रबंधकों, प्रशासकों, निर्णायकों, छात्रों और देशवासियों के लिए एक ई-सूचना केंद्र एवं मंच के रूप में उपलब्ध है। इस पर आर्द्रभूमियों की सूची, 600 से अधिक आर्द्रभूमियों का हेल्थ कार्ड, क्षमता विकास भागीदारी, शिक्षा एवं जागरूकता, दिशानिर्देश, ज्ञानवर्धक प्रकाशन और ई-लर्निंग सामग्री आदि उपलब्ध है।

क्षमता विकास

आर्द्रभूमि प्रबंधकों के क्षमता विकास के लिए पर्यावरण मंत्रालय ने मिशन सहभागिता के माध्यम से तथा विशेषज्ञों के सहयोग से क्षेत्रीय तकनीकी कार्यशालाएं और समीक्षा बैठकें आयोजित की हैं। जिससे प्रबंधकों को सर्वोत्तम अभ्यासों, मुख्य चुनौतियों और मुद्दों पर चर्चा करने हेतु मंच मिलता है। जो विनियामक संरचनाओं और पहलों के कार्यान्वयन में मार्गदर्शक है।

निजी क्षेत्र की भागीदारी

निजी क्षेत्र आर्द्रभूमियों के संरक्षण में अग्रणी है। भारतीय व्यावसायिक और जैव विविधता पहल (भारतीय उद्योग परिसंघ द्वारा स्थापित) और पर्यावरण मंत्रालय के बीच एक सहयोग समझौता किया गया है, जिसका मुख्य उद्देश्य व्यवसायियों को आर्द्रभूमि के प्रबंधन और संरक्षण प्रयासों में भागीदार बनाना है।

निष्कर्ष

अंतर्देशीय, तटीय, समुद्रीय प्राकृतिक वास की व्यापक श्रृंखला के साथ, नम और शुष्क दोनों वातावरण विशेषताओं से परिपूर्ण आर्द्रभूमियाँ प्राकृतिक जैव विविधता के अस्तित्व के लिए अति महत्त्वपूर्ण है। 'जैविक सुपरमार्केट' के रूप में प्रसिद्ध यह नाजुक आर्द्रभूमियाँ जैविक, रासायनिक और आनुवांशिक सामग्री के स्रोत, सिंक और परिवर्तक के रूप में अपना दायित्व भलीभाँति निभाती आ रही हैं। जल एवं अन्य आर्द्रभूमि संसाधनों पर बढ़ती निर्भरता, जिससे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित जैव विविधता एवं प्रजातियां लुप्त होने के कगार पर हैं। मानव अस्तित्व बचाए रखने के लिए जैव विविधता का सरंक्षण

आजीविका के लिए कमल बीनते स्थानीय लोग

अपरिहार्य है। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में कई आर्द्रभूमियाँ मानवजनित दबाव के अधीन हैं, जिसमें जलग्रहण क्षेत्र में परिवर्तन; अतिक्रमण; उद्योगों और शहरों से बढ़ता प्रदूषण; पर्यटन; कृषि गहनता और प्राकृतिक संसाधनों का दोहन आदि शामिल है, जो इन बहुमूल्य पर्यावरण-संतुलनकर्ताओं को विलुप्तता की ओर धकेल रहा है।

आर्द्रभूमियों के संरक्षण के प्रति समझ का अभाव देखा गया है। पर्यावरण शिक्षित समाज की कमी, अपर्याप्त प्रबंधन, कानून प्रवर्तन में देरी व लचीलापन, भ्रष्टाचार और कम निवेश का अधिक लाभ अर्जित करने की मानसिकता सतत विकास में असंतुलन पैदा करती है। इसके लिए समन्वित प्रयास आवश्यक हैं, आम जनता और स्थानीय हितधारकों को आर्द्रभूमियों के प्रति जागरूक कर उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। आर्द्रभूमि संरक्षण हेतु ऊर्जा, उद्योग, राजस्व, कृषि, मत्स्य पालन, परिवहन, पर्यटन तथा जल शक्ति मंत्रालय के प्रभावी समन्वय की आवश्यकता है, साथ ही राज्यों की सहभागिता भी महत्वपूर्ण है। शहरी तथा औद्योगिक विकास से उत्पन्न समस्याओं के विरूद्ध कानून प्रवर्तन/ त्वरित अनुपालन तथा भ्रष्टाचार के खिलाफ शून्य सहनशीलता की नीति अपनाई जानी चाहिए ताकि आर्द्रभूमि संरक्षण से कोई समझौता न हो। आर्द्रभूमि पारिस्थितिकी तंत्र स्वास्थ्य के आंकलन को आपदा योजना का हिस्सा बनाया जाना चाहिए तथा आर्द्रभूमि प्रबंधन योजनाओं में आपदा जोखिम को कम करने का एक अंतर्निहित घटक होना चाहिए। चिन्हित आर्द्रभूमियों के अलावा पारिस्थितिक रूप से महत्वपूर्ण अन्य आर्द्रभूमियों की पहचान कर, उन्हें भी संरक्षित किया जाना आवश्यक है। सुशासन और प्रबंधन के साथ अर्थशास्त्र, पर्यावरण, प्रकृति संरक्षण, विकास योजना में सरकारी नीतियों के बीच अनुरूपता आर्द्रभूमियों के संवर्धन हेतु आवश्यक है।

अधिकांश भारतीय शोध कार्य आर्द्रभूमि प्रबंधन के लिम्नोलॉजीकल (सरोविज्ञानिक) पहलुओं और पारिस्थितिक/पर्यावरण अर्थशास्त्र से संबंधित हैं। लेकिन, भौतिक (जैसे जलविज्ञान और भूमि-उपयोग परिवर्तन), सामाजिक-आर्थिक (जैसे जनसंख्या वृद्धि और आर्थिक गतिविधियों में परिवर्तन) और संस्थागत कारकों के कारण लिम्नोलॉजीकल परिवर्तनों पर पर्याप्त अनुसंधान नहीं हुआ है। भविष्य में इन्हीं वास्तविक कारकों पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है, ताकि बढ़ते तनाव का सामना कर रही आर्द्रभूमियों के लिए बेहतर और व्यापक प्रबंधन रणनीतियों को निर्धारित करके शीघ्र क्रियान्वयन किया जा सके तथा आर्द्रभूमियों के क्षरण के लिए केवल जलवायु परिवर्तन को ही उत्तरदायी न ठहराया जाए। हालाँकि, आर्द्रभूमि तंत्र में गिरावट या गिरावट की सीमा के बारे में ठोस अनुमान अभी तक स्थापित नहीं हुए हैं, क्योंकि ऐसी भविष्यवाणियाँ करने वाले जलवायु मॉडल पर्याप्त रूप से सुदृढ़ नहीं हैं। जल संसाधनों के संरक्षण की योजना बनाते समय जलीय पारिस्थितिकी तंत्र और आर्द्रभूमियों की पर्यावरणीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए। आर्द्रभूमि के जलग्रहण क्षेत्र की जलवैज्ञानिक और पारिस्थितिक अखंडता के लिए एक प्रभावी और उचित जल गुणवत्ता निगरानी योजना तैयार करने की आवश्यकता है। जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं पर आधारित प्रबंधन रणनीतियों का निर्धारण कर आर्द्रभूमियों का जलवायु अनुकूलन के प्रति लचीलापन बढ़ाया जा सकता है।

संपर्क करें:
डॉ. प्रविण रंगराव पाटील, डॉ. मनीष कुमार नेमा, डॉ. पी.के. मिश्रा एवं डॉ. ए.आर. सेन्थिल कुमार
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की

विभा अग्रवाल एवं
पुष्पेन्द्र कुमार अग्रवाल

यमुना नदी का जलविज्ञानीय विश्लेषण

यमुना नदी का उद्गम उत्तराखंड राज्य के उत्तरकाशी जिले में समुद्र तल से लगभग 6,387 मीटर की ऊँचाई पर 38° 59' उत्तरी अक्षांश एवं 78° 27' पूर्वी देशांतर पर निम्न हिमालय की मसूरी पर्वत श्रृंखला में बंदरपूँछ के पास यमुनोत्री हिमनद से होता है। अपने उद्गम स्थल यमुनोत्री से गंगा में संगम स्थल इलाहबाद तक यमुना की कुल लंबाई 1,376 किमी है और जल निकासी क्षेत्र 366,223 वर्ग किमी है। यमुना स्वयं में एक विशाल नदी है और इसकी अनेक सहायक नदियाँ हैं। यमुना नदी के कुल जलग्रहण क्षेत्र में यमुना नदी की सहायक नदियों का भाग 70.9% है। इसके अतिरिक्त यमुना का जलग्रहण क्षेत्र गंगा बेसिन के कुल जलग्रहण क्षेत्र का 40.2% और भारत के सम्पूर्ण भू-भाग का 10.7% है।

सिंधु, गंगा तथा ब्रहमपुत्र नामक विश्व की तीन प्रमुख नदी प्रणालियों का उद्गम हिमालय पर्वत श्रृंखलाओं से होता है। इन नदी तंत्रों में भारत की सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं पवित्र नदी गंगा, भारतवर्ष के भौगोलिक क्षेत्र के लगभग एक तिहाई भू-भाग से होकर गुजरती है। इस महान नदी की सामाजिक-आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक गाथा इतनी पौराणिक है कि भारतीय पौराणिक कथाओं और इतिहास में नदी के इर्द-गिर्द बुनी गई कहानियों और घटनाओं की भरमार है। इसके मार्ग में कई तीर्थस्थल स्थित हैं। निस्संदेह, गंगा भारत की सर्वाधिक पवित्र नदी है वास्तव में स्थानीय लोग इसे आमतौर पर गंगा माँ (या माँ गंगा) या गंगा जी (या पूजनीय गंगा) कहते हैं। भारत के लोगों का मानना है कि गंगा के पवित्र जल में स्नान करने से व्यक्ति के सभी पिछले पाप धुल जाते हैं। अगर किसी व्यक्ति की मृत्यु के समय उसे गंगा जल की कुछ बूँदें दी जाएँ, तो यह उसकी आत्मा को स्वर्ग पहुँचाने के लिए पर्याप्त है।

गंगा और उसकी सहायक नदियों ने उत्तर भारत में एक विशाल समतल और उपजाऊ मैदान का निर्माण किया है। प्रचुर जल संसाधनों, उपजाऊ मिट्टी और उपयुक्त जलवायु की उपलब्धता की बदौलत यह क्षेत्र अत्यधिक विकसित कृषि आधारित सभ्यता और दुनिया के सबसे घनी आबादी वाले क्षेत्रों में से एक है। भारत में गंगा बेसिन में शुद्ध बोया गया क्षेत्र लगभग 44 मिलियन हेक्टेयर और शुद्ध सिंचित क्षेत्र 23.41 मिलियन हेक्टेयर है। बेसिन के पूर्वी भाग को जल देने वाली सहायक नदियों के प्रवास के परिणामस्वरूप विशिष्ट बैक-स्वैम्प और मेन्डर बोल्ट एकत्रित हो गए हैं। ये तलछटी विशेषताएँ क्षेत्र की जलगतिकीय में एक प्रमुख भूमिका निभाती हैं।

गंगा नदी की प्रमुख सहायक नदियों में यमुना, सोन, घाघरा, रामगंगा, दामोदर, गोमती, महानंदा, टोंस, कोसी, बूढ़ी गंडक, पुनपुन, मयूराक्षी, गंडक, अजय, चन्दन, बागमती आदि प्रमुख हैं जिनमें यमुना नदी गंगा की सबसे बड़ी सहायक नदी तथा भारत की पवित्र नदियों में से एक है। पौराणिक कथाओं के अनुसार, यमुना को सूर्य की पुत्री और यम (मृत्यु के देवता) की बहन बताया

यमुना नदी तंत्र (आसन बैराज तक)

गया है। महाकवि बाण ने अपने महाकाव्य कादंबरी में यमुना नदी को इसके जल का रंग काला होने के कारण इसे कालिंदी के रूप में संबोधित किया है। एक लोकप्रिय मान्यता यह है कि यमुना के पवित्र जल में स्नान करने से जनमानस में मृत्यु का भय नहीं रहता। यमुना नदी का भगवान कृष्ण के जीवन से घनिष्ठ संबंध है। यह कहा जाता है कि जब भगवान कृष्ण के जन्म पर उनके पिता वासुदेव शिशु भगवान कृष्ण के साथ यमुना नदी पार कर नदी के दूसरे किनारे पर सुरक्षित स्थान पर जा रहे थे, तो नदी में बाढ़ आ गई। किवदंती कहती है कि जिस क्षण बढ़ते पानी ने भगवान कृष्ण के चरणों को छुआ, नदी में जल का बहाव कम हो गया। इसके अतिरिक्त अपने बाल्यकाल में ही भगवान कृष्ण ने यमुना नदी में कालिया नाग का मर्दन भी किया था।

यमुना नदी का उद्गम उत्तराखंड राज्य के उत्तरकाशी जिले में समुद्र तल से लगभग 6,387 मीटर की ऊँचाई पर 38° 59' उत्तरी अक्षांश एवं 78° 27' पूर्वी देशांतर पर निम्न हिमालय की मसूरी पर्वत श्रृंखला में बंदरपूँछ के पास यमुनोत्री हिमनद से होता है। अपने उद्गम स्थल यमुनोत्री से गंगा में संगम स्थल इलाहबाद तक यमुना की कुल लंबाई 1,376 किमी है और जल निकासी क्षेत्र 366,223 वर्ग किमी है। यमुना स्वयं में एक विशाल नदी है और इसकी अनेक सहायक नदियाँ हैं। यमुना नदी के कुल जलग्रहण क्षेत्र में यमुना नदी की सहायक नदियों का भाग 70.9% है। इसके अतिरिक्त यमुना का जलग्रहण क्षेत्र गंगा बेसिन के कुल जलग्रहण क्षेत्र का 40.2% और भारत के सम्पूर्ण भू-भाग का 10.7% है।

यमुना नदी की प्रमुख सहायक नदियों में टोंस, चंबल, हिंडन, शारदा, बेतवा और केन प्रमुख हैं। अन्य लघु सहायक नदियों में ऋषि गंगा कुंटा, हनुमान गंगा, उमा, गिरि, करन, सागर और रिंद सम्मिलित हैं। इन नदियों में यमुना एवं टोंस नदियाँ हिमालय के हिमनदों से उद्गमित होती हैं। इसके अतिरिक्त यमुना बेसिन की अनेक छोटी नदियाँ जैसे चौटांग, साहिबी, दोहन, कन्तिली, बापाह, बानगंगा आदि यमुना नदी में संगम से पूर्व ही रेतीले इलाकों में सूख जाती हैं। यमुना नदी के उद्गम स्थल पर उत्तराखंड के चार धामों में से एक यमुनोत्री मंदिर स्थित है। प्रतिवर्ष लाखों तीर्थ यात्री यहाँ दर्शन हेतु आते हैं। यह कहा जाता है कि यमुनोत्री मंदिर का निर्माण 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में हुआ था। यमुनोत्री में गर्म जल का एक कुंड मौजूद है और इस कुंड का जल इतना गर्म है कि लोग चावल और आलू को कपड़े के थैलों में डालकर इस गर्म पानी में डुबोकर पकाते हैं। यमुना नदी तंत्र का जलग्रहण क्षेत्र उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश और दिल्ली राज्यों के कुछ भागों से आच्छादित है। विभिन्न राज्यों में स्थित यमुना के जलग्रहण क्षेत्र को सारणी 1 में दर्शाया गया है।

अपने स्रोत से उद्गमित होकर, यमुना नदी हिमालय के निचले भाग में लगभग 200 किमी तक घाटियों की एक श्रृंखला से होकर प्रवाहित होती है और फिर सिंधु-गंगीय मैदानी क्षेत्र में तीव्र प्रवणता वाले भू-भाग में उद्गमित होती है। 200 किमी लम्बे नदी प्रवाह के इस भाग में यमुना नदी में अनेक प्रमुख सहायक नदियाँ समाहित होती हैं। इसके पश्चात यह नदी भारत के हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड राज्यों की शिवालिक पर्वत श्रृंखलाओं से होकर प्रवाहित होती है और तत्पश्चात उत्तराखंड के डाक पत्थर नामक स्थान पर यह मैदानी क्षेत्रों में प्रवेश करती है। जहाँ नदी के जल को डाक पत्थर बैराज द्वारा नियंत्रित कर इसका उपयोग विद्युत उत्पादन के लिए किया जाता है। डाक पत्थर के पास यमुना नदी पर यहाँ सतलुज यमुना लिंक (SYL) नहर का निर्माण चल रहा है जो सतलुज को यमुना से जोड़ती है। इस नहर का उद्देश्य सिंधु बेसिन से हरियाणा के हिस्से का 3.5 MAF जल यमुना में स्थानांतरित करना है। डाक पत्थर से, यमुना प्रसिद्ध सिख धार्मिक स्थल पौंटा साहिब से होकर प्रवाहित होती है। पोंटा साहिब से बहते हुए, यह हरियाणा राज्य के यमुना नगर जिले में हथिनीकुंड/ताजेवाला बैराज तक पहुँचती है, जहाँ नदी के जल को सिंचाई के लिए पश्चिमी यमुना नहर और पूर्वी यमुना नहर में मार्गाभिगमित किया जाता है। शुष्क ऋतु के दौरान, ताजेवाला बैराज के अनुप्रवाह में नदी में व्यावहारिक रूप से कोई जल प्रवाह नहीं होता है और ताजेवाला और दिल्ली के बीच के कई भागों में नदी सामान्यतः सूखी रहती है। भूजल संचय और मौसमी सरिताओं से प्राप्त जल का योगदान फिर से नदी को पुनर्जीवित करता है। यमुना नदी लगभग 224 किलोमीटर की यात्रा करने के बाद पल्ला गाँव के पास दिल्ली में प्रवेश करती है। दिल्ली में स्थित वजीराबाद बैराज से यमुना नदी द्वारा दिल्ली शहर को पेयजल उपलब्ध कराया जाता है। सामान्यतः वजीराबाद बैराज के अनुप्रवाह में नदी में जल प्रवाह शुष्क मौसम में लगभग शून्य होता है क्योंकि नदी में उपलब्ध जल दिल्ली की जल मांग को पूर्ण करने के लिए पर्याप्त नहीं होता है। वजीराबाद बैराज से लगभग 22 किमी अनुप्रवाह में, यमुना के जल को ओखला बैराज के माध्यम से सिंचाई के लिए आगरा नहर में मार्गाभिगमित कर दिया जाता है। सामान्यतः शुष्क मौसम के दौरान बैराज के माध्यम से जल का प्रवाह शून्य होता है। ओखला बैराज के अनुप्रवाह में नदी में जो भी जल प्रवाहित होता है, वह पूर्वी दिल्ली, नोएडा और साहिबाबाद से निकलने वाले घरेलू और औद्योगिक अपशिष्ट जल के माध्यम से आता है और शाहदरा नाले के माध्यम से नदी में समाहित हो जाता है। ताजेवाला

सारणी 1: विभिन्न राज्यों में यमुना नदी का जलग्रहण क्षेत्र

राज्य का नाम	राज्य में यमुना का जलग्रहण क्षेत्र (वर्ग किमी)	जलग्रहण क्षेत्र का प्रतिशत
उत्तर प्रदेश (उत्तराखंड सहित)	74,208	21.5
हिमाचल प्रदेश	5,799	1.6
हरियाणा	21,265	6.5
राजस्थान	102,883	29.8
मध्य प्रदेश	140,230	40.6
दिल्ली	1,485	0.4

में, नदी में वर्ष में अधिकतम एवं न्यूनतम निस्सरण का अनुपात लगभग 40 प्राप्त होता है, जबकि यही अनुपात सिंधु का 33, गंगा का 34 और अमेज़न का 4 है। यह बड़ा अनुपात प्रवाह में व्यापक अस्थायी भिन्नता का संकेत है। गैर-मानसून अवधि के दौरान ताजेवाला में पूर्ण प्रवाह नहर प्रणालियों में परिवर्तित हो जाता है जिससे नदी सूखी रहती है। इसके पश्चात यमुना नदी आगरा, मथुरा शहर से होकर प्रवाहित होती है तथा अंततः इलाहाबाद में गंगा नदी में समाहित हो जाती है। यमुना नदी को विशिष्ट जलविज्ञानीय और पारिस्थितिकी स्थितियों के कारण इसे पाँच अलग-अलग स्वतंत्र खंडों में विभाजित किया जा सकता है जिन्हें सारणी-2 में प्रस्तुत किया गया है।

सारणी-2: यमुना नदी के स्वतंत्र खंड

खंड का नाम	स्थान	खंड की लंबाई
हिमालयी खंड	उद्गम से ताजेवाला बैराज तक	172 किमी
ऊपरी खंड	ताजेवाला बैराज से वजीराबाद बैराज तक	224 किमी
दिल्ली खंड	वजीराबाद बैराज से ओखला बैराज तक	22 किमी
यूट्रिफिकेटेड खंड	ओखला बैराज से चंबल संगम तक	490 किमी
तनुकृत खंड	चंबल संगम से गंगा संगम तक	468 किमी

यमुना जल बंटवारा समझौता

यमुनोत्री में इसके उद्गम से लेकर दिल्ली में ओखला बैराज तक नदी के खंड को "ऊपरी यमुना बेसिन" कहा जाता है। इसके जल के बंटवारे के लिए 12 मई 1994 को पांच बेसिन राज्यों (हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, हरियाणा, राजस्थान और दिल्ली) के बीच एक समझौता ज्ञापन (MOU) पर हस्ताक्षर किए गए थे। इसके परिणामस्वरूप भारत के जल संसाधन मंत्रालय के तहत ऊपरी यमुना नदी बोर्ड का गठन हुआ, जिसके प्राथमिक कार्य हैं: लाभार्थी राज्यों के बीच उपलब्ध प्रवाह का विनियमन और वापसी प्रवाह की निगरानी; सतही और भूजल की गुणवत्ता के संरक्षण और उन्नयन की निगरानी; बेसिन के लिए जल-मौसम संबंधी आंकड़ों को तैयार करना; जलविभाजक प्रबंधन के लिए योजनाओं का अवलोकन करना; और ओखला बैराज सहित सभी परियोजनाओं की प्रगति की निगरानी और समीक्षा करना। अंतर्राज्यीय समझौते में यह भी परिकल्पना की गई है कि पर्यावरणीय उपयोगों के लिए पूरे वर्ष ताजेवाला और ओखला हेडवर्क्स के अनुप्रवाह पर यमुना नदी में न्यूनतम 10 क्यूमेक का प्रवाह बनाए रखा जाएगा। यह भी आंकलन किया गया है कि बाढ़ के कारण 680 एमसीएम की मात्रा उपयोग योग्य नहीं है। लाभार्थी राज्यों के बीच उपलब्ध प्रवाह का आबंटन ऊपरी यमुना नदी बोर्ड द्वारा विनियमित किया जाता है। जिस वर्ष सतही जल की उपलब्धता निर्धारित मात्रा से अधिक होगी, अधिशेष उपलब्धता को राज्यों के बीच उनके आबंटन के अनुपात में वितरित किया जाएगा। हालांकि, जिस वर्ष उपलब्धता निर्धारित मात्रा से कम होगी, पहले दिल्ली के पेयजल आबंटन को पूरा किया जाएगा और शेष जल को हरियाणा, उत्तर प्रदेश और राजस्थान के बीच उनके आबंटन के अनुपात में वितरित किया जाएगा।

यमुनोत्री धाम का एक दृश्य

हथिनीकुन्ड बैराज

यमुना नदी में बाढ़ के पूर्वानुमान के उद्देश्य से पौंटा साहिब में बाढ़ पूर्वानुमान प्रणाली स्थापित की गई है, जहाँ टोंस, पवार और गिरि सहायक नदियाँ मिलती हैं। पौंटा साहिब के बाद ताजेवाला में बाढ़ पूर्वानुमान प्रणाली स्थापित की गई है। ताजेवाला से दिल्ली तक जल पहुंचने में लगभग 60 घंटे लगते हैं, अतः दिल्ली में बाढ़ के

पूर्वानुमान के लिए कम से कम दो दिन पहले चेतावनी जारी की जा सकती है। यमुना नदी के उपयोग योग्य प्रवाह का राज्यवार आवंटन सारणी 3 में दर्शाया गया है।

सारणी-3 : यमुना नदी के उपयोगी प्रवाह का राज्यवार आवंटन

राज्य	जल आवंटन (एमसीएम में)
हरियाणा	5,730
उत्तर प्रदेश	4,032
राजस्थान	1,119
हिमाचल प्रदेश	378
दिल्ली	724
योग	**11,983**

जलवायुः हिमालय ऊपरी यमुना जलग्रहण क्षेत्र के उत्तरी भाग में जलवायु पर विशिष्ट प्रभाव डालता है। इस क्षेत्र में शीत ऋतु में तापमान बहुत कम तथा ग्रीष्म ऋतु में मध्यम होता है। जिससे यहाँ शीत ऋतु बहुत अधिक ठंडी होती हैं। यमुना नदी के इस भू-भाग में माध्य वार्षिक वर्षा 1,500 मिमी से 400 मिमी के मध्य होती है। यमुना नदी का सम्पूर्ण जलग्रहण क्षेत्र दक्षिण-पश्चिम मानसून के प्रभाव में आता है और वर्षा का एक बड़ा भाग जून से सितंबर माह के मध्य प्राप्त होता है। सर्दियों में दिसंबर और फरवरी के मध्य वर्षा बहुत कम होती है। यमुना बेसिन मैदानी क्षेत्रों में तापमान अपेक्षाकृत मध्यम होता है तथा गर्मियों में तापमान सामान्यतः 40 डिग्री सेल्सियस से अधिक हो जाता है।

यमुना नदी में जल संसाधन

यमुना नदी व इसकी सहायक नदियों में घरेलू उपयोग, सिंचाई, विद्युत उत्पादन आदि उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अनेक बाँध व बैराज निर्मित/निर्माणाधीन/प्रस्तावित हैं। निर्मित बांधों व बैराजों में धालीपुर जल विधुत परियोजना, गिरी परियोजना, छिबरो जल विद्युत परियोजना, खोदरी जल विद्युत परियोजना, खारा जल विद्युत परियोजना, गांधीसागर बाँध, राणा प्रताप सागर बाँध, जवाहर सागर बाँध, चम्बल घाटी परियोजना, बाण सागर टोंस परियोजना, पारबती बाँध, माताटीला बाँध, रामसागर बाँध, डाकपत्थर बैराज, हथिनी कुंड बैराज (ताजेवाला बैराज से प्रतिस्थापित), वजीराबाद बैराज, इंद्रप्रस्थ बैराज, ओखला बैराज, गोकुल बैराज (मथुरा बैराज), पल्ला बैराज आदि सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त अन्य निर्माणाधीन/प्रस्तावित परियोजनाओं में लखवार बाँध, किसाऊ बाँध, रेणुका बाँध नया वजीराबाद बैराज प्रमुख हैं। उपरोक्त परियोजनाओं में से प्रमुख परियोजनाओं का संक्षिप्त वर्णन निम्न खण्डों में दर्शाया गया है।

लखवार एवं व्यासी बांधः यमुना नदी पर उत्तराखंड राज्य के देहरादून जिले में 30°31'3" उत्तरी अक्षांश और 77°56'58" पूर्वी देशांतर पर देहरादून से 72 किलोमीटर दूर लखवार गांव के निकट डाक पत्थर बैराज से लगभग 28 किमी प्रतिप्रवाह में लोहारी ग्राम से 20 किमी दूर लखवार व्यासी बहुउद्देशीय परियोजना प्रस्तावित है जिसके अंतर्गत लखवार बांध, लखवार पॉवर हाउस, व्यासी वांध, हथिआरी पॉवर हाउस तथा कटापत्थर बैराज का निर्माण प्रस्तावित है। लखवार बाँध का जलग्रहण क्षेत्रफल 2080 वर्ग किमी है। इस परियोजना से 300 MW विद्युत उत्पादन प्रस्तावित है।

किशाऊ बांधः किशाऊ बांध देहरादून से लगभग 95 किलोमीटर दूर 30°44'59.3" उत्तरी अक्षांश और 77°42'16" पूर्वी देशांतर पर यमुना नदी की सहायक नदी टोंस नदी पर प्रस्तावित है। परियोजना के पूर्ण होने पर 1.015 MAF सिंचाई जल उपलब्ध होगा, इसमें से केवल 0.515 MAF का उपयोग पूर्वी यमुना नहर द्वारा 97,076 हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि की सिंचाई के लिए किया जाएगा और शेष 0.500 MAF जल दिल्ली राज्य को घरेलू उपयोगों के लिए उपलब्ध कराया जाएगा।

डाकपत्थर बैराजः डाकपत्थर बैराज भारत के उत्तराखंड राज्य में यमुना नदी पर दूर 30°30'14" उत्तरी अक्षांश और 77°47'41" पूर्वी देशांतर पर देहरादून जिले के डाकपत्थर नामक स्थान पर स्थित है। यह बैराज रन-ऑफ-द-रिवर योजना के अन्तर्गत, डकरानी और धालीपुर पावर प्लांट में जलविद्युत उत्पादन के लिए पूर्वी यमुना नहर के जल को डाइवर्ट करने का कार्य करता है।

धालीपुर जल विद्युत परियोजनाः धालीपुर जल विद्युत परियोजना उत्तराखंड के देहरादून जिले में हरबर्टपुर से 5 किमी दूर यमुना नदी पर स्थित है। यह परियोजना डाक पत्थर बैराज द्वारा डकरानी पावर चैनल में डाइवर्ट किए गए यमुना जल का उपयोग करती है। यह परियोजना 1965-70 में चालू की गई थी। इस परियोजना में जल प्रवाह की दर 198.24 घन मीटर/सेकंड है। पावर हाउस की कुल विद्युत उत्पादन क्षमता 39 मेगावाट है।

गिरी परियोजनाः गिरि परियोजना हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले में पौंटा साहिब से 25 किमी दूर स्थित यमुना नदी की सहायक नदी गिरि पर स्थित एक डायवर्सन परियोजना है। यहाँ स्थित बैराज 163 मीटर लंबा है। 1978 में चालू किए गए गिरि पावर हाउस में 30 मेगावाट की 2 इकाइयाँ स्थापित हैं।

छिबरो जल विद्युत परियोजनाः छिबरो जल विद्युत परियोजना, देहरादून से 67 किलोमीटर दूर, उत्तराखंड के देहरादून जिले में, यमुना की एक सहायक नदी, टोंस पर स्थित है। बांध का जलग्रहण क्षेत्र 4,890 वर्ग किमी है। बांध की ऊंचाई और लंबाई क्रमशः 59.25 मीटर और 155 मीटर है। इस पावर हाउस में 60 मेगावाट की 4 इकाइयाँ स्थापित हैं।

खोदरी जल विद्युत परियोजनाः छिबरो जल विद्युत परियोजना के अनुप्रवाह में खोदरी पावर हाउस स्थित है, जिसे देहरादून से 52 किलोमीटर दूर,

यमुना के जल का उपयोग पांच राज्यों हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान एवं दिल्ली द्वारा किया जाता है। यद्यपि यमुना जल के बंटवारे के लिए 12 मई 1994 को पांचों राज्यों के बीच जल बंटवारे के लिए एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए थे। परन्तु इन राज्यों के मध्य विशेष रूप से दिल्ली के साथ जल विवाद बना रहता है। इसका प्रमुख कारण यमुना नदी पर कोई प्रमुख जल संचयन परियोजना का न होना है जिसके परिणामस्वरूप जहां एक ओर मानसून ऋतु में यमुना से प्राप्त अतिरिक्त जल के कारण दिल्ली और अनुप्रवाह के क्षेत्रों के जन मानस को भयंकर बाढ़ का सामना करना पड़ता है वहीं दूसरी ओर शुष्क मौसम में इन राज्यों के निवासियों, विशेषतः दिल्लीवासियों को जल की कमी का सामना करना पड़ता है। जिसके कारण इसके उपयोगकर्ता राज्यों के मध्य जल विवाद उत्पन्न होता है। अतः इस समस्या का अपेक्षित समाधान किया जाना आवश्यक है।

दिल्ली में प्रदूषित यमुना नदी

उत्तराखंड के देहरादून जिले में स्थापित किया गया है। यह परियोजना 1984 में शुरू की गई थी। खोदरी पावर हाउस में 30 मेगावाट की 4 इकाइयाँ उपलब्ध हैं।

खारा जल विद्युत परियोजनाः खारा जल विद्युत परियोजना उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले में, यमुना नदी की सहायक नदी अहसान पर, सहारनपुर से 50 किलोमीटर दूर स्थित है। 24 मेगावाट की तीन इकाइयों वाले इस पावर हाउस में 1992 में विद्युत उत्पादन प्रारंभ हुआ था, इस पॉवर हाउस की कुल विद्युत उत्पादन क्षमता 62 मेगावाट है।

हथिनी कुंड बैराजः हथिनी कुंड बैराज भारत के हरियाणा राज्य के यमुना नगर जिले में यमुना नदी पर स्थित एक कंक्रीट बैराज है। यह बैराज पश्चिमी और पूर्वी यमुना नहरों में जल को डाइवर्ट करने के लिए उपयोग किया जाता है। हथिनी कुंड बैराज से छोड़े गए जल को दिल्ली में वजीराबाद बैराज, इंद्रप्रस्थ बैराज, ओखला बैराज द्वारा नियंत्रित करके इसकी दिल्ली के निवासियों के विभिन्न उपयोगों हेतु जलापूर्ति की जाती है।

गांधीसागर बाँधः गांधीसागर चंबल नदी पर निर्मित मुख्य संचयन बांध है, जिसका जलग्रहण क्षेत्र लगभग 23,025 वर्ग किलोमीटर है। यह बांध गांधीसागर, राणा प्रतापसागर और जवाहरसागर बांधों में विद्युत उत्पादन और कोटा बैराज से निकलने वाली नहर प्रणालियों के माध्यम से सिंचाई के लिए बैकअप भंडारण के रूप में कार्य करता है। यह बांध 64.63 मीटर ऊंचा, चिनाई वाला गुरूत्वाकर्षण बांध है जिसकी जल विद्युत उत्पादन क्षमता 115 मेगावाट और सिंचाई क्षमता 7.57 लाख हेक्टेयर है।

राणा प्रताप सागर बाँधः राणा प्रताप सागर राजस्थान के चित्तौड़गढ़ जिले में कोटा से 54 किलोमीटर दूर चंबल नदी पर बना एक चिनाई वाला गुरुत्वाकर्षण बांध है। बांध का जलग्रहण क्षेत्र 24,576 वर्ग किमी है। बांध की ऊंचाई और लम्बाई क्रमशः 38.3 मीटर और 1,143 मीटर है। जलाशय की उपयोगी संचयन क्षमता 2,899.5 MCM है। विद्युत गृह में विद्युत उत्पादन हेतु 43 मेगावाट की 4 इकाइयाँ उपलब्ध हैं।

जवाहर सागर बांधः जवाहर सागर बांध राजस्थान के कोटा जिले में कोटा से 36 किलोमीटर दूर राणा प्रताप सागर के अनुप्रवाह में चंबल नदी पर बना एक गुरुत्वाकर्षण कंक्रीट बांध है। बांध का जलग्रहण क्षेत्र 26,880 वर्ग किमी है। बांध की ऊंचाई और लंबाई क्रमशः 37 मीटर और 336 मीटर है। इस जलाशय की उपयोगी संचयन क्षमता 7.40 MCM है। इस बाँध में विद्युत उत्पादन हेतु 33 मेगावाट की 3 इकाइयां स्थापित हैं। यह परियोजना 1972-73 में पूर्ण हुई थी।

चम्बल घाटी परियोजनाः चंबल घाटी परियोजना के अंतर्गत राजस्थान और मध्य प्रदेश में सिंचाई और औद्योगिक उद्देश्यों के लिए नहर तंत्र के साथ चंबल नदी पर तीन बांध और एक बैराज निर्मित किये गये हैं। परियोजना से लगभग 5 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई होगी।

बाण सागर टोंस परियोजनाः बाणसागर टोंस जलविद्युत परियोजना, रीवा से 50 किलोमीटर दूर, मध्य प्रदेश के रीवा जिले में, यमुना की सहायक नदियों टोंस और बीहर नदी पर स्थित है। बाणसागर बांध का जलग्रहण क्षेत्र क्रमशः 8,648 वर्ग किमी है। विद्युत गृह में 105 मेगावाट की 3 इकाइयाँ स्थित हैं।

पार्वती बाँधः पार्वती बांध राजस्थान के धौलपुर जिले में चंबल बेसिन में पार्वती

इलाहाबाद में गंगा यमुना संगम का एक दृश्य

नदी पर जिला मुख्यालय से लगभग 50 किमी और बाड़ी शहर से लगभग 15 किमी दूर 26°37'36" उत्तरी अक्षांश और 77°26'52" पूर्वी देशांतर पर स्थित है। पार्वती परियोजना का जलग्रहण क्षेत्र और सकल सिंचित क्षेत्र क्रमशः लगभग 780 वर्ग किमी और 325 वर्ग किमी है। परियोजना की जलग्रहण क्षमता 102. 893 एमसीएम है।

माताटीला बाँधः माताटीला बांध का निर्माण वर्ष 1956 में यमुना नदी की सहायक नदी बेतवा पर किया गया था। यह बांध 25° 6' 15'' उत्तरी अक्षांश और 78° 23' 00'' पूर्वी देशांतर पर उत्तर प्रदेश के माताटीला जिले की ललितपुर तहसील में झांसी से लगभग 56 किमी दूर स्थित है। माताटीला बांध 6.6 किमी लंबा एक मिट्टी का बांध है जिसमें ओगी आकार का चिनाई वाला स्पिलवे है। बांध की ऊंचाई 24.40 मीटर है। इसमें 23 ऊर्ध्वाधर लिफ्टिंग गेट और 4 स्लुइस हैं। बांध की उपयोगी संचयन क्षमता 1,019.40 एमसीएम और मृत संचयन क्षमता 113.30 एमसीएम है। पूर्ण जलाशय स्तर (FRL) 308.46 मीटर पर जलाशय की कुल क्षमता 1,132.70 एमसीएम है और इसका जल विस्तार क्षेत्र 142.43 वर्ग मीटर है। यह एक बहुउद्देशीय बांध है जो सिंचाई, जल आपूर्ति और मछली पालन के लिए सुविधाएं प्रदान करता है।

रामसागर बाँधः रामसागर बांध राजस्थान के धौलपुर जिले के बाड़ी तहसील में रामसागर नदी (जो चंबल नदी की सहायक नदी है) की एक सहायक नदी बामनी पर स्थित है। रामसागर परियोजना का जलग्रहण क्षेत्र लगभग 176 वर्ग किमी है। वर्ष 1905 के दौरान किए गए जल सर्वेक्षण के अनुसार, परियोजना की सकल और उपयोगी भंडारण क्षमता क्रमशः 30.83 और 29.39 एमसीएम है।

यमुना नहर तंत्र

यमुना नदी ताजेवाला के पास की हिमालय पर्वत श्रृंखलाओं से उद्गमित होकर मैदानी क्षेत्रों में प्रवेश करती है। ताजेवाला पर स्थित बैराज से यमुना नदी के जल को सिंचाई के लिए पश्चिमी और पूर्वी यमुना नहरों में मार्गाभिगमित किया जाता है। यमुना 280 किलोमीटर अनुप्रवाह में दिल्ली के पास ओखला तक

प्रवाहित होती है, जहाँ से इसके जल को आगरा नहर में स्थानांतरित किया जाता है। यमुना नदी की सहायक नदियों पर निर्मित अन्य नहरों में बेतवा नहर, केन नहर एवं धसान नहर प्रमुख हैं। यमुना नदी की प्रमुख नहरों का संक्षिप्त वर्णन निम्न खण्डों में दिया गया है।

पूर्वी यमुना नहरः यह नहर उत्तर प्रदेश की प्रमुख नहर है जो उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले की बेहट तहसील के परगना फैजाबाद गांव में स्थित हथिनीकुण्ड बैराज के बायें तट से निकाली गयी है। हथिनीकुण्ड बैराज यमुना नदी पर बना है। यह बैराज चार राज्यों हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, एवं उत्तर प्रदेश की सीमा पर स्थित है। इस नहर की अपनी शाखाओं सहित कुल लम्बाई 1,440 किलोमीटर है। इस नहर की क्षमता 84.95 क्यूमेक है। यह नहर सहारनपुर, शामली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, बागपत, आदि जिलों की लगभग 16 लाख वर्ग किमी भूमि सिंचित करते हुए अंततः दिल्ली में यमुना नदी में समाहित हो जाती है। इस नहर पर बाबैल बुजुर्ग व बेलका माफी नाम के गांवों में दो लघु बिजलीघर बने हैं।

पश्चिमी यमुना नहरः पश्चिमी यमुना नहर हरियाणा में यमुना नदी पर स्थित ताजेवाला (हथिनीकुण्ड बैराज) के पश्चिमी तट से उद्गमित होने वाली एक प्रमुख नहर है। इस नहर की अपनी शाखाओं सहित कुल लम्बाई 3,226 किलोमीटर है। इसके द्वारा अंबाला, करनाल, सोनीपत, रोहतक, हिसार और सिरसा जिलों तथा दिल्ली और राजस्थान के कुछ भागों की लगभग 5 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई की जाती है।

आगरा नहरः हरियाणा के जनपद फरीदाबाद एवं गुड़गॉव, उ.प्र. के मथुरा एवं आगरा जनपदों तथा राजस्थान के भरतपुर जिले में सिंचाई प्रदान करने हेतु यमुना नदी पर ओखला (दिल्ली) के पास एक वियर का निर्माण कर इसके दाहिने तट से आगरा नहर प्रणाली का निर्माण वर्ष 1874 में किया गया था। आगरा नहर से अधिकतम निस्सरण 30.8 घन मीटर प्रति सेकेंड प्राप्त होता है। गंगा-यमुना जल विभाजक के कुछ भागों को सिंचित करने के पश्चात यह नहर अंततः आगरा में पुनः यमुना नदी में समाहित हो जाती है।

दिल्ली में यमुना की बाढ़ का एक दृश्य

यमुना नदी में जल प्रदूषण

जनसंख्या वृद्धि और तीव्र औद्योगीकरण के कारण, वर्तमान में यमुना नदी विश्व की सर्वाधिक प्रदूषित नदियों में से एक बन गई है। जिसका मुख्य कारण भारत की राजधानी नई दिल्ली में उत्पन्न कचरे का लगभग 58% यमुना नदी में डाला जाना है जिसके कारण यह नदी विशेष रूप से दिल्ली के अनुप्रवाह क्षेत्र में अत्यधिक प्रदूषित है। वर्ष 2016 के एक अध्ययन से पता चलता है कि दिल्ली के राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (NCT) से गुज़रने के दौरान यमुना नदी का सबसे अधिक प्रदूषण वज़ीराबाद से होता है, जहाँ से यमुना दिल्ली में प्रवेश करती है। वजीराबाद बैराज से न्यू ओखला बैराज खंड, (दिल्ली में यमुना का 22 किलोमीटर भाग जो यमुना की कुल लंबाई का 2% से भी कम है), में इस भाग से नदी में कुल प्रदूषण का लगभग 80% भाग प्राप्त होता है। दिल्ली में स्थापित 35 सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट में से 22 दिल्ली प्रदूषण नियंत्रण समिति द्वारा निर्धारित अपशिष्ट जल मानकों को पूरा नहीं करते हैं, इस प्रकार अनुपचारित अपशिष्ट जल और अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों से निकलने वाले जल की खराब गुणवत्ता यमुना नदी में प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं। वर्ष 2019 के आंकड़ों के अनुसार, नदी में प्रतिदिन 800 मिलियन लीटर अनुपचारित सीवेज और 44 मिलियन लीटर औद्योगिक अपशिष्ट प्राप्त होते हैं, जिनमें से नदी में छोड़े गए सीवेज का केवल 35 प्रतिशत ही उपचारित माना जाता है।

यमुना जल विवाद

जैसा कि उपरोक्त खण्डों में वर्णित किया गया है, यमुना के जल का उपयोग पांच राज्यों हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान एवं दिल्ली द्वारा किया जाता है। यद्यपि यमुना जल के बंटवारे के लिए 12 मई 1994 को पांचों राज्यों के बीच जल बंटवारे के लिए एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए थे। परन्तु इन राज्यों के मध्य विशेष रूप से दिल्ली के साथ जल विवाद बना रहता है। इसका प्रमुख कारण यमुना नदी पर कोई प्रमुख जल संचयन परियोजना का न होना है जिसके परिणामस्वरूप जहां एक ओर मानसून ऋतु में यमुना से प्राप्त अतिरिक्त जल के कारण दिल्ली और अनुप्रवाह के क्षेत्रों के जन मानस को भयंकर बाढ़ का सामना करना पड़ता है वहीं दूसरी ओर शुष्क मौसम में इन राज्यों के निवासियों, विशेषतः दिल्लीवासियों को जल की कमी का सामना करना पड़ता है। जिसके कारण इसके उपयोगकर्ता राज्यों के मध्य जल विवाद उत्पन्न होता है। अतः इस समस्या का अपेक्षित समाधान किया जाना आवश्यक है।

सपंर्क करें:
विभा अग्रवाल एवं
पुष्पेन्द्र कुमार अग्रवाल
रुड़की।

संजय गोस्वामी

जल की गुणवत्ता अति आवश्यक

भारतीय मानक ब्यूरो (Bureau of Indian Standards-BIS) द्वारा जल की गुणवत्ता पर प्रकाशित रिपोर्ट में यह बताया गया है कि स्वच्छ जल सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिये अति आवश्यक है तथा बेहतर पारिस्थितिकी के निर्माण में इसकी भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता। रिपोर्ट में दर्शाए गए आँकड़ों ने एक बार पुनः जल के गुणवत्ता सम्बंधी प्रश्न को चर्चा के केंद्र में ला दिया है।

अधिकांश सभ्यताओं का उदय नदियों के तट पर हुआ है जो इस बात को इंगित करता है कि जल, जीवन की सभी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए अनिवार्य ही नहीं, बल्कि महत्वपूर्ण संसाधन भी है। विगत कई दशकों में तीव्र नगरीकरण, आबादी में निरंतर वृद्धि, पेयजल आपूर्ति तथा सिंचाई हेतु जल की मांग में वृद्धि के साथ ही औद्यागिक गतिविधियों के विस्तार ने जल-संसाधनों पर दबाव बढ़ा दिया है। एक ओर जल की बढ़ती मांग की आपूर्ति हेतु सतही एवं भूमिगत जल के अनियंत्रित दोहन के कारण भूजल स्तर में गिरावट होती जा रही है तो दूसरी ओर प्रदूषकों की बढ़ती मात्रा से जल की गुणवत्ता एवं उपयोगिता में कमी आती जा रही है। अनियमित वर्षा, सूखा एवं बाढ़ जैसी आपदाओं ने भूमिगत जल पुनर्भरण को अत्यधिक प्रभावित किया है।

आज विकास की अंधी दौड़ में औद्योगिक गतिविधियों के विस्तार एवं तीव्र नगरीकरण ने देश की प्रमुख नदियों विशेष रूप से गंगा, यमुना, गोदावरी, कावेरी, नर्मदा एवं कृष्णा को प्रदूषित कर दिया है। जल की गुणवत्ता में गिरावट का एक प्रमुख कारण बढ़ता जल प्रदूषण भी है।

नवंबर 2022 में भारतीय मानक ब्यूरो (Bureau of Indian Standards -BIS) द्वारा जल की गुणवत्ता पर प्रकाशित रिपोर्ट में यह बताया गया है कि स्वच्छ जल सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिये अति आवश्यक है तथा बेहतर पारिस्थितिकी के निर्माण में इसकी भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता। रिपोर्ट में दर्शाए गए आँकड़ों ने एक बार पुनः जल के गुणवत्ता सम्बंधी प्रश्न को चर्चा के केंद्र में ला दिया है।

नगरों, खेतों और उद्योगों के अपशिष्ट पदार्थ बहकर नदियों में जा मिलते हैं। खनन के दौरान निकला मलबा जल स्त्रोतों में डाल दिया जाता है। चूँकि जल एक अच्छा विलायक है और आसानी से हर पदार्थ इसमें घुल जाते हैं इसलिए यह बहुत आसानी से प्रदूषित हो जाता है। खेतों में डाले गये उर्वरक और कीटनाशक पदार्थ रिसकर भूगर्भीय जल को प्रदूषित कर देते हैं। इन सभी प्रदूषकों को अकार्बनिक पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ और सूक्ष्म जीवों में वर्गीकृत किया जा सकता है। अकार्बनिक पदार्थों में भारी धातुएँ (Cd, Hg, Pb, As) , हैलाइड, ऑक्सी ऋणायन व धनायन और रेडियो एक्टिव पदार्थ शामिल हैं। ये अकार्बनिक पदार्थ जैव अपघटनीय नहीं होने के कारण लम्बे समय तक जल में बने रहते हैं। भारी धातुएं और उनके लवण (आर्सेनिक, नाइट्रेट, फ्लोराइड) स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक और कैंसरकारी हैं। कार्बनिक प्रदूषकों में औषधियाँ, माइक्रो-प्लास्टिक, पृष्ठ

सक्रियक (Surfactant), व पॉली फ्लोरोएल्किस पदार्थ, व्यक्तिगत देखभाल के लिए काम में लिए जाने वाले मुख्य पदार्थ और कीटनाशक हैं। इनमें कीटनाशकों की सर्वाधिक मात्रा भारत के विभिन्न भागों से प्राप्त भूमिगत जल में पायी गयी है। जल प्रदूषक सूक्ष्म जीवों में वायरस (अधिकांश नॉन-एनवेलप्ड), जीवाणुओं (ई. कोली, सालमोनेला, कैम्पाइलोबैक्टर आदि अनेक प्रजातियाँ) और प्रोटोजोआ की विभिन्न जातियाँ पायी गयी हैं। ये रोगाणु मुख्य रूप से मनुष्य में आन्त्रिय और श्वसनीय रोग उत्पन्न करते हैं। कई बार ये सभी प्रदूषक (अकार्बनिक, कार्बनिक, सजीव और मृत पदार्थ) परस्पर मिलकर जल की सतह पर या पानी के पाइपों में एक बायो-फिल्म का निर्माण करते हैं। पेय जल में कई बार पाई जाने वाली यह बायो-फिल्म मानव स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर खतरा है। यह समस्या पाइपों के भीतर कोलीफॉर्म जीवाणुओं की वृद्धि के कारण उत्पन्न होती है। जल प्रदूषण पर निगरानी रखने की पारंपरिक तकनीकें प्रयोगशालाओं और प्रशिक्षित स्टाफ पर निर्भर हैं। ये तकनीकें महंगी और श्रम साध्य तो हैं ही, साथ ही इनमें मानवीय त्रुटि की भी संभावना रहती है। वर्तमान में शोध संस्थानों द्वारा स्वचालित जिओटेग्ड (विभिन्न मीडिया से जुड़ी हुई भौगोलिक जानकारी) और रियल टाइम गतिशील संवेदकों द्वारा नदियों में पिन प्वॉइंट प्रदूषण पर निगरानी की जा रही है। इन उच्च रिजोल्यूशन आंकड़ों का मशीन लर्निंग द्वारा विश्लेषण कर जल की गुणवत्ता का आंकलन किया जा सकता है। वर्तमान में भारत में गंगा, यमुना जैसी नदियों के जल की गुणवत्ता को जांचने के लिए इस विधि का उपयोग किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त स्थानीय तापमान, वर्षा, आस-पास स्थित उद्योग और कृषि भूमि की जानकारी जल की गुणवत्ता को जांचने में सहायक होती है।

आज से 20-25 वर्ष पूर्व सामान्य फिल्ट्रेशन और क्लोरीनीकरण विधियों द्वारा जल शोधन किया जाता था। समय के साथ जल शोधन की नवीन तकनीकों की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। जल शोधन की प्राचीन तकनीकों के प्रचलन से बाहर होने के तीन प्रमुख कारणों में पहला जल में नवीन और दुर्लभ प्रदूषकों की खोज, दूसरा, जल की शुद्धता व गुणवत्ता के नवीन मानदंड और तीसरा उसकी लागत प्रमुख हैं। जल शोधन की नवीन तकनीकों को बेहतर सिद्ध करने के लिए उनमें पारंपरिक तकनीकों की तुलना में कुछ विशेषताएं जैसे उनके संचालन और रख-रखाव की कम लागत और उच्च कुशलता आदि होनी चाहिये, जब हम किसी नवीन तकनीक को वृहत स्तर पर उपयोग में लेने की बात सोचते हैं तो वहाँ लागत बहुत महत्वपूर्ण होती है। प्रयोगशाला में बेहतर प्रदर्शन करने वाली तकनीकें कई बार अधिक लागत के कारण व्यावहारिक रूप से असफल हो जाती हैं। नीचे वर्णित जल शोधन की कुछ तकनीकें उनके विकास से लेकर अब तक निरंतर परिष्कृत हुई हैं। वर्तमान में कीटाणु-विज्ञान, जैव रसायन और नैनो प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे अनुसंधानों ने जल शोधन के क्षेत्र में भी अपना योगदान दिया है।

जल-शोधन के लिए काम में ली जाने वाली मेम्ब्रेन एक प्रकार की महीन छिद्रित या पारगम्य झिल्लियाँ होती हैं जिसमें दाब के साथ जल प्रवाहित करने पर अशुद्धियाँ और सूक्ष्म जीव पृथक हो जाते हैं। इस विधि में किसी प्रकार के रसायनों की आवश्यकता नहीं होती। यह विधि पेय जल को शुद्ध करने और वृहत्त स्तर पर अनुपयोगी जल के उपचार दोनों ही कार्यों के लिए उपयोग में लाई जा रही है। समय के साथ इनकी निर्माण विधि में काफी परिवर्तन आया है और लागत भी कम हुई है।

विभिन्न क्षेत्रों द्वारा प्रदूषण

मेम्ब्रेन फिल्ट्रेशन तकनीक

दाब आधारित मेम्ब्रेन फिल्ट्रेशन

जल-शोधन के लिए काम में ली जाने वाली मेम्ब्रेन एक प्रकार की महीन छिद्रित या पारगम्य झिल्लियाँ होती हैं जिसमें दाब के साथ जल प्रवाहित करने पर अशुद्धियाँ और सूक्ष्म जीव पृथक हो जाते हैं। इस विधि में किसी प्रकार के रसायनों की आवश्यकता नहीं होती। यह विधि पेय जल को शुद्ध करने और वृहत्त स्तर पर अनुपयोगी जल के उपचार दोनों ही कार्यों के लिए उपयोग में लाई जा रही है। समय के साथ इनकी निर्माण विधि में काफी परिवर्तन आया है और लागत भी कम हुई है।

इस तकनीक को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है-निम्न दाब मेम्ब्रेन सिस्टम और उच्च दाब मेम्ब्रेन सिस्टम। ''निम्न दाब मेम्ब्रेन सिस्टम'' (माइक्रोफिल्ट्रेशन और अल्ट्राफिल्ट्रेशन) में 10-30 चेप (पौंड प्रति वर्ग इंच) दाब प्रयुक्त किया जाता है वहीं उच्च दाब मेम्ब्रेन सिस्टम' (नैनोफिल्ट्रेशन और विपरीत परासरण (RO) में 75 से 250 चेप दाब प्रयुक्त किया जाता है।

निम्न दाब मेम्ब्रेन सिस्टम

MF मेम्ब्रेन में छिद्रों का आकार 0.1 माइक्रोन और UF मेम्ब्रेन में छिद्रों का आकार 0.01 माइक्रोन कणीय अशुद्धियों (गंदलापन) और सूक्ष्म जीवों को पृथक करने में सक्षम है। ये झिल्लियाँ जीवाणुओं, सूक्ष्म शैवाल, गिअर्डिया सिस्ट और क्रिप्टोस्पोरीडियम ऊसिस्ट (परजीवी प्रोटोजोआ) के लिए बेहतरीन अवरोधक हैं। UF मेम्ब्रेन कुछ वायरसों को भी पृथक कर सकती है लेकिन ये झिल्लियाँ जल में विलेय कार्बनिक अशुद्धियों को पृथक करने में सक्षम नहीं हैं जो कि जल के रंग, गंध और स्वाद को प्रभावित करते हैं। जल की एक समान गुणवत्ता बनाये रखने में ये झिल्लियाँ प्रभावी हैं किन्तु कुछ समय बाद इनके अवरुद्ध होने की समस्या रहती है।

उच्च दाब मेम्ब्रेन सिस्टम

इसमें नैनोफिल्ट्रेशन और RO आते हैं। नैनोफिल्ट्रेशन में छिद्रों का आकार 0.001 माइक्रोन होता है। यह सिस्टम सभी जीवाणुओं, रोगजनक प्रोटोजोआ, वायरसों और जैव पदार्थों को पृथक करने में सक्षम है। यह जल की क्षारीयता और कठोरता को भी दूर कर सकता है। RO सिस्टम सभी अशुद्धियों

झिल्ली निस्पंदन तकनीक

और सूक्ष्मजीवों सहित जल में घुले हुए अकार्बनिक तत्वों और आयनों को भी अलग कर सकता है। इस सिस्टम की लागत ज्यादा है। झिल्लियों के अवरोधन की समस्या इसमें भी आती है। इस पद्धति में बहुत अधिक मात्रा में अनुपयोगी जल उत्पन्न होता है।

माइक्रो और अल्ट्राफिल्ट्रेशन झिल्लियाँ सामान्यतः सिंथेटिक कार्बनिक पॉलीमर्स की बनी होती हैं जैसे पॉलीसल्फोन और सेल्यूलोस एसीटेट। इनके निर्माण के लिए सेरेमिक पदार्थ और स्टील जैसे अकार्बनिक पदार्थ भी उपयोग में लाए जा सकते हैं। हालाँकि सेरेमिक झिल्लियाँ ताप सह्य और अक्रिय होती हैं लेकिन उच्च लागत और नाजुक होने की वजह से अधिक प्रचलन में नहीं हैं। इनमें नैनो स्तर पर कार्यशील झिल्लियाँ सबसे नवीनतम हैं। ये सिल्वर नैनो कणयुक्त पॉलीमर पदार्थों से निर्मित होती हैं। इनकी खासियत यह है कि जैव अवरोध द्वारा इनके छिद्रों के बंद होने की समस्या नहीं रहती।

जल शोधन संयंत्रों में 4 प्रमुख प्रकार के मोड्यूल होते हैं-प्लेट और फ्रेम, ट्यूबुलर, स्पाइरल वाउंड और होलो फाइबर। इनमें सबसे सरल प्रकार के मॉड्यूल प्लेट और फ्रेम हैं, जिसमें दो अंतरालकों (फीड और प्रोडक्ट अंतरालक) के मध्य फिल्ट्रेशन मेम्ब्रेन होती है। वर्तमान में यह मोड्यूल उपयोग में नहीं है।

ट्यूबुलर मोड्यूल में मेम्ब्रेन (अर्ध पारगम्य झिल्ली) एक छिद्रित स्टील या फाइबर ग्लास ट्यूब के भीतर आस्तरित होती है जिसके भीतर दाब से जल को प्रवाहित किया जाता है। शुद्ध जल छन कर ट्यूब के छिद्रों से बाहर आ जाता है। वर्तमान में सबसे लोकप्रिय नैनो फिल्ट्रेशन और RO में स्पाइरल वाउंड मोड्यूल प्रयोग में लिया जाता है। इसमें केन्द्रीय छिद्रित ट्यूब के चारों ओर फिल्ट्रेशन मेम्ब्रेन की कई परतें और अपारगम्य अंतरालक उच्च दाब पर पैक्ड होते हैं। लिपटी हुई झिल्लियों पर जल प्रवाहित किया जाता है। शुद्ध जल झिल्लियों से रिसकर ट्यूब में एकत्रित हो जाता है।

होलो फाइबर मोड्यूल समुद्री जल के अलवणीकरण के लिए उपयोग में लिए जाते हैं। वृहत्त स्तर पर अनुपयोगी जल के शोधन और मेम्ब्रेन बायोरिएक्टर्स में भी इनका उपयोग किया जाता है।

फॉरवर्ड ओसमोसिस (FO)

यह सामान्य परासरण की प्रक्रिया है। फीड वाटर FS (अपशिष्ट जल) और एक अधिक सांद्रता के घोल (DS) को अर्धपारगम्य झिल्ली से पृथक कर परासरण द्वारा जल के अणुओं को अलग किया जाता है। DS सामान्यतः नमक या मैग्नीशियम क्लोराइड का सान्द्र घोल होता है। बाद में किसी अन्य विधि द्वारा इस घोल (ड्रा सोल्यूशन DS) से जल की पुनः प्राप्ति की जाती है। यह DS की प्रकृति पर निर्भर करता है कि जल कैसे पृथक किया जाए। इस विधि में ऊर्जा की खपत कम होती है। इस विधि द्वारा नगरीय अपशिष्ट जल से 70% तक शुद्ध जल प्राप्त किया जा सकता है।

इलेक्ट्रो-डायलिसिस (ED) और इलेक्ट्रो-डायलिसिस रिवर्सल (EDR)

इन दोनों विधियों में विद्युत धारा और आयन पारगम्य झिल्लियों का उपयोग किया जाता है। एक तनु विलयन से सान्द्र विलयन में विद्युत विभव की सहायता से 'आयन पारगम्य झिल्लियों' द्वारा आयनों को स्थानांतरित किया जाता है। दो तरह की आयन पारगम्य झिल्लियाँ प्रयोग में ली जाती हैं-धनायन पारगम्य और ऋणायन पारगम्य। संयंत्र में एक तरफ से तनु विलयन (फीड सोल्यूशन) प्रवाहित किया जाता है। धनायन कैथोड और ऋणायन एनोड की ओर गति करते हैं। ऋणावेशित 'धनायन एक्सचेंज झिल्लियाँ' (CEM), धनावेश को आकर्षित करती हैं और धनावेशित 'ऋणायन एक्सचेंज झिल्लियाँ' (EM) ऋणावेश को आकर्षित करती हैं। इस प्रकार आयन झिल्लियों से गति करते हुए सांद्रित विलयन में पहुँचते रहते हैं। EDR प्रक्रिया में इलेक्ट्रोड क्रमिक रूप से एक्सचेंज होते हैं इसलिए इस विधि में झिल्लियाँ अवरुद्ध नहीं होतीं। इन दोनों ही विधियों द्वारा आयनिक अशुद्धियों को अनुपयोगी जल से दूर किया जाता है।

रिवर्स ओस्मोसिस प्रौद्योगिकी (आरओ) आधारित वाटर प्यूरीफिकेशन पेयजल में टीडीएस स्तर कम करने की सर्वाधिक मान्य विधि है। फिर भी इस प्रौद्योगिकी के अपने फायदे और नुकसान हैं जिन पर RO वाटर प्यूरीफायर खरीदने से पहले विचार कर लेना चाहिए।

यह सत्य होते हुए भी कैसी विडम्बना है कि पृथ्वी की 70 प्रतिशत सतह जल से ढकी हुई है और फिर भी इस जल को बिना शुद्ध किये पिया नहीं जा सकता। पृथ्वी में उपलब्ध जल का 1% से भी कम जल पेयजल के रूप में प्रयुक्त होता है और वह भी लगातार प्रदूषित होता जा रहा है। देश के कई भागों में शुद्ध जल प्राकृतिक रूप से प्राप्त होना अब बीती बात हो गई है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार 80 प्रतिशत बीमारियाँ जलजनित होती हैं। आपके नल से प्राप्त होने वाला जल भौतिक रासायनिक और जैविक अशुद्धियों से प्रदूषित हो सकता है और उच्च पूर्ण घुलनशील ठोस TDS स्तर का हो सकता है।

विपरीत परासरण

सपंर्क करें:
संजय गोस्वामी
यमुना जी-13, अणुशक्तिनगर,
मुम्बई

डॉ. दीपक कोहली

जल का अधिकार क्यों आवश्यक है ?

जल के अधिकार का तात्पर्य जल पर अधिकार नहीं है। जल का अधिकार प्राथमिक मानवीय आवश्यकताओं के लिए आवश्यक जल की मात्रा पर केन्द्रित है, जबकि जल पर अधिकार किसी विशेष प्रयोजन के लिए जल के उपयोग अथवा जल की उपलब्धता से सम्बन्धित होता है। जल पर अधिकारों से सम्बन्धित कानून में जल का इस्तेमाल कौन और किन हालात में कर सकता है, जैसे विषय समाहित होते हैं, और यहाँ तक कि यह कानून विशिष्ट परिस्थितियों में विशिष्ट प्रयोजनों के लिए पूर्व निर्धारित जल की मात्रा का आबंटन भी कर सकता है। जल का मानवाधिकार प्राथमिक मानवीय आवश्यकताओं के लिए जल की आवश्यक मात्रा पर केन्द्रित है, जो कि लगभग 50 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन है।

प्रस्तावना

जल एक प्राकृतिक और आर्थिक संसाधन है, जो अद्वितीय और अपूरणीय है। यह हमारे ग्रह पर असमान रूप से वितरित है, जो इसकी प्रतिस्पर्धात्मक और परस्पर विरोधी प्रकृति को रेखांकित करता है। बढ़ती हुई जनसंख्या पर इस दुर्लभ संसाधन के असमान वितरण के प्रभाव का भारत एक उपयुक्त उदाहरण है। विश्व की कुल आबादी में भारत की भागीदारी 18 प्रतिशत है। लेकिन इस आबादी के लिये जल की मूलभूत आवश्यकता की पूर्ति के लिये भारत के पास विश्व में उपलब्ध स्वच्छ जल संसाधनों का केवल 4 प्रतिशत हिस्सा मौजूद है, जो जल वितरण और पहुँच की चुनौती को दर्शाता है। भारत सरकार ने अपने जल जीवन मिशन (ग्रामीण एवं शहरी) के माध्यम से 'जल के अधिकार' को मान्यता प्रदान की है और पूर्णतः कार्यात्मक नल से जल कनेक्शन द्वारा जल का एकसमान वितरण प्रदान करने का लक्ष्य रखा है, परन्तु जल निकायों का कुप्रबंधन, संदूषण और भूजल का अत्यधिक उपयोग जल प्रबंधन से संबंधित प्रमुख चुनौतियों के साथ-साथ 'जल के अधिकार' के दुरुपयोग को प्रदर्शित करता है और स्थायी जल प्रबंधन की ओर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता को प्रकट करता है।

अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता

जल के अधिकार को अनेक बाध्यकारी अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों में स्वीकार किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार प्रसंविदा (इण्टरनेशनल कॅवनेण्ट ऑन सिविल एण्ड पॉलिटिकल राइट्स, 1966) में सम्मिलित जीवन के अधिकार जैसे अन्य मानवाधिकारों के अभिन्न अंग के रूप में इसे मान्यता प्रदान की गई है। अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार प्रसंविदा (इण्टरनेशनल कॅवनेंट ऑन इकोनॉमिक सोशल एण्ड कल्चरल राइट्स, 1966) में शामिल स्वास्थ्य, भोजन, आवास और उपयुक्त जीवन स्तर के अधिकारों में भी जल के अधिकार को स्वीकार किया गया है। ये अधिकार अनेक अन्य अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय सन्धियों में भी दिए गए हैं। इन सन्धियों का उन सभी देशों द्वारा पालन किया जाना आवश्यक है जिन्होंने उन पर हस्ताक्षर किए हैं। इन मुख्य अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार सन्धियों में ''महिलाओं के प्रति व्याप्त भेदभाव के उन्मूलन पर सम्मेलन (कंवेंशन ऑन द एलिमिनेशन ऑफ डिस्क्रिमिनेशन अगेंस्ट वीमेन, 1979)'' और ''बाल अधिकारों पर सम्मेलन (द कंवेंशन ऑन द राइट्स ऑफ द चाइल्ड, 1989)'' तथा विश्व जल परिषद, (2006) मुख्य सन्धियाँ हैं।

जल का अधिकार

जल के अधिकार का तात्पर्य जल पर अधिकार नहीं है। जल का अधिकार प्राथमिक मानवीय आवश्यकताओं के लिए आवश्यक जल की मात्रा पर केन्द्रित है, जबकि जल पर अधिकार किसी विशेष प्रयोजन के लिए जल के उपयोग अथवा जल की उपलब्धता से सम्बन्धित होता है। जल पर अधिकारों से सम्बन्धित कानून में जल का इस्तेमाल कौन और किन हालात में कर सकता है, जैसे विषय समाहित होते हैं, और यहाँ तक कि यह कानून विशिष्ट परिस्थितियों में विशिष्ट प्रयोजनों के लिए पूर्व निर्धारित जल की मात्रा का आबंटन भी कर सकता है। जल का मानवाधिकार प्राथमिक मानवीय आवश्यकताओं के लिए जल की आवश्यक मात्रा पर केन्द्रित है, जो कि लगभग 50 लीटर प्रति

जल जीवन मिशन के अन्तर्गत अमृत सरोवर का निर्माण

व्यक्ति प्रतिदिन है। पेयजल का अधिकार पर्यावरण संरक्षण अथवा संसाधनों के एकीकृत प्रबन्धन से जुड़े आम मुद्दों की ओर ध्यान नहीं देता। अधिकांश मामलों में, जल के मानवाधिकार के क्रियान्वयन के लिए जल लेने से, जल पर आम जनमानस के अधिकारों के तहत अन्य उपयोगों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। (विश्व जल परिषद्, 2006 द्वारा जारी 'जनरल कमेण्ट सं. 15')। जल का मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति को उसके निजी और घरेलू उपयोग हेतु पर्याप्त, सुरक्षित, स्वीकार्य, भौतिक रूप से और कम मूल्य पर उपलब्ध जल का अधिकार प्रदान करता है। डिहाइड्रेशन से होने वाली मृत्यु को रोकने, जलजनित रोगों के खतरे को कम करने और उपभोग, खाना पकाने, निजी और घरेलू स्वच्छता की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए सुरक्षित जल की उपयुक्त मात्रा प्रदान करना आवश्यक है।

मानव अधिकार के रूप में जल का अधिकार

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने स्पष्ट रूप से जल और स्वच्छता के मानवाधिकार को मान्यता प्रदान की है और स्वीकार किया है कि मानवाधिकारों की पुष्टि के लिये स्वच्छ पेयजल और स्वच्छता आवश्यक है।

जीवन के अधिकार की परिधि के तहत भारत में जल के अधिकार को संविधान में मूल अधिकार के रूप में प्रतिष्ठापित नहीं किया गया है। यद्यपि संघ के साथ-साथ राज्य स्तरों के न्यायालयों ने सुरक्षित एवं आधारभूत जल के साथ ही स्वच्छता के अधिकार की व्याख्या की है जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 (जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार) में निहित है।

सतत विकास लक्ष्य

एसडीजी 6 सभी के लिये जल और स्वच्छता की उपलब्धता एवं संवहनीय प्रबंधन सुनिश्चित करने का आह्वान करता है, जो वैश्विक राजनीतिक एजेंडे में जल और स्वच्छता के महत्त्व की पुष्टि करता है।

जल के मानवाधिकार के घटक

जनरल कमेण्ट सं. 15 में जल के मानवाधिकार की जो व्याख्या की गई है, उसमें निम्नलिखित घटक शामिल हैं:

जल मानव अस्तित्व के लिए मौलिक आवश्यकता है और समुचित जीवन स्तर के लिए अपरिहार्य है। जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार यह मात्रा लगभग 50 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन है। जिसमें न्यूनतम 20 लीटर प्रतिदिन प्रति व्यक्ति तो नितान्त आवश्यक है।

जल उपभोग के लिए समुचित होना आवश्यक है। इसका अर्थ है कि हर कार्य के लिए जल की गुणवत्ता उपयुक्त होनी चाहिए। पेयजल रंग, गन्ध, स्वाद के हिसाब से स्वीकार्य होना आवश्यक है। उपभोग के लिए सुरक्षा के सर्वोच्च स्तर का पालन होना चाहिए। यह आवश्यक है कि जल प्राप्त करना सभी लोगों की क्षमता में होना चाहिए और आवश्यक वस्तुओं के क्रय में किसी व्यक्ति की सामर्थ्य प्रभावित नहीं होनी चाहिए।

यह आवश्यक है कि जल लोगों की सहज पहुँच में हो तथा घर के अन्दर या फिर घर के आसपास ही उपलब्ध हो। जल के मानवाधिकार में स्वच्छता या अधिकार भी निहित है। जनरल कमेण्ट सं. 15 इस बारे में आगे कहता है कि राज्य सरकारों का यह दायित्व है कि सुरक्षित जल विशेषकर ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर प्रदान किया जाए।

जल जीवन मिशन की वर्तमान स्थिति एवं उद्देश्य

जल जीवन मिशन (ग्रामीण): इसका उद्देश्य वर्ष 2024 तक ग्रामीण भारत के सभी घरों को व्यक्तिगत घरेलू नल कनेक्शन के माध्यम से सुरक्षित और पर्याप्त जल उपलब्ध कराना है।

जल जीवन मिशन (शहरी): यह जल जीवन मिशन (ग्रामीण) का पूरक है और इसे भारत के सभी 4,378 सांविधिक शहरों में कार्यात्मक नलों के माध्यम से जल की आपूर्ति का सार्वभौमिक कवरेज प्रदान करने के लिये अभिकल्पित किया गया है।

यह 500 अमृत शहरों में अन्य फोकस क्षेत्र के रूप में सीवेज प्रबंधन का कवरेज प्रदान करने का भी लक्ष्य रखता है।

प्रदर्शन: गोवा, तेलंगाना और हरियाणा ने सभी घरों में 100 प्रतिशत नल कनेक्टिविटी का लक्ष्य हासिल कर लिया है। पांडुचेरी, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, दादरा और नगर हवेली तथा दमन और दीव जैसे केंद्र शासित प्रदेशों ने भी अपने राज्यों के 100 प्रतिशत घरों में नल जल कनेक्शन प्रदान कर दिये हैं।

केंद्रीय जल शक्ति मंत्रालय की रिपोर्ट : सरकार के महत्त्वाकांक्षी जल जीवन मिशन के आंकलन के लिये केंद्रीय जल शक्ति मंत्रालय द्वारा किए गए सर्वेक्षण के अनुसार भारत में लगभग 62 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के पास अपने परिसर के भीतर पूरी तरह कार्यात्मक नल जल कनेक्शन द्वारा प्रति व्यक्ति प्रति दिन कम से कम 55 लीटर जल क्षमता उपलब्ध है। यद्यपि रिपोर्ट में क्लोरीन संदूषण की एक संबंधित समस्या का भी उल्लेख

जल मानव अस्तित्व के लिए मौलिक आवश्यकता है और समुचित जीवन स्तर के लिए अपरिहार्य है। जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार यह मात्रा लगभग 50 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन है। जिसमें न्यूनतम 20 लीटर प्रतिदिन तो नितान्त आवश्यक है।

जल उपभोग के लिए समुचित होना आवश्यक है। इसका अर्थ है कि हर कार्य के लिए जल की गुणवत्ता उपयुक्त होनी चाहिए। पेयजल रंग, गन्ध, स्वाद के हिसाब से स्वीकार्य होना आवश्यक है। उपभोग के लिए सुरक्षा के सर्वोच्च स्तर का पालन होना चाहिए। यह आवश्यक है कि जल प्राप्त करना सभी लोगों की क्षमता में होना चाहिए और आवश्यक वस्तुओं के क्रय में किसी व्यक्ति की सामर्थ्य प्रभावित नहीं होनी चाहिए।

किया गया है। हालाँकि जल के 93 प्रतिशत नमूने जीवाणु संबंधी संदूषण से कथित रूप से मुक्त थे तथापि अधिकांश आँगनवाड़ी केंद्रों और स्कूलों में अवशिष्ट क्लोरीन की मात्रा अनुमेय सीमा से अधिक पाई गई।

भारत में जल संसाधनों से संबंधित प्रमुख चुनौतियाँ

भूजल संसाधन का गिरता स्तरः तीव्र शहरीकरण से प्रेरित अनियंत्रित भूजल निकासी के कारण इस मूल्यवान संसाधन में गिरावट आई है। उत्तर-पश्चिमी भारत के अधिकांश भागों में अब भूजल जमीनी स्तर से 100 मीटर तक नीचे चला गया है। वर्तमान निकासी दर के जारी रहने पर भविष्य में भूजल स्तर 200-300 मीटर तक नीचे जा सकता है। जलभृतों से जल के निरन्तर कम होने के कारण वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि भूमि अचानक या धीरे-धीरे नीचे धंस सकती है जिसे भूमि अवतलन के रूप में जाना जाता है।

बढ़ता जल प्रदूषण

घरेलू, औद्योगिक और खनन अपशिष्ट की एक बड़ी मात्रा को जल निकायों में बहाया जाता है, जिससे जलजनित रोगों और कुपोषण का खतरा उत्पन्न हो सकता है। ये फूड वेब और विशेष रूप से जलीय पारिस्थितिक तंत्र को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकते हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारण जल प्रणाली में अनियमितताएँ

तापमान में उतार-चढ़ाव के कारण वर्षा पद्धति में परिवर्तन आ रहा है, समुद्री जल स्तर में वृद्धि हो रही है और तापमान में वृद्धि के साथ वाष्पीकरण की प्रक्रिया तीव्र हो रही है जिससे बादल अधिक भारी हो रहे हैं। बादलों के अधिक भार के कारण वायु उन्हें उड़ाने में असमर्थ हो जाती है, जिससे महासागरों के ऊपर ही अधिक वर्षा देखी जाती है और वर्षा-आश्रित क्षेत्रों में सूखे की स्थिति बनती है। कई स्थानों पर बादल फटने की घटनाओं से होने वाली अत्यधिक वर्षा के कारण बाढ़ या फ्लैश फ्लड की भी घटनाएं उत्पन्न होती है।

कुशल अपशिष्ट जल प्रबंधन का अभाव

भारत में जल संसाधनों की कम आपूर्ति के साथ ही अक्षम अपशिष्ट जल प्रबंधन, जल का इष्टतम आर्थिक उपयोग कर सकने की क्षमता को पंगु बना रहा है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा मार्च 2021 में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत की वर्तमान जल उपचार क्षमता 27.3 प्रतिशत और सीवेज उपचार क्षमता 18.6 प्रतिशत है। अधिकांश सीवेज उपचार संयंत्र अधिकतम क्षमता पर कार्य नहीं कर रहे हैं और वे निर्धारित मानकों के अनुरूप भी नहीं हैं।

जल के अधिकार और इसके साथ जुड़े दायित्वों के दृष्टिकोण से भारतीय सन्दर्भ में कार्यवाही के लिए कतिपय क्षेत्रों पर ध्यान दिया जा सकता है।

इस बात को स्वीकार किया जाना आवश्यक है कि जल और स्वच्छता कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे खैरात में बाँटा जाए। जल और स्वच्छता प्रत्येक नागरिक का मूल अधिकार है। अतः राज्य को उसे प्रदान करना चाहिए और उसकी सुरक्षा की जानी चाहिए।

सरकार द्वारा जनमानस को जल के अधिकार और उसके कारण सरकार पर आए दायित्वों के बारे में जागरूक बनाना होगा।

तीव्र शहरीकरण से प्रेरित अनियंत्रित भूजल निकासी के कारण इस मूल्यवान संसाधन में गिरावट आई है। उत्तर-पश्चिमी भारत के अधिकांश भागों में अब भूजल जमीनी स्तर से 100 मीटर तक नीचे चला गया है। वर्तमान निकासी दर के जारी रहने पर भविष्य में भूजल स्तर 200-300 मीटर तक नीचे जा सकता है। जलभृतों से जल के निरन्तर कम होने के कारण वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि भूमि अचानक या धीरे-धीरे नीचे धंस सकती है जिसे भूमि अवतलन के रूप में जाना जाता है।

भूजल का गिरता स्तर

यह सुनिश्चित करना महत्त्वपूर्ण है कि सभी वर्गों के निवासियों को जल और स्वच्छता की सुविधा मिले। वंचित समुदायों, प्रवासी बसाहटों से दूर रहने वाले समाज के वर्गों की पहचान कर और उनकी आवश्यकताओं पर ध्यान देने से समान वितरण का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। विभिन्न स्तरों पर परामर्शकारी मंचों का गठन किए जाने की आवश्यकता है ताकि जल के सम्भरण और संरक्षण के बारे में निर्णय लेने की प्रक्रिया में लोगों को शामिल किया जा सके। इस प्रक्रिया में भाग लेने के लिए लोगों को शक्ति और अधिकार प्रदान करने होंगे। परामर्शकारी प्रक्रियाओं से नागरिकों के जल अधिकार की सुरक्षा के लिए जनहित याचिकाओं का सहारा लेने की जरूरतों में कमी आएगी।

एक ऐसी व्यवस्था विकसित किए जाने की आवश्यकता है जहाँ सरकारी अधिकारियों और जल प्रदाय निकायों को जल और स्वच्छता की सुविधा सुनिश्चित करने के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सके। निर्णय लेने की प्रक्रिया के उपयुक्त स्तरों को परिभाषित कर इसे हासिल किया जा सकता है। जल के अधिकार सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं पर अमल करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त राजनीतिक प्राधिकारी को चिन्हित किए जाने से इस कार्य में सहायता मिलेगी। इसका अर्थ है कि संस्थागत प्रबन्ध, वितीय तन्त्र और संचालन के विकल्पों को स्पष्टतः और पारदर्शिता से परिभाषित किया जाएगा। जल की आपूर्ति और स्वच्छता के लिए, जल

बढ़ता जल प्रदूषण

वर्षा जल संरक्षण

संसाधनों की सुरक्षा और आर्थिक विकास हेतु इन संसाधनों के दुरुपयोग को रोककर सरकारी नीति में यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि 'जीवन के लिए जल' को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जा रही है। पीने और घरेलू उपयोग के लिए दिए जाने वाले जल की गुणवत्ता पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए।

आगे की राह

विकेंद्रीकृत जल-उपयोग जाँच : भारत में एक समर्पित जल उपयोग जाँच तंत्र की आवश्यकता है जो जागरूकता की कमी, अति प्रयोग और जल निकायों के प्रदूषण के कारण स्थानीय स्तर पर जल वितरण प्रणालियों में जल की क्षति की पहचान करे और इसका उन्मूलन करे।

स्थानीयकृत जल संसाधन प्रबंधन : जल जीवन मिशन की भूमिका को दोहरे दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिये, जहाँ जल संसाधनों की आपूर्ति प्रबंधन और संवहनीयता स्थिरता दोनों पर बल दिया जा सके, क्योंकि 'जल जीवन' शब्द स्वयं में जल के जीवन का भी प्रतीक है। मानव के स्वस्थ जीवन की कल्पना तभी की जा सकती है जब वह जल के स्वस्थ जीवन के साथ सामंजस्य स्थापित करे। इस प्रकार, शहरी स्तर पर प्रभावी जल विभाजक प्रबंधन योजनाओं को लागू करने की आवश्यकता है और सभी घरों में वर्षा जल संचयन को अनिवार्य किया जाना चाहिये।

जल जीवन मिशन के साथ महिला सशक्तिकरण का सम्मिश्रण करना : चूँकि जल की कमी महिलाओं के लिये असमान रूप से अहितकारी है, नल के जल की उपलब्धता और अभिगम्यता सुनिश्चित करने से ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं को अपने बच्चों को समय देने और विकास प्रक्रिया में भाग लेने में मदद मिल सकती है। इसके अलावा, यह मिशन महाराष्ट्र में प्रचलित 'जल पत्नी' की प्रथा को कम करने में सहायता कर सकता है। ग्राम जल एवं स्वच्छता समिति में 50 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करना इस दिशा में एक स्वागत योग्य कदम है।

जल संरक्षण क्षेत्र और जल धन अभियानः जल पुनर्भरण हेतु समय देने के लिये सर्वाधिक प्रभावित क्षेत्रों में भूजल संसाधनों के पुनर्भरण या आगे निकासी पर प्रतिबंध लगाने की आवश्यकता है। इसे शहरों में ऐसे जल संरक्षण क्षेत्र स्थापित कर प्राप्त किया जा सकता है जहाँ शून्य-दोहन की स्थिति निर्मित की जाए। नागरिकों को जल के कुशल उपयोग के बारे में सूचित करने के लिये जागरूकता अभियान भी चलाया जाना चाहिये, जिसके लिये 'नीर' नामक एक शुभंकर का उपयोग किया जा सकता है।

सपंर्क करें:
डॉ. दीपक कोहली
5/104, विपुल खंड, गोमती नगर
लखनऊ-226 010
उत्तर प्रदेश
मो. 9454410037

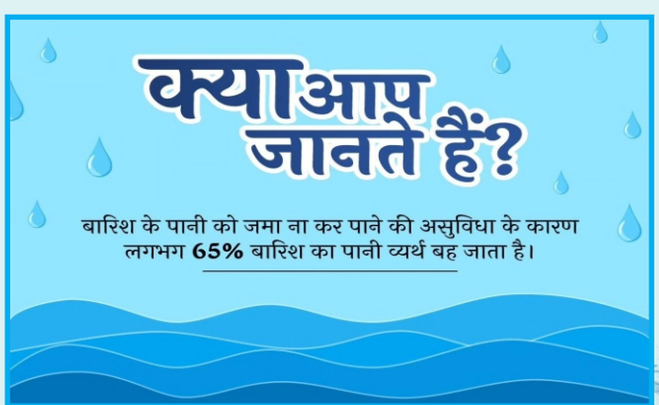

कौन सुने नदिया की पीर रे

डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण'

''कौन सुने नदिया की पीर रे''

सूखी बेहाल नदिया रो रही,
कौन सुने नदिया की पीर रे।

घर से चली थी जब वो,
अंग-संग था पानी।
इतराती चलती थी जैसे,
नार कोई मस्तानी।।

जुलुम किए लोगों ने रोज ही,
खींच लिया निर्बल का चीर रे।
कौन सुने नदिया की पीर रे।।

काट डाले पेड़ सारे,
जंगल उजाड़ दिए।
कंकरीट बोए सबने,
उपवन कबाड़ किए।।

बेगाने हो गए हैं सारे बादल,
अब कैसे बरसाएं कहीं नीर रे।
कौन सुने नदिया की पीर रे।।

चिड़ियां सब गान भूलीं,
हरियाली चली गई।
नाम ले कर विकास का,
धरती ये छली गई।।

हो गए हैं प्रेम गीत मौन सब,
रोती है दूर खड़ी हीर रे।
कौन सुने नदिया की पीर रे।।

''कल-कल करती नदिया बोली''

कल-कल करती नदिया बोली,
सुनो, सुनो रे! मेरी कहानी!
जीवन देने आई थी जग में,
अब झेल रही हूं नादानी!!

मनुज हुआ नादान भयंकर,
जल की कीमत ना जाने!
बूँद-बूँद जो गगन से पाटा,
उसको दौलत खुद की माने!!

खूब लुटाता, व्यर्थ बहाता,
मोती सा मूल्यवान पानी!
कल-कल करती नदिया बोली,
सुनो, सुनो रे! मेरी कहानी!!

मुझे प्रदूषित किया सभी ने,
नाली बना दिया है देखो!
कल रोएंगे सारे मिल कर,
ऐसा बेहाल किया है देखो!!

कभी जहां लगते थे मेले,
उन घाटों पर है वीरानी!
कल-कल करती नदिया बोली,
सुनो, सुनो रे! मेरी कहानी!!

जागो अब भी, सोचो, समझो,
जल की कीमत पहचानो!
जीना दूभर होगा जल बिन
ये बात मेरी अब तो मानो!!

संरक्षण करना सीखो सब,
बहुत कीमती है ये पानी!
कल-कल करती नदिया बोली,
सुनो, सुनो रे! मेरी कहानी!!

सपंर्क करें:
डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा ''अरुण''
पूर्व प्राचार्य,
74/3, न्यू नेहरू नगर,
रुड़की 247 667
मो. 9412070351

जल संसाधनों में उदीयमान प्रदूषक : स्रोत, प्रभाव एवं उपचार

सुजाता कश्यप, राजेश सिंह, विनय कुमार त्यागी एवं पूजा त्यागी

उदीयमान प्रदूषक हमारे पर्यावरण के जैविक तथा अजैविक दोनों ही घटकों को प्रभावित करते हैं। विभिन्न स्त्रोतों से उत्सर्जित उदीयमान प्रदूषक वायु, मृदा और सतही जल में प्रवेश करते हैं, तथा निक्षालन प्रक्रिया के द्वारा ये भूजल को भी दूषित करते हैं। मृदा और जल के द्वारा ये मनुष्यों व जीव-जन्तुओं में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रवेश करते हैं। उदीयमान प्रदूषक मनुष्यों व जीव जन्तुओं में अंतःस्रावी तंत्र को प्रभावित करते हैं तथा साथ ही ये एंटीबायोटिक प्रतिरोधक क्षमता भी कम कर देते हैं। लिंग संबंधी असमानतायें व विषम लिंगानुपात जैसी समस्याएं भी उदीयमान प्रदूषकों के कारण होती हैं। अध्ययनों में यह भी पाया गया है कि प्राकृतिक हार्मोन का अनुकरण करने वाली बहुत सी दवाओं में उपलब्ध रसायनों के मिश्रण जल संसाधनों में पाए गए हैं जो इंटरसेक्स मछलियों के उद्भव के लिए उत्तरदायी हैं।

उदीयमान प्रदूषकों (emerging pollutants EPs) को इमर्जिंग कन्सर्न (emerging concern) वाले प्रदूषकों के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इनमें मानव स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी तंत्र को हानि पहुँचाने की अपार क्षमता होती है। जैसा कि इसके नाम से ही विदित है कि ये प्रदूषक नये या उभरते हुए हैं परन्तु ऐसा नहीं है, ये प्रदूषक हमारे पर्यावण में तब से उपस्थित है, जबसे इनका प्रयोग हो रहा है। इन्हें उदीयमान प्रदूषक इसलिए कहा जाता है क्योंकि पर्यावरण के विभिन्न घटकों में इनकी उपस्थिति, उनके पर्यावरण में संग्रहण तकनीकों व उनका संचय तथा उनके द्वारा संभावित स्वास्थ्य जोखिमों के विषय की जानकारी बहुत सीमित है। उदीयमान प्रदूषकों के लिए कोई नीति, नियम या सूत्रीकरण स्थापित नहीं किये गये हैं और न ही कोई निर्वहन मानदंड तय किये गए हैं।

इसका एक उदाहरण डी.डी.टी. (Dichloro diphenyl tricholoroethane) हैं जो एक कीटनाशक है। यह मलेरिया व डेंगू के रोकथाम में रामबाण सिद्ध हुआ है तथा इसके उपयोगस्वरूप कृषि उत्पाद में भी सार्थक वृद्धि पाई गई है। इन लाभों के कारण डी.डी.टी. को मानवजाति के लिए एक वरदान माना गया, परन्तु 15 वर्षों के उपयोग के पश्चात ही पर्यावरण पर इसके दुष्परिणाम दृष्टिगोचर होने लगे और इसे उदीयमान प्रदूषकों की श्रेणी में रखा गया क्योंकि इसके दुष्परिणाम के विषय में बहुत सीमित जानकारी उपलब्ध थी। विस्तृत शोध के पश्चात अमेरिकी सरकार ने इसके प्रथम उपयोग के लगभग 30 वर्षों बाद, 1972 में सभी क्षेत्रों में इसके उपयोग को पूर्णतः प्रतिबंधित कर दिया। विभिन्न अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि डी.डी.टी. की कुछ सांद्रता तो उसके मूल वास्तविक रूप में ही उपस्थित रहती है तथा कुछ मात्रा उसके चयापचयों (Metabolites), डी.डी.डी. (Dichloro diphenyl dichloroethane) तथा डी.डी.ई. (Dichloro diphenyl dichloroethylene), में रूपांतरित हो जाती है। काफी विचार विमर्श के पश्चात 2004 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने डी.डी.टी. व इसके चयापचयों की जल में अनुमेय सीमा 0.001 mg/L निर्धारित की। भारत सरकार ने भी कृषि में डी.डी.टी. के उपयोग को अधिसूचना संख्या 378 (E) दिनांकित 26 मई 1989 के द्वारा प्रतिबंधित कर दिया है। इसके अतिरिक्त, भारत सरकार द्वारा वर्ष 2006 में अधिसूचना संख्या 295 (E) दिनांकित 8 मार्च 2006 के द्वारा घरेलू सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रम के लिए डी.डी.टी. के उपयोग को प्रति वर्ष 10,000 मीट्रिक टन तक सीमित कर दिया गया है।

चूँकि वर्तमान समय में डी.डी.टी. के विषय में पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो चुकी है, इसलिए इसे अब उदीयमान प्रदूषकों की श्रेणी से हटा दिया गया है।

उदीयमान प्रदूषकों के स्त्रोतः

कृषि, औद्योगिक प्रतिष्ठान, अस्पताल व डिस्पेंसरी, घरेलू उत्पाद, व्यक्तिगत देखभाल उत्पाद आदि उदीयमान प्रदूषकों के मुख्य स्त्रोत हैं।

कृषि परिवेश- कृषि गतिविधियों के कारण उदीयमान प्रदूषक कई मार्गों से पर्यावरण में प्रवेश कर सकते हैं। फसलों

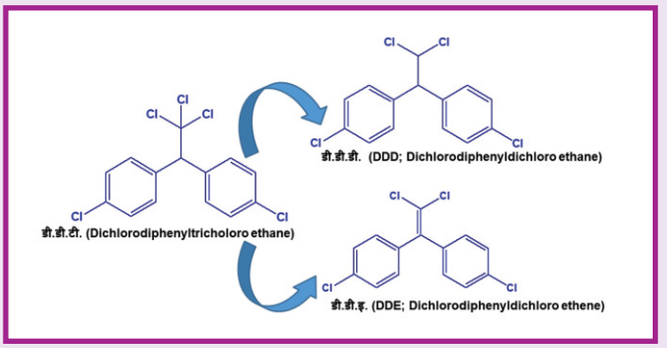

डी.डी.टी. का डी.डी.डी. तथा डी.डी.ई. में विघटन

के उत्पादन में वृद्धि के लिए उर्वरक, खरपतवार नाशक, व कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यकता से अधिक मात्रा में किया जाता है, जिसके कारण अप्रयुक्त रसायन धीरे-धीरे जल संसाधनों तक पहुंच जाते हैं। इसी प्रकार, जब गहन पशुधन सुविधाओं से उत्सर्जित खाद और घोल को उर्वरक के रूप में कृषि भूमि पर प्रयोग किया जाता है तो पशुचिकित्सीय दवाएं और उनके मेटाबोलाइट्स मिट्टी और जल संसाधनों में घुल जाते हैं। जर्मनी में किये गए एक अध्ययन में 58 सतही और भूजल नमूनों में 150 कीटनाशक और उनके मेटाबोलाइट्स पाए गए। भारत में भी अलग-अलग सरकारी और गैर-सरकारी संस्थानों द्वारा सतही और भूजल के नमूनों में कीटनाशकों के पाए जाने की जानकारी दी गई है।

औद्योगिक प्रतिष्ठानः व्यक्तिगत देखभाल संबंधी उत्पाद, कीटनाशक, फार्मास्यूटिकल्स, सर्फेक्टेंट, परफ्लोरोअल्काइल यौगिक, फ्लेम रिटार्डेंट, प्लास्टिसाइजर, एंटीऑक्सिडेंट, क्लोरीनयुक्त सॉल्वैंट्स आदि के निर्माण और पैकेजिंग में शामिल उद्योग यदि अपने उद्योगों से जनित अपशिष्टों का समुचित उपचार नहीं करते हैं, तो उनके अपशिष्ट जल में उपस्थित उदीयमान प्रदूषक जल संसाधनों तक पहुंच जाते हैं और उसे प्रदूषित करते हैं।

अस्पताल व डिस्पेंसरीः अस्वस्थ नागरिकों के स्वास्थ्य को बेहतर करने में अस्पतालों का श्रेष्ठ योगदान होता है, लेकिन बहुत से अस्पतालों की गतिविधियाँ अक्सर विविध अकार्बनिक, कार्बनिक, और माइक्रोबियल घटकों के

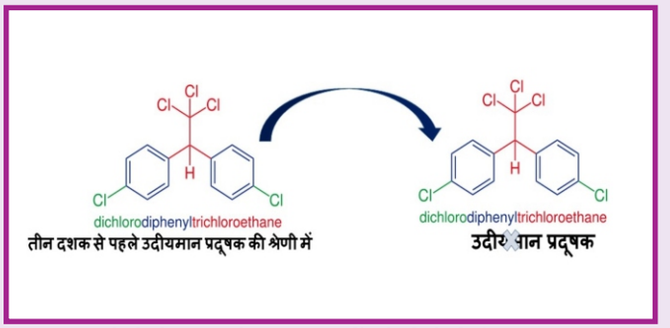

डी.डी.टी. का उदीयमान प्रदूषकों की श्रेणी से निष्कासन

उत्पादन के लिए भी उत्तरदायी होती हैं। अस्पताल के अपशिष्ट जल में दवाइयाँ और मेटाबोलाइज्ड फार्मास्यूटिकल्स यौगिक (सूजनरोधी, मधुमेहरोधी, मिर्गीरोधी, परफ्लुओरिनेटेड यौगिक, एनाल्जेसिक, अंतःस्रावी, एंटीबायोटिक्स, हार्मोन), रेडियोधर्मी तत्व, भारी धातुएं, और सूक्ष्मजीव (फीकल कोलीफॉर्म, कुल कोलीफॉर्म, ई. कोली, स्टैफिलोकोकस, साल्मोनेला, स्यूडोमोनास एरुगिनोसा इत्यादि) उपस्थित होते हैं। फार्मास्युटिकल सक्रिय हाइड्रोकार्बन को छद्म-स्थायी प्रदूषक माना जाता है जो लगातार बहुत कम सांद्रता में पर्यावरण में प्रवेश करते हैं और जलीय प्रणाली में लगभग 160 से अधिक विभिन्न फार्मास्यूटिकल्स, नैनोग्राम प्रति लीटर से माइक्रोग्राम प्रति लीटर तक, रिपोर्ट किये गए हैं। सक्रिय फार्मास्युटिकल अवयव और उनके बायोट्रांसफॉर्मेशन उत्पाद जैव संचय कर रहे हैं जिससे बैक्टीरिया में एंटीबायोटिक प्रतिरोध जीन का विकास हो रहा है और इससे पारिस्थितिकी तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा हैं।

आवासीय परिसरः व्यक्तिगत देखभाल संबंधी उत्पाद (Personal Care Products), स्वास्थ्य, सौंदर्य, और सफाई उद्देश्यों के लिए उपयोग किए जाते हैं, जैसेः कपड़े धोने के डिटर्जेंट, सर्फेक्टेंट, खाद्य योजक व परिरक्षक, माइक्रोप्लास्टिक्स, कीटाणुनाशक, कीट विकर्षक, संरक्षक, दवाइयाँ, इंजीनियर्ड हार्मोन, स्टेरॉयड इत्र, शैंपू, और यूवी फिल्टर आदि घरों से निकलने वाले अपशिष्ट जल में उपस्थित होते है। इनमें मुख्य रसायन पेरासिटामोल

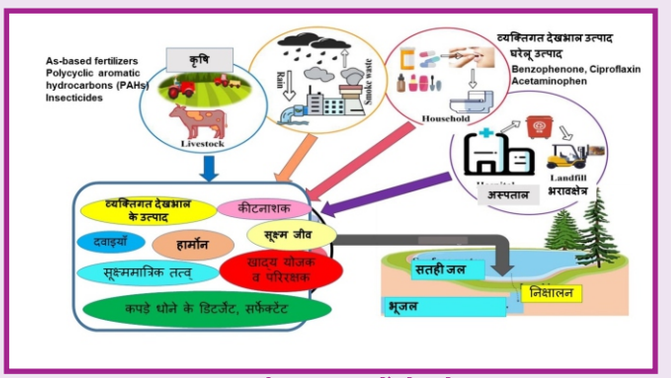

उदीयमान प्रदूषकों के स्त्रोत

(paracetamol), बेन्जोफेनोन (Benzophenone), सिप्रोफ्लाक्सिन (Ciproflaxin), एसीटामिनोफेन (Acetaminophen), पैराक्सैन्थिन (Paraxanthine), नेप्रोक्सन (Naproxen), सल्फापिरीडीन (Sulphapyridine), बेंजोफेनोन-3 (Benzophen one-3), गैलेक्सोलाइड (Galaxolide), 1,4-डाइऑक्सेन (1,4-dioxane), प्रोपाइल पैराबेन (Propyl paraben), बिस्फेनॉल, (Bisphenol A), बीस-(2- इथाइलहेक्साइल) थैलेट (Bis-(2-Ethylhexyl) phthalate), डिब्यूटाइल थैलेट (Dibutyl phthalate), निकोटीन (Nicotine), बेंजोट्रायजोल मिथाइल-1 एच (Benzotriazole methyl-1H), 17a-एथिनिल एस्ट्राडियोल (17a-ethinyl estradiol), एस्ट्रोन (Estrone), एस्ट्रिऑल (Estriol), ट्रिस (2-क्लोरोइसोप्रोपाइल) फॉस्फेट (Tris2-chloroisopropyl) phosphate), ट्रिस (2-ब्यूटॉक्सी एथिल) फॉस्फेट (Tris (2-butoxy ethyl) phosphate), ट्रिस (2-क्लोरोइथाइल) फॉस्फेट (Tris (2 chloroethyl) phosphate) आदि शामिल हैं।

उदीयमान प्रदूषकों का हमारे पर्यावरण पर प्रभाव

उदीयमान प्रदूषक हमारे पर्यावरण के जैविक तथा अजैविक दोनों ही घटकों को प्रभावित करते हैं। विभिन्न स्त्रोतों से उत्सर्जित उदीयमान प्रदूषक वायु, मृदा और सतही जल में प्रवेश करते हैं, तथा निक्षालन प्रक्रिया के द्वारा ये भूजल को भी दूषित करते हैं। मृदा और जल के द्वारा ये मनुष्यों व जीव-जन्तुओं में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रवेश करते हैं। उदीयमान प्रदूषक मनुष्यों व जीव जन्तुओं में अंतःस्रावी तंत्र को प्रभावित करते हैं तथा साथ ही ये एंटीबायोटिक प्रतिरोधक क्षमता भी कम कर देते हैं। लिंग संबंधी असमानतायें व विषम लिंगानुपात जैसी समस्याएं भी उदीयमान प्रदूषकों के कारण होती हैं। अध्ययनों में यह भी पाया गया है कि प्राकृतिक हार्मोन का अनुकरण करने वाली बहुत सी दवाओं में रसायनों के मिश्रण जल संसाधनों में पाए गए हैं जो इंटरसेक्स मछलियों के उद्भव के लिए उत्तरदायी हैं। फार्मास्युटिकल-दूषित जल के सेवन से महिलाओं में अंडे और पुरुषों में

शुक्राणु कम हो सकते हैं। उदीयमान प्रदूषकों को मृदा में बैक्टीरिया की आबादी को कम करने और उनमे एंटीबायोटिक प्रतिरोधक क्षमता की वृद्धि के लिए उत्तरदायी पाया गया है। इनकी उपस्थिति के कारण मृदा में कार्बनिक पदार्थों के अपघटन की दर में भी कमी पायी गयी है। शिकारी पक्षियों, जैसे गिद्धों के पास मानव आबादी में मौजूद विषहरण एंजाइम नहीं होते हैं, जिसके कारण वे पर्यावरण में फार्मास्यूटिकल्स के प्रभावों के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनकी आबादी में गिरावट आती है। एशिया में गिद्धों की तीन प्रजातियों की आबादी में गिरावट के लिए गैर-स्टेरायडल सूजन-रोधी दवा डाइक्लोफेनाक को पशु चिकित्सा में उपयोग हेतु उत्तरदायी पाया गया है। चूंकि गिद्ध एक मूल तत्व प्रजाति है, इसलिए उनकी आबादी में गिरावट के पारिस्थितिक, सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक और मानव स्वास्थ्य पर कई तरह के प्रभाव पड़ते हैं।

उदीयमान प्रदूषकों के उपचार के लिए विभिन्न तकनीकें

पर्यावरण में उदीयमान प्रदूषकों की पुनः स्थापना को नियंत्रित करने के लिए स्रोत नियंत्रण सबसे कम लागत की प्रभावी तकनीकों में से एक है, हालांकि पर्यावरण में उनका स्राव अपरिहार्य है, और इसलिए इन यौगिकों की पर्यावरण में सांद्रता को कम करने के लिए उपचार विधियों पर निरंतर शोध जारी है। रासायनिक और जैविक उपचार प्रक्रियाओं पर आधारित पारंपरिक व आधुनिक तकनीकों के माध्यम से बहुत से उदीयमान प्रदूषकों का निवारण किया गया है जैसे कि फेंटन अभिकर्मक, सक्रिय कार्बन, ओजोन व पराबैंगनी विकिरण, सक्रिय स्लज प्रक्रिया, अपशिष्ट स्थिरीकरण तालाब, आर्द्रभूमि, निस्पंदन, आदि।

फेंटन अभिकर्मक (Fenton's Reagent)

मुख्यतः फेंटन अभिकर्मक, फेरस सल्फेट ($FeSO_4$) तथा हाइड्रोजन परोक्साइड (H_2O_2) का मिश्रण होता है। हाइड्रोजन परोक्साइड के साथ फेरस और फेरिक आयनों के बीच अभिक्रिया से हाइड्रॉक्सिल और हाइड्रोपेरॉक्सिल रेडिकल तथा हाइड्रॉक्सिल आयन बनते हैं। इस अभिकर्मक में, फेरस आयन उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है और फ्री रेडिकल के निर्माण को बढ़ावा देता है। फ्री रेडिकल में उपस्थित अयुग्मित इलैक्ट्रॉन के कारण इनकी स्थिरता बहुत कम होती है और ये बहुत ही प्रतिक्रियाशील होते हैं। अत्यधिक प्रतिक्रियाशील होने के कारण ये किसी भी जटिल व बड़े यौगिक के साथ अभिक्रिया करते हैं और उन्हें ये सरल व छोटे-छोटे अणुओं में विघटित कर देते हैं। अध्ययनों में यह दर्शाया गया है कि DEET (N.N diethyl-meta-tolumide), कैफीन (Caffeine), कार्बमेजपाइन (Carbamazepine), ट्राईक्लोसेन (Triclosan) आदि का उपचार फेंटन अभिकर्मक के द्वारा सफलतापूर्वक हुआ है और इनमें लगभग 70%-100% निष्कासन क्षमता पाई गयी है। क्योंकि फेरस सल्फेट की घुलनशीलता जल में बहुत ही अधिक है, इसलिए रिएक्टर में फेरस आयनों की सांद्रता बनाए रखने के लिए हमें लगातार फेरस युक्त नमक मिलाना पड़ता है जिसके कारण यह एक महंगी उपचार तकनीक मानी जाती है।

सक्रिय कार्बन (Activated carbon)

सक्रिय कार्बन का उपयोग नगर निगम के पेयजल, खाद्य और पेय प्रसंस्करण, गंध दूर करने, औद्योगिक प्रदूषण नियंत्रण सहित विभिन्न अनुप्रयोगों में तरल पदार्थ और गैसों को शुद्ध करने के लिए किया जाता है। कार्बनयुक्त स्रोत सामग्री, जिनमें कार्बन का प्रतिशत ज्यादा होता है, जैसे नारियल, कोयला और लकड़ी आदि से सक्रिय कार्बन का उत्पादन किया जाता है। सक्रिय कार्बन में माइक्रोपोर होते हैं, जिनके कारण इनका सतही क्षेत्र अधिक होता है, ये माइक्रोपोर कार्बनिक अणुओं को अवशोषित और अधिशोषित करने का कार्य करते हैं। सक्रिय कार्बन ग्रेफाइट प्लेट (activated carbon graphite plates) अपने तटस्थ कार्बनिक अणुओं को इंट्रा-आणविक द्विध्रुवों में रूपांतरित करने के लिए प्रेरित करती हैं, और प्रेरित द्विध्रुव अणु एक-दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं और एक साथ चिपकते जाते हैं और इस प्रकार वे विलयन से अवक्षेपित हो जाते हैं। सक्रिय कार्बन तकनीक के द्वारा सैलिसिलिक एसिड (Salicylic Acid), इबुप्रोफेन (Ibuprofen), बेंजोफीनोन (Benzophenone)) क्लोफाइब्रिक एसिड (Clofibric Acid) डिक्लोफेनेक (Diclofenac) गैलिक एसिड (Gallic Acid) का उपचार किया गया है, और यह पाया गया है कि इसकी दक्षता अन्य तकनीकों से बेहतर है। उदीयमान प्रदूषकों के उपचार हेतु सक्रिय कार्बन की निष्कासन क्षमता बहुत कुछ सक्रिय

उदीयमान प्रदूषकों (emerging pollutants EPs) को इमर्जिंग कन्सर्न (emerging concern) वाले प्रदूषकों के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इनमें मानव स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी तंत्र को हानि पहुँचाने की अपार क्षमता होती है। जैसा कि इसके नाम से ही विदित है कि ये प्रदूषक नये या उभरते हुए हैं परन्तु ऐसा नहीं है, ये प्रदूषक हमारे पर्यावण में तब से उपस्थित है, जबसे इनका प्रयोग हो रहा है। इन्हें उदीयमान प्रदूषक इसलिए कहा जाता है क्योंकि पर्यावरण के विभिन्न घटकों में इनकी उपस्थिति, उनके पर्यावरण में संग्रहण तकनीकों व उनका संचय तथा उनके द्वारा संभावित स्वास्थ्य जोखिमों के विषय की जानकारी बहुत सीमित है। उदीयमान प्रदूषकों के लिए कोई नीति, नियम या सूत्रीकरण स्थापित नहीं किये गये है और न ही कोई निर्वहन मानदंड तय किये गए हैं।

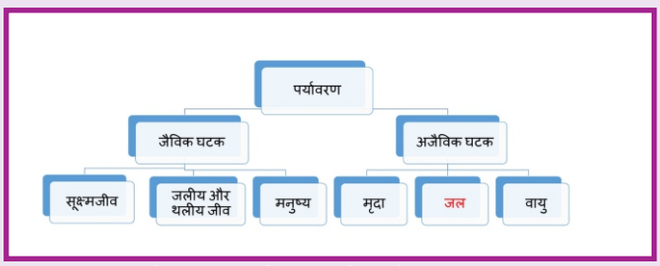

उदीयमान प्रदूषकों का हमारे पर्यावरण पर प्रभाव

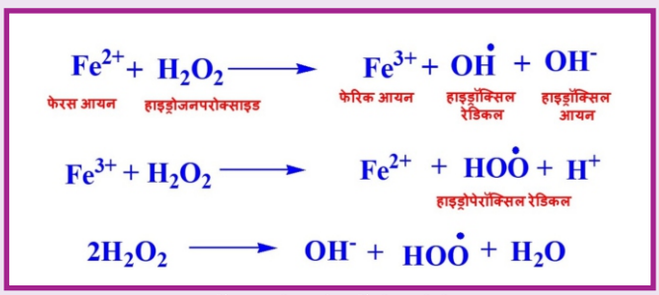

फेंटन अभिकर्मक में क्रियाविधि

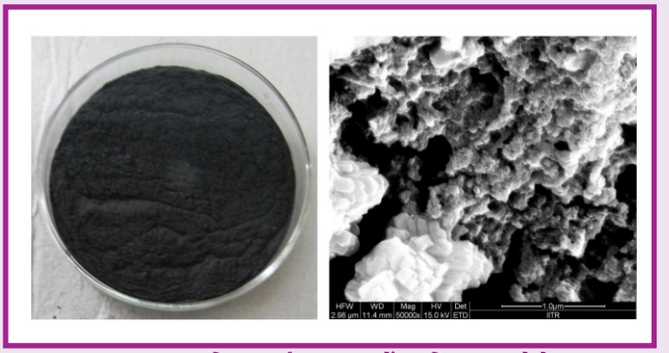

पाउडर सक्रिय कार्बन तथा उनमें उपस्थित माइक्रोपोर

कार्बन की स्रोत सामग्री और उदीयमान प्रदूषकों के प्रकार पर निर्भर करती है। सक्रिय कार्बन के द्वारा उदीयमान प्रदूषकों की निष्कासन क्षमता 30% से 100% तक पाई गयी है।

जैविक प्रक्रियाएं (एरोबिक और एनारोबिक)

सक्रिय स्लज प्रक्रिया (activated Sludge Process) वर्तमान में सबसे व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली एरोबिक जैविक अपशिष्ट जल उपचार प्रक्रिया है। सक्रिय स्लज प्रक्रिया में वातन टैंक में निलंबन या संलग्न वृद्धि में सूक्ष्मजीवों (मूल रूप से बैक्टीरिया, प्रोटोजोआ और कवक) की उच्च सांद्रता बनाए रखी जाती हैं, जिसकी सहायता से अपशिष्ट जल में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ ऑक्सीकृत होकर अकार्बनिक रूपों में परिवर्तित हो जाते हैं। अवायवीय (एनारोबिक) अपशिष्ट जल उपचार एक जैविक प्रक्रिया है जो ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में सूक्ष्मजीवों का उपयोग करके अपशिष्ट जल में मौजूद कार्बनिक प्रदूषकों को बायोगैस (मीथेन और कार्बन डाइऑक्साइड के मिश्रण) में परिवर्तित करती है। प्रकाशित साहित्य उदीयमान प्रदूषकों को दूर करने के लिए जैविक प्रक्रियाओं के प्रदर्शन में व्यापक विविधता का संकेत देता है। विशिष्ट यौगिक और उपचार की स्थितियों के आधार पर जैविक प्रक्रियाओं की निष्कासन दक्षता बिना निष्कासन से लेकर लगभग पूर्ण निष्कासन तक पायी गयी है। उदीयमान प्रदूषकों को दूर करने के लिए एरोबिक और एनारोबिक प्रक्रियाओं का मिश्रण एक श्रेष्ठ विकल्प हो सकता है। संयुक्त प्रभाव के उपयोग से 70% से अधिक की निष्कासन क्षमता पाई गई है।

निर्मित/कृत्रिम आर्द्रभूमि (Constructed Wetland)

साधारण शब्दों में आर्द्रभूमि वह स्थान है जहां धरती और जल परस्पर समाहित होते हैं। प्राकृतिक आर्द्रभूमि के विपरीत, मानव निर्मित आर्द्रभूमि को कृत्रिम आर्द्रभूमि कहा जाता है क्योंकि यह मनुष्य द्वारा उसकी आवश्यकता के अनुरूप विकसित की जाती है। अन्य शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि जल को साफ करने के लिए जलीय वनस्पति तथा सूक्ष्मजीवों के संयुक्त प्रयोग की तकनीक को निर्मित आर्द्रभूमि कहा जाता है। सौंदर्य, संचालन की लागत और उपचार-क्षमता की दृष्टि से उदीयमान प्रदूषकों के उपचार के लिए निर्मित आर्द्रभूमि और अन्य प्राकृतिक उपचार प्रणालियाँ महत्वपूर्ण प्रौद्योगिकियाँ हैं। करीब 70% तक सिप्रोफ्लोक्सासिन एचसीएल (Ciprofloxacin HCl), ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन एचसीएल (Oxytetracycline HCl), नाडोलोल (Nadolol) कोटिनीन (Cotinine) आदि का निवारण निर्मित आर्द्रभूमि द्वारा सफलतापूर्वक किया जा सकता है। शोधकर्ताओं ने पाया है कि निर्मित आर्द्रभूमि में उदीयमान प्रदूषकों को दूर करने की क्षमता पारंपरिक अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों के समान या उनसे बेहतर है। अतः निर्मित आर्द्रभूमि को अपशिष्ट जल से उदीयमान प्रदूषकों को दूर करने के लिए एक प्रभावी विकल्प के रूप में उपयोग में लाया जा सकता है।

अपशिष्ट स्थिरीकरण तालाब (Waste stabilzation ponds)

अपशिष्ट जल स्थिरीकरण तालाब बड़े तथा मानव निर्मित जल निकाय हैं जिनमें सौर प्रकाश, वायु, सूक्ष्मजीवों और शैवाल के प्रभाव से प्रदूषित जल का प्राकृतिक रूप से उपचार किया जाता है। ये तालाब तीन प्रकार (अवायवीय, वैकल्पिक, और एरोबिक) के होते हैं। अलग-अलग उपचार के लिए अलग-अलग विशेषताओं वाले अभिकल्प की आवश्यकता होती है। प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के दौरान शैवाल द्वारा छोड़ी गई ऑक्सीजन एरोबिक बैक्टीरिया द्वारा उपयोग कर ली जाती है। ज्यादा ऑक्सीजन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए कभी-कभी यांत्रिक एयरेटर भी लगाए जाते हैं। शोध में यह भी पाया गया है कि अपशिष्ट स्थिरीकरण तालाब प्रौद्योगिकी, 80% से अधिक की समग्र निष्कासन दक्षता प्राप्त कर सकती है। इस तकनीक द्वारा प्राप्त की गई उच्च निष्कासन दक्षता को विभिन्न निष्कासन प्रक्रियाओं, जैसे कि बायोडिग्रेडेशन, सोर्शन और फोटोडिग्रेडेशन, के संयोजन के साथ-साथ प्रौद्योगिकी के उच्च द्रवीय अवधारण समय जो लगभग 20-30 दिन है, के संयोजन से स्पष्ट किया जा सकता है।

निर्मित/कृत्रिम आर्द्रभूमि

अपशिष्ट स्थिरीकरण तालाब

निष्कर्ष

वर्तमान में उदीयमान प्रदूषकों की दुनियाभर में लगातार मौजूदगी रिपोर्ट की जा रही है और यह चिंता का विषय बनी हुई है। इनमें मानवजनित जहरीले यौगिक जैसे दवाइयाँ और व्यक्तिगत देखभाल के उत्पाद, हार्मोन, खाद्य योजक व परिरक्षक, कीटनाशक, प्लास्टिसाइजर, कपड़े धोने के डिटर्जेंट, सर्फेक्टेंट, ट्रेस तत्व (trace metal), सूक्ष्म जीव आदि सम्मिलित हैं। उदीयमान प्रदूषकों की जल संसाधनों में उपस्थिति उनके पर्यावरण में संग्रहण की तकनीकों पर उनके संचय तथा उनके द्वारा संभावित स्वास्थ्य जोखिमों के विषय में ज्ञान व जानकारी बहुत सीमित है। वर्तमान में नगरपालिका और औद्योगिक अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों को उदीयमान प्रदूषकों के उपचार के लिए अभिकल्पित नहीं किया गया है जिस कारण से वे जल संसाधनों में पहुंच जाते हैं। अतः जल संसाधनों में इनकी उपस्थिति को कम करने के लिए अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों के पश्चात पोलिशिंग संयंत्रों को स्थापित किये जाने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, जल संसाधनों में उभरते प्रदूषकों और उनके चयापचयों की व्यापकता और पर्यावरण तथा मानव स्वास्थ्य पर उनके नकारात्मक प्रभाव की व्यापक निगरानी करने की आवश्यकता है।

सपंर्क करें:
सुजाता कश्यप, राजेश सिंह, विनय कुमार त्यागी एवं पूजा त्यागी
एक्सा पैरेंट्रल लिमिटेड, रुड़की-247 667

डॉ. ऋचा पाण्डेय

कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर भारत

कोविड-19 महामारी को सदी की सबसे विनाशकारी वैश्विक स्वास्थ्य आपदा और द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से मानव जाति के सामने सबसे बड़ी चुनौती माना जाता है। इस महामारी को नियंत्रित करने के लिए भारत सहित दुनिया भर के देशों ने लॉकडाउन लगाया जिसके कारण वैश्विक स्तर पर गंभीर आर्थिक गिरावट आई। आज इस बात को लेकर आम सहमति है कि अगले कई वर्षों तक पूरा विश्व किसी न किसी रूप से संभवतः इस महामारी के नकारात्मक परिणामों से ही जूझता रहेगा। वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाएं बाधित होने एवं सभी राष्ट्रों द्वारा अपनी-अपनी चुनौतियों से निपटने में व्यस्त होने के कारण वैश्विक स्तर पर कम आर्थिक सहयोग का परिदृश्य बना और अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था पूर्णतः बदल गई। कई तथाकथित शक्तिशाली देशों की अर्थव्यवस्था ने इस दौरान उच्च मुद्रास्फीति के खतरे का सामना किया एवं प्रत्येक देश की जीडीपी में नकारात्मक वृद्धि दर दर्ज की गई।

सुवर्णरौप्यमाणिक्यवसनैरपिपुरिताः।
तथापि प्रार्थयन्त्येव कृषकान्
भक्ततृष्णया।।

अर्थात-सोना, चांदी, माणिक एवं वस्त्रों से परिपूर्ण होने पर भी मनुष्य को भोजन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किसान पर निर्भर रहना पड़ता है।

भारत में कृषि का प्रारंभिक दौर 9000 ईसा पूर्व अर्थात लगभग 11,000 वर्ष पहले माना जाता है। सर आर्थर कीथ के अनुसार, ''कृषि की खोज एक सभ्य जीवन की ओर पहला बड़ा कदम था''। हमारा देश कृषि प्रधान देश है जिसमें कृषि का अर्थ केवल खेती करना नहीं, अपितु यह जीवन जीने की कला है। हमारे देश के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में कृषि प्रायः 18-19% (2022-2023) का योगदान देती है एवं 60% से अधिक भारतीय जनसंख्या को रोजगार प्रदान करती है। भारत मुख्य रूप से कृषि अर्थव्यवस्था है। यहां पर कुल भूमि क्षेत्रफल का लगभग 60.44% भाग कृषि योग्य भूमि क्षेत्र है। इसके उपरांत विभिन्न कृषि जलवायु परिस्थितियों के कारण विभिन्न फसलों की खेती का समर्थन करने के लिए अद्वितीय प्रतिस्पर्धी लाभ हैं। भारत विश्व स्तर पर शुद्ध कृषि क्षेत्रफल में प्रथम स्थान पर एवं कृषि उत्पादन दर में द्वितीय स्थान पर आता है। भारत ने वित्त वर्ष 2022-23 में कुल 53.1 बिलियन डॉलर के कृषि उत्पादों का निर्यात किया, जो कुल व्यापारिक निर्यात का 12.6% था। इसके परिणामस्वरूप भारत ने विश्व स्तर पर सातवां सबसे बड़ा कृषि उत्पाद निर्यातक एवं छठा प्रमुख शुद्ध निर्यातक बन कर वैश्विक खाद्य आपूर्ति में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

कोविड-19 महामारी को सदी की सबसे विनाशकारी वैश्विक स्वास्थ्य आपदा और द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से मानव जाति के सामने सबसे बड़ी चुनौती माना जाता है। इस महामारी को नियंत्रित करने के लिए भारत सहित दुनिया भर के देशों ने लॉकडाउन लगाया जिसके कारण वैश्विक स्तर पर गंभीर आर्थिक गिरावट आई। आज इस बात को लेकर आम सहमति है कि अगले कई वर्षों तक पूरा विश्व किसी न किसी रूप से संभवतः इस महामारी के नकारात्मक परिणामों से ही जूझता रहेगा। वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाएं बाधित होने एवं सभी राष्ट्रों द्वारा अपनी-अपनी चुनौतियों से निपटने में व्यस्त होने के कारण वैश्विक स्तर पर कम आर्थिक सहयोग का परिदृश्य बना और अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक

कृषि हेतु नवीन तकनीकें

व्यवस्था पूर्णतः बदल गई। कई तथाकथित शक्तिशाली देशों की अर्थव्यवस्था ने इस दौरान उच्च मुद्रास्फीति के खतरे का सामना किया एवं प्रत्येक देश की जीडीपी में नकारात्मक वृद्धि दर दर्ज की गई। विश्व व्यापार संगठन (WTO) एवं आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (OECD) के अनुसार, 2008-2009 के वित्तीय आपातकाल के बाद से वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए कोविड-19 महामारी को सबसे बड़े खतरे के रूप में स्वीकार किया गया है। इस कठिन समय में अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के लिए नए वित्तीय सुधारों की आवश्यकता पड़ी थी। अतः केंद्र सरकार द्वारा घोषित ऐसा ही एक मात्र कदम ''आत्मनिर्भर भारत अभियान'' था जिसका मुख्य उद्देश्य पुरानी तरीकों को त्याग कर, भारत की जनसांख्यिकी एवं बहुतायत के लाभ एवं कल्याण को देखते हुए एक आत्मनिर्भर राष्ट्र बनाना था। इसी दौरान आत्मनिर्भर भारत के पांच स्तंभों को भी परिभाषित किया गया जिसमें तेजी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था, आधुनिक भारत की पहचान बनता बुनियादी ढांचा, नए जमाने की तकनीकी केन्द्रित व्यवस्थाओं पर चलता तंत्र, देश की ताकत बन रही आबादी और मांग एवं आपूर्ति चक्र को मजबूत बनाना शामिल था। इस तथ्य पर भी जोर दिया गया कि यह हमारे स्थानीय उत्पादों को प्रसिद्ध एवं वैश्विक बनाने का समय है। इस अभियान के तहत सरकार द्वारा एक विशेष आर्थिक पैकेज जारी किया गया जो लगभग 20 लाख करोड़ रुपये था जो भारत की जीडीपी का लगभग 10% था। इससे देश के विभिन्न वर्गों को सहायता और शक्ति प्रदान करने एवं वर्ष 2025 तक देश के विकास में अपेक्षित वृद्धि की सम्भावना है। भारत की लगभग 70% आबादी अपने अस्तित्व के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है, अतः इस अभियान में कृषि तथा संबन्धित गतिविधियों को प्रमुखता दी गई है।

''जहां तक खाद्यान्न की बात है, भारत में प्रचुर मात्रा में उपजाऊ भूमि उपलब्ध है, पर्याप्त पानी है और जनशक्ति की कोई कमी नहीं है..... लोगों को आत्मनिर्भर बनने के लिए शिक्षित किया जाना चाहिए। एक बार जब उन्हें पता चल जाए कि उन्हें अपने पैरों पर खड़ा होना है, तो इससे वातावरण में जोश भर जाएगा।"

-महात्मा गांधी, हरिजन, 19-10-47, पृ. 379"

•आत्मनिर्भर भारत अभियान में कृषि कैसे योगदान दे सकती है।

कोविड-19 महामारी के मद्देनजर मार्च 2020 से लागू देशव्यापी लॉकडाउन के कारण भारत की प्रथम तिमाही अर्थव्यवस्था में 23.9% की भारी गिरावट आई थी। जहां विनिर्माण और निर्माण क्षेत्रों में क्रमशः 39.3% और 50.3% की ऋणात्मक वृद्धि हुई, कृषि ही केवल एकमात्र क्षेत्र था जिसमें 3.4% की सकारात्मक वृद्धि दर्ज की गई। वित्त वर्ष 2020-21 की तुलना में वित्त वर्ष 2021-22 के दौरान कृषि उत्पादों का निर्यात 20.79% बढ़ा है। वित्त वर्ष 2022-23 में इस निर्यात का मूल्य तकरीबन 53.1 बिलियन डॉलर आँका गया है। इसके पश्चात, भारत के कृषि सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में कृषि निर्यात वित्त वर्ष 2018-19 में 9.9% से बढ़कर वित्त वर्ष 2021-22 में 11.9% हो गया। वहीं भारत के कृषि सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में कृषि आयात वित्त वर्ष 2020-21 में 5.45% से घटकर वित्त वर्ष 2021-22 में 5.23% हो गया था, जो निर्यात योग्य अधिशेष और भारत में कृषि उत्पादों के आयात पर निर्भरता में कमी को दर्शाता है। इस प्रकार आत्मनिर्भर कृषि, आत्मनिर्भर भारत के लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए एक महत्वपूर्ण मार्ग प्रशस्त करती है और भारत की आर्थिक शक्ति बनने में सार्थक है। कृषि, आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में निम्नलिखित प्रयासों से अपना योगदान दे सकती है।

भारत विश्व में कृषि उत्पादों के पन्द्रह प्रमुख निर्यातकों में से एक है एवं कृषि उत्पादों का एक शुद्ध निर्यातक है। पिछले 15 वर्षों में लगभग सभी कृषि उत्पादों के निर्यात में पर्याप्त वृद्धि हुई है, परन्तु कृषि उत्पादों के शीर्ष उत्पादकों में से एक होने के बावजूद भी भारत कृषि उपज के शीर्ष निर्यातकों में शामिल नहीं है।

कृषि उपज निर्यात में वृद्धि एवं आयातित कृषि सामग्री पर निर्भरता में कमी

भारत विश्व में कृषि उत्पादों के पन्द्रह प्रमुख निर्यातकों में से एक है एवं कृषि उत्पादों का एक शुद्ध निर्यातक है। पिछले 15 वर्षों में लगभग सभी कृषि उत्पादों के निर्यात में पर्याप्त वृद्धि हुई है, परन्तु कृषि उत्पादों के शीर्ष उत्पादकों में से एक होने के बावजूद भी भारत कृषि उपज के शीर्ष निर्यातकों में शामिल नहीं है। उदाहरण के लिए, भारत विश्व में गेहूं उत्पादन के क्षेत्र में दूसरे स्थान पर है, परन्तु निर्यात में 34 वें स्थान पर है। इसी तरह, सब्जियों के उत्पादन में विश्व में नंबर 3 पर होने के बावजूद भारत की निर्यात रैंकिंग केवल 14 वें स्थान पर है। फलों के मामले में भी ऐसा ही है, यद्यपि भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा फल उत्पादक देश है, परन्तु निर्यात रैंकिंग में वह 23 वें स्थान पर है। भारत का कुल कृषि निर्यात, विश्व कृषि व्यापार से केवल 2.15% ही अधिक है जो कि संतोषजनक नहीं है। इस संदर्भ में, कृषि निर्यात न सिर्फ देश के लिए कीमती विदेशी मुद्रा अर्जित करने में बेहद महत्वपूर्ण है, अपितु किसानों/उत्पादकों/निर्यातकों को व्यापक अंतर्राष्ट्रीय बाजार का लाभ उठाने एवं उनकी आय बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके अतिरिक्त यह भी देखा गया है कि भारत के कृषि आयात में वनस्पति तेलों, दालों, काजू, मसालों और चीनी के आयात के कारण लगभग 63% की वृद्धि दर्ज की गई है। अतः सरकार को घरेलू उत्पादकों को प्रतिस्पर्धात्मक लाभ दिलाने के लिए उच्च आयात शुल्क लगाना चाहिए एवं भारतीय खेतों की उत्पादकता बढ़ाने पर बल देना चाहिए। खाद्य तेल के आयात को कम करने के लिए पाम तेल की खेती के लिए उपयुक्त लगभग 2 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर सूरजमुखी, मूँगफली, सरसों और पाम तेल की खेती की जा सकती है। अतः न्यूनतम आयात एवं अधिकतम निर्यात करके कृषि में आत्मनिर्भर होना, भारत के आत्मनिर्भर अभियान में योगदान देगा।

स्थानीय कृषि उत्पादों की ब्रांडिंग

विश्व स्तर पर विक्रय किये जाने वाले स्थानीय कृषि उत्पादों की ब्रांडिंग भी एक उपयुक्त तकनीक हो सकती है। कृषि उत्पादों की ब्रांडिंग से इनके मूल्य में वृद्धि होगी एवं किसानों को गुणवता के प्रति जागरूक भी किया जा सकेगा। ब्रांडेड उत्पादों में भारत की वैश्विक निर्यात भागेदारी को 2% से अधिक बढ़ाने एवं ग्रामीण समृद्धि में सहायता करने की अपार क्षमता है। कृषि में स्वदेशी प्रौद्योगिकी ज्ञान का मानकीकरण एवं संवर्धन शामिल होना

चाहिए, जो तकनीक, पोषण, बीमारी और कीटों से निपटने में स्थानीय संसाधनों पर निर्भर हो। इन ग्रामीण नवाचारों को राष्ट्रीय स्तर पर पंजीकृत किया जा सकता है, जो पेटेंट दाखिल करने में भी सहायता कर सकता है और उद्यमों के लिए सूक्ष्म उद्यम सहायता प्राप्त कर सकता है।

कृषि से संबंधित नीतियों में बदलाव

भारतीय कृषि नीतिगत विकृतियों एवं बिचौलियों के प्रसार की समस्या से ग्रस्त है। न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) से संबंधित होने के कारण गेहूं, चावल और गन्ने की खेती पर अत्यधिक ध्यान दिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप जल संसाधन का दोहन, मृदा निम्नीकरण एवं जल की गुणवत्ता में गिरावट होती हैं। वित्तीय समावेशन कार्यक्रमों की श्रृंखला के बावजूद 44% के लगभग ग्रामीण अनौपचारिक ऋण स्रोतों से ऋण लेते हैं। प्राथमिकता क्षेत्र ऋण (PSL) योजना को कृषि उत्पादक संगठनों तक बढ़ाना, निश्चित रूप से उन्हें स्व-सहायता समूहों (SHG's) में संरेखित करेगा। चूंकि SHG's को 20 लाख रुपये तक के संपाश्विक मुक्त ऋण मिलते हैं और माइक्रो फूड एंटरप्राइजेज (MFE) को 10,000 करोड़ रुपये तक के फंड का समर्थन मिलता है अतः इन संगठनों को FPO's के साथ सभी संबंधित केंद्र बिंदुओं पर जोड़ने से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार में वृद्धि होगी। मूल्यवर्धन, ग्रामीण बुनियादी संरचना, रसद (लॉजिस्टिक्स), भंडारण, गुणवत्ता प्रमाणन आदि जैसे विशिष्ट क्षेत्रों के चयन द्वारा इन संगठनों के प्रयासों को एकीकृत करना, कोविड-19 लॉकडाउन से ग्रस्त प्रवासी श्रमिकों को आजीविका के अवसर प्रदान कर सकता है।

विगत पांच वर्षों में कृषि बाजार के आकार में लगातार वृद्धि (वर्ष 2024 का आँकलन-372.94 बिलियन डॉलर) को देखते हुए, चीन, फिलीपींस और अन्य देशों के पद-चिन्हों पर चलकर एक विशेष कृषि व्यवसाय बैंक स्थापित करना आवश्यक है। कृषि जोखिम निधि का गठन करने की भी आवश्यकता है। FPO में निधि की कमी जैसी समस्याओं को कॉर्पोटरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (CSR) कोष के माध्यम से भी हल किया जा सकता है, जिसमें केवल योग्य FPO's को ही निधि प्रदान की जाए। वर्तमान में, एफपीओ के प्रदर्शन का आंकलन करने के लिए कोई मानकीकृत संरचना नहीं है। अतः उनके मानकों को अलग करने और उनके आंकलन के लिए ऐसी संरचना आवश्यक है। एक केंद्रीकृत, डिजिटलीकृत केवाईसी तेजी से जुड़ाव की सुविधा प्रदान करेगा एवं समय और संसाधनों की बचत करेगा। GST परिषद की तर्ज पर एक कृषि विकास परिषद की स्थापना की जा सकती है जिससे भूमि पट्टे, निजी निवेश, कृषि अनुसंधान एवं विकास, आदि में वृद्धि के लिए सुधारों की गति को तीव्र किया जा सके। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MGNREGA) का प्रभावी उपयोग, ग्रामीण बुनियादी ढाँचे के निर्माण पर बल देने के साथ-साथ पर्याप्त कार्य दिवस देने पर भी होना चाहिए। मध्य प्रदेश, हरियाणा और तेलंगाना में क्रियान्वित मूल्य अंतराल भुगतान को देशव्यापी अनुकरण के लिए एक मॉडल योजना के रूप में तैयार किया जाना चाहिए।

कुशल विपणन एवं आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन

उत्पादक भागीदारी में वृद्धि की तत्काल आवश्यकता है। यह कुशल विपणन और आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन पर टिकी हुई है। इसे मान्यता देते हुए, एक कानून में राज्य की सीमाओं पर कृषि वस्तुओं के सहज प्रवाह का मार्ग प्रशस्त किया जाना चाहिए। अंतर्राष्ट्रीय उपभोक्ताओं के ग्रेड एवं गुणवत्ता नियंत्रण के साथ संरेखित करने से इन उत्पादों के निर्यात में मदद मिलेगी।

कृषि में सम्बंधित गतिविधियों को बढ़ावा देना एवं फसल कटाई के पश्चात हानि को बचाना

कृषि में सम्बंधित गतिविधियाँ जैसे डेयरी, पशुपालन, मधुमक्खी पालन, हर्बल खेती एवं मत्स्य पालन को विशिष्टतः आदिवासी कृषि समुदायों के बीच एक स्वचालित उद्यम के रूप में बढ़ावा दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, इन गतिविधियों के लिए आधारिक संरचना एवं विपणन माध्यम में और अधिक परिवर्तन की आवश्यकता है। भारत चावल, कपास, डेयरी, फल, सब्जियां, मांस और समुद्री भोजन जैसे विभिन्न वस्तुओं के लिए उत्पादन की मात्रा में सर्वोच्च रैंकिंग वाले देशों में से एक है, परन्तु देश में भंडारण अवसंरचना की कमी, परिवहन और अवैज्ञानिक प्रथाओं के उपयोग जैसी समस्याओं के कारण सम्पूर्ण उत्पाद का केवल 60% ही उपयोग हो पाता है। वास्तव में, इन हानियों का अनुमानित मान 13 अरब डॉलर वार्षिक है। इसीलिए फसलोत्तर प्रौद्योगिकी के निर्माण और प्रसार में निवेश को बढ़ाने की अत्यधिक आवश्यकता है।

भूमि सुधार कार्यसूची में वृद्धि की आवश्यकता

विश्व बैंक के अनुसार, भारत में कृषि योग्य भूमि लगभग 60% के करीब है जो कि वैश्विक स्तर पर दूसरी सबसे बड़ी कृषि भूमि है। यद्यपि, भूमि सुधार की कार्यसूची अभी भी एक अधूरा व्यवसाय बना हुआ है क्योंकि भारत के 67% कृषि क्षेत्र सीमांत किसानों (< 1 हेक्टेयर) के पास है। इसके अतिरिक्त, भारत के केवल 5% किसान 32% भूमि पर नियंत्रण रखते हैं। यद्यपि सामान्यतः उपेक्षित, भारत की एक तिहाई मृदा में कार्बनिक पदार्थ 0.3% से 0.5% के महत्वपूर्ण स्तर तक कम हो गये हैं। इसके पश्चात, मृदा लवणता, मरुस्थलीकरण और मृदा अपरदन की पारंपरिक समस्याएं लगातार बनी रही हैं। अतः, भूमि रिकॉर्ड के आधुनिकीकरण और डिजिटलीकरण, छत-अधिशेष और बेकार भूमि के वितरण द्वारा भूमि सुधार की कार्यसूची में वृद्धि की आवश्यकता है। गैर-कृषि

रूफटॉप खेती/ऊर्ध्वाधर खेती

उपयोग के लिए प्रधान कृषि और वन भूमि के विभाजन को कम से कम रखा जाना चाहिए। एक राष्ट्रीय स्तर की भूमि सलाहकार सेवा लागू की जानी चाहिए। उदाहरणतः भूमि सुधारों के कार्यान्वयन के लिए पश्चिम बंगाल और केरल को अक्सर मॉडल राज्यों के रूप में उद्धृत किया जाता है। मरुस्थलीकरण के निवारण के प्राकृतिक उपायों में वनीकरण को प्रोत्साहन, कृषि में रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैविक उर्वरकों का प्रयोग, सिंचाई की नवीन एवं वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग, अवैध खनन गतिविधियों पर रोक, फसल चक्र को प्रभावी रूप से अपनाना इत्यादि शामिल हैं। इसी प्रकार से, चीन का ग्रेट ग्रीन वॉल कार्यक्रम गोबी मरुस्थल के मरुस्थलीकरण से लड़ने में अत्यधिक सफल रहा है। इसके अलावा, वर्षा और कृषि के लिए आवश्यक क्षेत्रीय असंतुलन को वर्षा जल संचयन और अनिवार्य जल पुनर्भरण के माध्यम से न्यूनतम किया जा सकता है।

प्रमुख कृषि आदानों की दक्षता बढ़ाना

प्रमुख कृषि आदानों (बीज, उर्वरक और कृषि यंत्र) की दक्षता में वृद्धि आवश्यक होनी चाहिए जिससे आत्मनिर्भरता सुनिश्चित हो सके। कृषि में बदलाव के लिए अच्छे बीज उत्प्रेरक हैं क्योंकि 20-25% कृषि उत्पादकता इस पर निर्भर करती है। हालांकि, भारत भारी मांग की वजह से निराशाजनक बीज प्रतिस्थापन अनुपात से ग्रस्त है। हाल ही में, उचित जागरूकता के बिना और विवेकपूर्ण नियामक ढांचे के अभाव में संकर बीजों के उद्भव ने भी आत्मनिर्भरता पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। उदाहरण के लिए जीएम सरसों DMH-11 पर विवाद। बीज उत्पादन एवं वितरण में निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित करने के साथ-साथ बीज क्षेत्र में नियामक संरचना में सुधार की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, बीजों के लिए मजबूत तृतीय पक्ष गुणवत्ता प्रमाणन प्रणाली को प्रोत्साहित करना, बीज और जर्मप्लाज्म बैंकों द्वारा संरक्षण और प्रजनन प्रयोजनों के साथ-साथ बीज सूचना प्रणाली की भी आवश्यकता है। सम्बन्धित विषयों के अध्ययन से पता चलता है कि तुमकुर (कर्नाटक), दतिया (मध्य प्रदेश) आदि में ग्रामीण स्तर के बीज बैंकों ने इन गांवों को बीज में आत्मनिर्भर बनाने में मदद की है। इन उपायों का पालन करके भारत एक महत्वपूर्ण बीज उत्पादक एवं दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ-साथ अफ्रीका के कई विकासशील देशों में बीज का एक बड़ा निर्यातक बन सकता है।

प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण उद्यम योजना का औपचारिकीकरण

भारत लगभग दो दशकों से उर्वरक पोषक तत्वों का शुद्ध आयातक रहा है। वित्त वर्ष 2022-23 में, भारत ने 19.27 मिलियन मीटरी टन के उर्वरक आयात किये। सूची में यूरिया (7.58 मिलियन मीटरी टन), एन.पी./एन.पी.के. (2.75 मिलियन मीटरी टन), डायअमोनियम फॉस्फेट (डीएपी, 6.58 मिलियन मीटरी टन) और म्यूरेट ऑफ पोटाश (एमओपी, 1.87 मिलियन मीटरी टन) है। इसके अलावा, यूरिया को पोषक तत्व आधारित सब्सिडी योजना से बाहर रखने के दुष्प्रभाव के कारण एन.पी.के. अनुपात वांछित 4:2:1 के स्थान पर 2:3.2:1 पाया गया। मृदा पोषक तत्व की गुणवत्ता के ह्रास के साथ-साथ शैवाल का फैलना एवं नेपाल, बांग्लादेश आदि के लिए सस्ते यूरिया की तस्करी की समस्या सामने आई है। चूँकि हमारे पास डीएपी और एमओपी का उत्पादन करने के लिए आवश्यक कच्चा माल नहीं है, अतः भारत के इन उर्वरकों के आयात पर निर्भर रहने की संभावना है। इस सन्दर्भ में उर्वरक सब्सिडी प्रणाली में बदलाव, उर्वरक निविष्ट में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने का सबसे अच्छा माध्यम है। प्रति हेक्टेयर आधार पर किसानों के खेतों की गणना कर उनके खातों में समकक्ष नकद जमा करना, उर्वरक की कीमतों को मुक्त करना एवं निजी क्षेत्र के संयंत्रों को प्रतिस्पर्धात्मक तरीके से यूरिया उत्पादन और विस्तार करने की अनुमति देना विश्वसनीय कदम हो सकता है। फर्टिगेशन के उपयोग से उर्वरक दक्षता और फसल उत्पादकता भी बेहतर हो सकती है। फसलों की ऐसी प्रजातियाँ विकसित की जानी चाहिए जिनकी पोषक तत्व उपयोग क्षमता अधिक हो, जिसके कारण उर्वरक पोषक तत्वों का उपयोग तथा आयात कम होगा।

फार्म मशीनरी का उपयोग खासकर ट्रैक्टर, कृषि श्रमिकों की उत्पादकता में बहुत अधिक वृद्धि कर सकता है। 1961- 62 में, हरित क्रांति से पहले, भारत ने केवल 880 ट्रैक्टर इकाइयों का उत्पादन किया, जो 2022-23 में लगभग 1,071,310 इकाइयों तक बढ़ गया, जिससे भारत विश्व में सबसे बड़ा ट्रैक्टर निर्माता बन गया। भारत ने वर्ष 2022-23 में लगभग 92,000 ट्रैक्टरों का निर्यात किया, जिनमें अधिकांश अफ्रीकी एवं दक्षिण पूर्वी एशियाई राष्ट्र देशों में निर्यात किये गये। सेवाएं इस प्रकार प्रदान की जानी चाहिए कि किसान बिना ट्रैक्टर को खरीदे कम दर पर किराए से इन सेवाओं का लाभ उठा सकें क्योंकि छोटे जमींदारों की अर्थव्यवस्था में ट्रैक्टर का मालिक होना एक उच्च लागत प्रस्ताव है जिसका पूरी तरह से उपयोग भी नहीं हो पाता। यद्यपि कृषि विज्ञान केन्द्रों का योगदान इनमे भली-भाँति रहा है, तथापि ट्रैक्टर सेवाओं के लिए एक अलग बाजार बनाकर इसे और अधिक कुशल बनाने की जरूरत है। उदाहरणार्थः किसानों को मशीनरी किराए पर देने वाले कस्टम हायरिंग केंद्रों (CHC) के लिए मध्यप्रदेश कृषि-मशीनीकरण एक प्रेरणा स्त्रोत के रूप में उभरा है, इसी तरह हर राज्य को इसे क्रियान्वित करना चाहिए।

कृषि व्यवसाय क्षेत्र में उद्यमिता को प्रोत्साहन

कृषि और कृषि व्यवसाय क्षेत्र में उद्यमिता को बढ़ावा दिया जाना चाहिए क्योंकि ग्रामीण आजीविका को बढ़ाने एवं जलवायु अनिश्चितताओं और पारंपरिक कृषि प्रथाओं के साथ जुड़ी लागत को कम करने के लिए कृषि तकनीक आधारित स्टार्ट-अप में अपार क्षमता है। इसे सक्षम बनाने के लिए, फसल प्रबंधन, पुनर्भुगतान, ग्रामीण बैंकों की दक्षता, एवं बुनियादी संरचनाओं के विकास को बढ़ावा देने के लिए आत्मनिर्भर भारत अभियान के भाग के रूप में वित्तीय ऋण/रियायती ऋण प्रदान किए जाने चाहिये।

कृषि उपज की गुणवत्ता में सुधार के लिए नवाचार

आईओटी/एनालिटिक्स/ब्लॉकचेन इन क्लाइमेट इंटेलिजेंस, फोरकास्टिंग सॉल्यूशंस, क्रॉप अवस्था की पहचान करने के लिए मशीन लर्निंग, फसल

MSME, किसान उत्पादक

बर्बादी को कम करने के लिए आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मृदा स्वास्थ्य निगरानी, प्लांट इमेज रिकाग्निशन, जियोस्पेशियल ट्रैकिंग और टिकाऊ पैंकिंग जैसी प्रौद्योगिकियों में उन्नति कृषि उपज की गुणवत्ता में सुधार कर सकती हैं। इसके अतिरिक्त, कोल्ड चेन और कटाई के बाद प्रबंधन की बुनियादी संरचना के लिए 1 लाख करोड़ भारतीय रुपये का एक कृषि बुनियादी संरचना कोष भी स्थापित किया गया है। यह कोष फसल उत्पादन के पूर्व एवं बाद की अवस्थाओं में फसलों के लिए कोल्ड चेन स्टोरेज और सप्लाई चेन प्रबंधन हेतु नवीन समाधानों के अवसर प्रस्तुत करता है। इसके अतिरिक्त, शहरी क्षेत्रों में जैविक उत्पादों की बढ़ती मांग और गुणवत्ता वाले भोजन के लिए प्रीमियम का भुगतान करने के लिए तैयार लोगों की मांग पूर्ण करने के लिये वर्ष 2020 में 10,000 करोड़ भारतीय रुपये की PMFME योजना बनाई गई है। जिसके अन्तर्गत माइक्रो फूड एंटरप्राइजेज, खाद्य मानकों को प्राप्त करने हेतु ब्रांडों के निर्माण, और खुदरा बाजारों के साथ एकीकृत होकर कार्य करेंगे। इससे भारत को अप्रयुक्त निर्यात बाजारों तक पहुंचने में मदद मिलेगी। यहाँ तक कि पशुपालन को भी सुधार के लिए लक्षित किया गया है, जिसमें वर्ष 2020 में आत्मनिर्भर भारत अभियान प्रोत्साहन पैकेज के अन्तर्गत 15000 करोड़ रुपये की पशुपालन अवसंरचना विकास निधि की स्थापना की गई है जिसे (i) डेयरी प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन अवसंरचना, (ii) मांस प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन अवसंरचना और (iii) पशु चारा संयंत्र की स्थापना हेतु व्यक्तिगत उद्यमियों, निजी कंपनियों, MSME, किसान उत्पादक संगठनों और धारा 8 कंपनियों द्वारा निवेश को बढ़ावा देने के लिए अनुमोदित किया गया है। इस अवसंरचना विकास कोष में मवेशी रोग प्रबंधन और बुद्धिमान पशुधन ट्रैकिंग में लक्षित नवाचारों के अवसर भी प्रस्तुत किए गए हैं। इसी क्रम में मछली उत्पादन में रोजगार, और निर्यात बढ़ाने के उद्देश्य से वर्ष 2020 में प्रधान मंत्री मत्स्य सम्पदा योजना (PMSSY) के अन्तर्गत मछुआरों के लिए अतिरिक्त 20,000 करोड़ भारतीय रुपये आवंटित किए गए हैं। इससे जल गुणवत्ता परीक्षण, जल उपचार, जलीय जीवों की कृत्रिम बुद्धिमता निगरानी के लिए नवाचारों पर कार्यरत नवोदित स्टार्ट-अप को विकसित होने में मदद मिलेगी। किसानों को राज्य की मंडियों तक सीमित रहने के बजाय-ट्रेडिंग प्लेटफॉर्म के माध्यम से अपनी पसंद की संस्थाओं को अपना उत्पाद सीधे बेचने की अनुमति देने वाला कैबिनेट का यह निर्णय परिदृश्य बदलने वाला एक परिवर्तनकारी कदम है। इससे अनुबंध खेती और अन्तर्राज्यीय व्यापार सक्षम हो पाएगा। हालांकि, व्यापक समृद्धि को सक्षम करने के लिए परिवहन, रसद एवं डिजिटल पहुंच और भुगतान के क्षेत्रों में सफलताओं की आवश्यकता है। इस प्रकार, कृषि को आकर्षित उद्यमी केंद्र बनाने के लिए खाद्य उत्पादन, वितरण और प्रबंधन अर्थात पूर्ण कृषि मूल्य श्रृंखला पर ध्यान देना चाहिए।

उपर्युक्त सुधारों के अलावा, गैर-परंपरागत कार्य सूची जिन्हें कम प्राथमिकता मिलती हैं, पर विचार किया जाना चाहिए। कृषि को मात्र गरीबों की आजीविका के दृष्टिकोण से देखने को हतोत्साहित किया जाना चाहिए एवं इसे अनंत अवसरों की गुंजाइश के रूप में देखा जाना चाहिए। शहरी खेती को बढ़ावा देने के पर्याय जैसे रूफटॉप खेती, ऊर्ध्वाधर खेती को भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। कृषि, संबद्ध और कृषि वानिकी में सर्वांगीण विकास लाने के लिए एक एकीकृत दृष्टिकोण तैयार करने और इसे लागू करने की आवश्यकता है। सरकार द्वारा कृषि बजट, कृषि नवाचार केन्द्रों की स्थापना जैसी पहल की श्रृंखला को लागू किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

वर्तमान मार्मिक स्थितियों से निपटने एवं वास्तव में भारत को एक आत्मनिर्भर देश बनाने के लिए कृषि क्षेत्र में बड़े पैमाने पर संरचनात्मक परिवर्तनों की आवश्यकता है जो एक संगठित, रणनीतिक एवं श्रेष्ठ वित्त पोषित दृष्टिकोण पर निर्भर हों। हालांकि, घोषित किए गए कुछ सुधार वास्तव में प्रशंसनीय हैं जिसमें आवश्यक वस्तु अधिनियम में संशोधन करना, एपीएमसी संरचना को बदलना, किसान को ग्राहक सक्षम करना, मूल्य श्रृंखला में निजी निवेश को सुविधाजनक बनाना इत्यादि शामिल हैं। भारत को उद्यमशीलता पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर अव्यवस्थित ज्ञान प्रवाह की चुनौतियों पर ध्यान देना चाहिए। इस तरह का कार्य जमीनी चुनौतियों की पहचान करने और तदनुसार समाधान विकसित करने के लिए एक उपयोगकर्ता केंद्रित दृष्टिकोण पैदा करेगा। कृषि आधारित आत्मनिर्भर दृष्टिकोण को ''स्थानीय के लिए मुखर'' अवधारणा से सम्प्रेषित होकर संस्थागत बनाना चाहिए, प्रकृति में अत्यधिक सहयोगी होना चाहिए, सभी उपलब्ध संसाधनों का लाभ उठाना चाहिए एवं राष्ट्रीय से वैश्विक घटक को शामिल करना चाहिए। चूंकि अनुसंधान और विकास आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था को गति देने में एक महत्वपूर्ण कड़ी है, कृषि क्षेत्र में सार्वजनिक-निजी अनुसंधान सहयोग में वृद्धि एक महत्वपूर्ण कदम होगा। यदि उपयुक्त रूप से पोषित किया जाए, तो ऐसे गठजोड़ से बहु-राष्ट्रीय निगमों पर नवाचार के लिए भारत की निर्भरता कम हो जाएगी और इसलिए, हमारे उत्पाद वैश्विक बाजार के लिए अधिक उपयुक्त हो जाएंगे। कृषि में प्रौद्योगिकी के उपयोग, संरचनात्मक सुधार, कृषि विपणन, गुणवत्तापूर्ण निविष्ट, निर्यात में आसानी, फसल कटाई के बाद होने वाले नुकसानों को कम करना कृषि क्षेत्र को बड़े पैमाने पर सफल बनाने के सार्थक प्रयास हैं। समय पर डिलीवरी के अधीन प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण पद्धति को अपनाना, विस्तार सेवाओं का कार्यान्वयन, सुविधा क्रेडिट एवं अन्य आवश्यकता उद्यम, कुछ महत्वपूर्ण कड़ियाँ हैं जो आत्मनिर्भर भारत के निर्माण साधन के रूप में कृषि को आकार देने हेतु बहुमूल्य प्रयास होंगे। ये प्रयास कृषकों को उत्पादक एवं उद्यमी के रूप में कार्य करने के लिए अभ्यस्त कराने हेतु निश्चय ही सार्थक सिद्ध होंगे। कई अर्थशास्त्रियों, जैसे टी. डब्ल्यू. शुल्ट, जॉन डब्ल्यू, मेलोर, वाल्टर ए. लुईस एवं अन्य ने यह साबित किया है कि कृषि एवं कृषक आर्थिक विकास के अग्रदूत हैं। अतः निश्चित ही कृषि में आत्मनिर्भर बनकर आत्मनिर्भर भारत की कल्पना को साकार किया जा सकता है।

''कृषि हमारा सबसे बुद्धिमानी भरा प्रयास है, क्योंकि यह अंततः वास्तविक संपत्ति, अच्छे नैतिक मूल्यों, और खुशी में सबसे अधिक योगदान देगा।'' - थॉमस जेफरसन

संपर्क करें:
डॉ. ऋचा पाण्डेय
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
रुड़की।

डॉ. चन्द्र प्रकाश

भारत की कृषि और आर्थिक स्थिरता के लिए व्यापक जल प्रबंधन रणनीतियाँ

भविष्य की पीढ़ियों के लिए स्वच्छ जल संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए वैज्ञानिक जल प्रबंधन अत्यधिक आवश्यक है। कृषि विस्तार तथा शहरीकरण और औद्योगिक विकास के कारण जल की बढ़ती मांग के कारण सतही और भूजल दोनों संसाधनों का अत्यधिक दोहन हुआ है, जिससे भूजल स्तर में कमी और जल गुणवत्ता का ह्रास हुआ है। जलभराव, लवणता, समुद्री जल के अन्तर्वेधन, आर्द्रभूमि के शुष्कीकरण, और निम्न धारा प्रवाह जैसे पर्यावरणीय मुद्दे इन चुनौतियों में वृद्धि करते हैं। जलवायु परिवर्तन और चरम मौसम की नियमित घटनाओं के कारण इन समस्याओं के समाधान के लिए अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। जिसके लिए, भूजल निष्कर्षण को विनियमित करना, कृत्रिम पुनर्भरण को बढ़ावा देना और वर्षा जल संचयन और उन्नत उपचार विधियों का उपयोग आवश्यक है।

किसी भी सभ्यता के विकास के लिए जल आवश्यक है। जबकि वैश्विक मीठे जल की उपलब्धता स्थिर बनी हुई है, जलविज्ञानीय संतुलन में बदलाव, अतिदोहन और प्रदूषण के कारण क्षेत्रीय आपूर्ति निरंतर घट रही है। कई विकासशील देश पहले से ही जल की भारी कमी का सामना कर रहे हैं। ये कमियाँ खाद्य उत्पादन, पारिस्थितिकी तंत्र संरक्षण और स्वास्थ्य, सामाजिक स्थिरता और शांति बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण चुनौतियां पेश करती हैं, इस क्षेत्र में भारत भी कोई अपवाद नहीं है। कृषि, नगरपालिका सेवाओं, उद्योग और पर्यावरण जैसे क्षेत्रों में जल अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उपरोक्त सभी क्षेत्रों में से कृषि के लिए सबसे अधिक जल की आवश्यकता होती है। प्रेस सूचना ब्यूरो की एक रिपोर्ट के अनुसार, उच्च मांग परिदृश्यों के तहत 2025 तक सिंचाई के लिए उपलब्ध जल का 72.48% उपयोग अनुमानित है। भारत का शुद्ध सिंचित क्षेत्र 1950-51 में 20.85 मिलियन हेक्टेयर से बढ़कर 2022-23 तक 77 मिलियन हेक्टेयर हो गया है। इसी अवधि के दौरान, खाद्यान्न उत्पादन 50 मीट्रिक टन से बढ़कर 329.68 मीट्रिक टन हो गया है, जो सिंचाई विकास में निवेश से प्रेरित है, विशेषतः वित्तीय वर्ष 2022-23 में, नलकूपों ने भारत में 36 मिलियन हेक्टेयर से अधिक शुद्ध क्षेत्रों को सिंचित किया है। इसके बाद नहरों का निर्माण किया गया जो 19 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचित करती हैं। वर्तमान दशकों में, जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, खाद्य उत्पादन में वृद्धि और औद्योगिक विस्तार के कारण भारत की जल की मांग में वृद्धि हुई है, जिसके कारण भूजल का अत्यधिक दोहन, गुणवत्ता में गिरावट और प्रदूषण बढ़ गया है। मीठे जल के संसाधनों को औद्योगिक और नगरीय अपशिष्टों से खतरा बढ़ रहा है। स्वतंत्रता के समय, भारत की प्रति व्यक्ति मीठे जल की उपलब्धता 6008 वर्ग मीटर/वर्ष थी। जिसमें 1997 तक, लगभग 2200 वर्ग मीटर/वर्ष तक कमी हो गई। जल की यह उपलब्धता 2001 में घटकर 1816 वर्ग मी./वर्ष, 2011 में 1545 वर्ग मी./वर्ष एवं 2021 में 1486 वर्ग मी./वर्ष हो गयी थी। वर्ष 2031 एवं 2050 में इस उपलब्धता का क्रमशः 1367 वर्ग मी./वर्ष और 1140 वर्ग मी./वर्ष तक होना अनुमानित है। भारत के 20 प्रमुख नदी बेसिनों में से छह में पहले से ही प्रति व्यक्ति स्वच्छ जल की उपलब्धता क्रमशः 1000 वर्ग मीटर/वर्ष से कम है। भारत में जल संबंधी चुनौतियां जटिल हैं और इन उभरते मुद्दों के समाधान के लिए व्यापक विश्लेषण और प्रबंधन की आवश्यकता है।

भारत के जल संसाधन

भारत में उपलब्ध सतही जल संसाधन, विश्व के 2.45% सतही क्षेत्र को कवर करते हैं जो वैश्विक जल संसाधनों का 4% है और विश्व की 17% जनसंख्या की जल संबंधी मांगों की पूर्ति करते हैं। इसके बावजूद, जल

वितरण की असमानता तथा जलवायु परिवर्तन में वृद्धि के कारण प्रभावी जल प्रबंधन और संरक्षण की आवश्यकता है। देश में 1180 मिमी माध्य वार्षिक वर्षा होती है, जो असमान वितरण के कारण कृषि के क्षेत्र में चुनौतियां खड़ी करती है। भारत के कुल जल संसाधनों के 4,000 बिलियन घन मी. (BCM) में से केवल 1123 बिलियन घन मीटर (690 बिलियन घन मीटर सतही जल और 433 बिलियन घन मीटर भूजल) उपयोग के योग्य हैं। सतही जल स्रोतों में नदियां, झीलें, तालाब और टैंक सम्मिलित हैं। भारत की सभी नदी घाटियों में प्रवाहित होने वाली नदियों एवं सहायक नदियों का अनुमानित औसत वार्षिक प्रवाह 1,869 किमी^{3} है। वर्ष 2050 तक, जल की औसत मांग 1447 बिलियन घन मीटर तक पहुंचने का अनुमान है, जो वर्तमान उपयोगी जल संसाधनों से 324 बिलियन घन मीटर अधिक है। कृषि, उद्योग, ऊर्जा और नगरपालिकाओं की निरन्तर बढ़ती मांगें, बेहतर जल प्रबंधन की आवश्यकता को दर्शाती हैं, जिसमें मुख्य हैं:

1. वर्षा द्वारा सिंचित और जलभराव वाले क्षेत्रों की उत्पादकता में वृद्धि।
2. सिंचित क्षेत्रों में सतही और भूजल का कुशल संयुग्मी उपयोग।
3. कृषि में ग्रेवाटर का सतत उपयोग।

भूजल दोहन

भूजल संसाधन

भूजल भारत की अर्थव्यवस्था के विकास के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है, परन्तु अनियमित निष्कर्षण के कारण हरियाणा, पंजाब और राजस्थान जैसे क्षेत्रों में, जहां निष्कर्षण की मात्रा पुनः पूरण से अधिक है, इसका अतिशय प्रयोग हुआ है। भारत में उपलब्ध वार्षिक पुनःपूरण योग्य भूजल संसाधन 433 बिलियन घन मीटर एवं शुद्ध वार्षिक भूजल उपलब्धता 399 बिलियन घन मीटर है। जिसमें से 245 बीसीएम जल सिंचाई के लिए उपयोग किया जाता है, जो शुद्ध उपलब्ध जल का 62% है। भूजल पुनर्भरण क्षेत्रीय रूप से भिन्न होता है, पूर्वी भारत में उच्चतम पुनर्भरण होता है लेकिन यहां विकास स्तर सबसे कम (40.7%) है। राष्ट्रीय स्तर पर, भूजल विकास 63.3% है। 2005 और 2020 की अवधि में, उत्तरी और पूर्वी भारत में उपयोगी भूजल में तेजी से कमी पाई गई, जिससे क्रमशः 8.5 किमी/वर्ष और 5 किमी/वर्ष की हानि हुई। भारत में 85% से अधिक भूजल का उपयोग गैर-मानसून महीनों के दौरान सिंचाई के लिए किया जाता है। वर्तमान में, भारत के 3% ब्लॉक गंभीर और 11% अर्ध-गंभीर चरण में हैं। वृहत्त पैमाने पर भूजल की निरंतर कमी भविष्य की खाद्य सुरक्षा को खतरे में डाल सकती है, गर्मियों में सूखे के कारण भूजल के प्रभावित होने और 2050 तक सभी मौसमों के संभावित रूप से प्रभावित होने का अनुमान है।

भारत में जल प्रबंधन में चुनौतियाँ

वर्षा आधारित कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र की चुनौतियाँ

भारत के वर्षा आधारित कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र में वर्षा आधारित कृषि के अन्तर्गत 72 मिलियन हैक्टेअर कृषि भूमि के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों में महत्वपूर्ण जल प्रबंधन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इसमें भी कम कृषि उत्पादकता वाले सूखा-प्रभावित और बाढ़-प्रभावित दोनों क्षेत्र शामिल हैं। लगभग 33% वर्षा आधारित क्षेत्रों में 1100 मिमी से अधिक वर्षा होती है, जबकि अन्य 33% क्षेत्रों में 750-1100 मिमी वर्षा होती है, जो जल की उपलब्धता की स्थानिक और कालिक विविधता को दर्शाता है।

एकीकृत जल प्रबंधन

बाढ़ और सूखे की स्थानिक और कालिक विविधता

वर्ष 2000 और 2020 के बीच भारत में बाढ़ और सूखे के कारण 51% प्राकृतिक आपदाएं और 76% हानि हुई है। दक्षिण-पश्चिम मानसून (जून-अक्टूबर) द्वारा वार्षिक वर्षा का 70% से अधिक जल प्राप्त होता है, जिससे सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र जैसी बड़ी नदी घाटियों में विनाशकारी बाढ़ आ जाती है। लगभग 43% जनसंख्या आवर्ती बाढ़ से ग्रस्त है, जबकि सूखे से भी प्रतिवर्ष एक विशाल भू-भाग प्रभावित होता है, जिससे ग्रामीण क्षेत्र वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर होते हैं। बिहार और असम में बाढ़ के कारण एक विशाल भू-भाग में निवास करने वाले जनमानस प्रभावित होते हैं, जबकि गुजरात और राजस्थान में सूखे की विभीषिका में कमी पाई गई है, जो 2000 के दशक के प्रारम्भ में 35% से अधिक से घटकर 2015 में 5% से कम हो गई है।

फसल उत्पादन में उच्च स्थानिक भिन्नता

वर्ष 2022-23 में भारत ने 329.68 मीट्रिक टन खाद्यान्न का उत्पादन किया, जिसमें पूर्वी क्षेत्र का राष्ट्रीय उत्पादन में 29.6% का योगदान रहा। फसल उत्पादकता देशभर में व्यापक रूप से भिन्न होती है उदाहरणतः पंजाब (4.2 टन/हेक्टेयर), हरियाणा (3.3 टन/हेक्टेयर), आंध्र प्रदेश (2.7 टन/हेक्टेयर), असम (1.5 टन/हेक्टेयर), बिहार (1.7 टन/हेक्टेयर), और छत्तीसगढ़ (1.0 टन/हेक्टेयर)। कुशल सिंचाई प्रबंधन इस उत्पादकता के अंतर को दूर करने में सहायता कर सकता है। भारत में 11.6 मिलियन हैक्टेअर खारे और जलभराव वाले क्षेत्र हैं, जो सिंचित क्षेत्रों में खराब जल निकासी के कारण उत्पन्न होते हैं। इनमें से 2.16 मिलियन हैक्टेअर क्षेत्र अधिक सिंचाई के कारण जल स्तर में वृद्धि से प्रभावित है। शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में, जलभराव से मृदा की लवणता में वृद्धि होती है, जिससे कृषि उत्पादकता और कम हो जाती है। पूर्वी भारत में उच्च वर्षा और विशिष्ट स्थलाकृति के कारण, अत्यधिक

जलभराव वाले क्षेत्र पाये हैं, जिनके प्रभावी प्रबंधन के लिए तकनीकी हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

सिंचित कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र की चुनौतियाँ

राष्ट्रीय स्तर पर सिंचित क्षेत्र के विस्तार में स्थानिक असमानता के कारण, 49.2% कृषि योग्य भूमि सिंचित है, जिसमें पंजाब (98.6%) और हरियाणा (91.4%) प्रमुख राज्य हैं। पूर्वी भारत 47.7% सिंचित क्षेत्र के साथ काफी पीछे है। सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि किये जाने के लिए देश के पूर्वी भाग में अधिक सिंचाई बुनियादी ढांचा तैयार करने की आवश्यकता है। विकसित देशों की 50-60% सिंचाई क्षमता की तुलना में भारत की सिंचाई क्षमता 38% कम है। इसका तात्पर्य है कि प्रति यूनिट फसल उत्पादन में अधिक जल का उपयोग किया जाता है, जो बेहतर सिंचाई प्रौद्योगिकियों की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है।

भूजल विकास में क्षेत्रीय असमानता

देश में माध्य भूजल विकास राष्ट्रीय स्तर पर 63.3% है, जबकि पूर्वी (40.7%) और उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों (2.4%) में इसका मान कम है। असम (11%), बिहार (46%), छत्तीसगढ़ (44%), झारखंड (28%), ओडिशा (42%), पश्चिम बंगाल (45%), और पूर्वी उत्तर प्रदेश (69%) का भूजल विकास प्रतिशत, दक्षिणी (64.6%), उत्तरी (94.3%), और पश्चिमी (84.7%) क्षेत्रों की तुलना में काफी कम है।

गिरता भूजल स्तर

देश में स्वतन्त्रता के बाद से सिंचाई के लिए भूमि से निष्कासित जल के उपयोग में वृद्धि हुई है। क्षेत्र में 89% भूजल का उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है। 2007 से 2020 तक, भूजल स्तर में 61% की गिरावट आई है। उत्तर-पश्चिमी भारत में भूजल में सबसे गंभीर गिरावट पाई गई है, जिसमें 17% मूल्यांकन इकाइयों को 'अति-दोहित' और 5% को 'गंभीर' के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

सूक्ष्म सिंचाई के प्रसार में स्थानिक विविधता

सूक्ष्म सिंचाई में भारत की सिंचित भूमि का केवल 19% भाग सम्मिलित है, जिसमें महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक और गुजरात के अंतर्गत 85% भागों में ड्रिप सिंचाई द्वारा कृषि भूमि को सिंचित किया जाता है। देश का पूर्वी भू-भाग काफी पिछड़ा हुआ है, जिसमें केवल 1.82% क्षेत्रों में ड्रिप सिंचाई और 10.39% क्षेत्रों में स्प्रिंकलर सिंचाई का प्रयोग किया जाता हैं।

खराब भूजल गुणवत्ता

भूजल गुणवत्ता के मुद्दे, जैसे कि लवणता और भूजनित तत्वों के साथ संदूषण, भूजल की खराब गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। उच्च फ्लोराइड का स्तर 13 राज्यों को प्रभावित करता है, आर्सेनिक संदूषण पश्चिम बंगाल में गंभीर स्थिति में है, और लौह संदूषण पूर्वोत्तर राज्यों और ओडिशा में व्यापक स्तर पर पाया जाता है। नाइट्रोजन उर्वरक के अत्यधिक उपयोग ने भूजल में नाइट्रेट संदूषण को जन्म दिया है, जो जनमानस के स्वास्थ्य के लिए जोखिम पैदा कर रहा है।

भारत में उपलब्ध सतही जल संसाधन, विश्व के 2.45% सतही क्षेत्र को कवर करते हैं जो वैश्विक जल संसाधनों का 4% हैं और विश्व की 17% जनसंख्या की जल संबंधी मांगों की पूर्ति करते हैं। इसके बावजूद, जल वितरण की असमानता तथा जलवायु परिवर्तन में वृद्धि के कारण प्रभावी जल प्रबंधन और संरक्षण की आवश्यकता है। देश में 1180 मिमी माध्य वार्षिक वर्षा होती है, जो असमान वितरण के कारण कृषि के क्षेत्र में चुनौतियां खड़ी करती हैं। भारत के कुल जल संसाधनों के 4,000 बिलियन घन मी. (BCM) में से केवल 1123 बिलियन घन मीटर (690 बिलियन घन मीटर सतही जल और 433 बिलियन घन मीटर भूजल) उपयोग के योग्य हैं। सतही जल स्रोतों में नदियां, झीलें, तालाब और टैंक सम्मिलित हैं। भारत की सभी नदी घाटियों में प्रवाहित होने वाली नदियों एवं सहायक नदियों का अनुमानित औसत वार्षिक प्रवाह 1,869 किमी^{3} है। वर्ष 2050 तक, जल की औसत मांग 1447 बिलियन घन मीटर तक पहुंचने का अनुमान है, जो वर्तमान उपयोगी जल संसाधनों से 324 बिलियन घन मीटर अधिक है। कृषि, उद्योग, ऊर्जा और नगरपालिकाओं की निरन्तर बढ़ती मांगें, बेहतर जल प्रबंधन की आवश्यकता को दर्शाती हैं।

बाढ़ एवं सूखा प्रभावित क्षेत्र

नहर के पानी का सिंचाई में कुशल उपयोग

सिंचित कृषि-पारिस्थितिक तंत्र में जल प्रबंधन के लिए रणनीतियाँ

भूजल उपयोग और प्रबंधन

1. सतत भूजल स्तर को संतुलित करना

भूजल निकासी के विनियमन को सुनिश्चित करने के लिये नियमों को लागू करना जिससे भूजल निकासी पुनर्भरण दरों से अधिक न हो। भूजल स्तर को संतुलित करने के लिए निकासी के उपयुक्त तरीकों को अभिकल्पित किया जाना चाहिए।

2. सौर पंपों पर सब्सिडी देनाः भूजल निष्कर्षण से जुड़ी लागत और पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के लिये सौर पंपों के उपयोग को प्रोत्साहित करना, विशेष रूप से कम शुल्क एवं उच्च मूल्य वाली फसलों के लिये फ़ायदेमंद रहेगा।

3. पुनर्भरण पद्धतियों को बढ़ानाः कृत्रिम भूजल पुनर्भरण के लिए कठोर चट्टान जलभृतों में फ्रैक्चर का दोहन करने वाले कुओं के उपयोग को बढ़ावा देना चाहिए। संभावित क्षेत्रों की पहचान करने के लिए प्रतिरोधकता सर्वेक्षण किया जाना आवश्यक है।

4. जल विभाजक प्रबंधन संरचनाएंः कठोर चट्टानी जलदायक क्षेत्रों में भूजल पुनर्भरण को बढ़ाने के लिए अंतःस्त्रवण टैंक, चेक डैम और फील्ड बंड का निर्माण किया जाना चाहिए।

5. भूजल संदूषण को प्रतिबंधित करनाः दूषित जलभृतों के जल के उपयोग से बचाव हेतु आर्सेनिक द्वारा प्रदूषित जलभृतों के दोहन से दूर रहना और वर्षा जल संचयन में वृद्धि करना आवश्यक है।

6. सयुग्मी उपयोगः संदूषण प्रभावों को कम करने के लिए सतही जल और भूजल का संयुग्मी उपयोग किया जाना चाहिए।

7. भूजल प्रदूषण के उपचार के तरीकेः भूजल से आर्सेनिक, फ्लोराइड और लोहे जैसे प्रदूषित पदार्थों को दूर करने के लिए सोखना, आयन एक्सचेंज, जमावट और झिल्ली तकनीकों का उपयोग किया जाना चाहिए।

नहर के जल का कुशल उपयोग

1. जल प्रयोक्ता संघों (WUAs) का सुदृढ़ीकरण

सिंचाई प्रणालियों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने, सदस्यों के लिये समय पर और किफायती इनपुट सुनिश्चित करने तथा फसल विविधीकरण एवं मूल्यवर्धन के लिये बाज़ार अवसंरचना विकसित करने हेतु जल प्रयोक्ता संघों की क्षमता में वृद्धि किया जाना आवश्यक है।

2. नहर जल वितरण का अनुकूलन

चक्रानुक्रमानुसार जल वितरणः फसल जल की मांग से मेल खाने के लिए चक्रानुक्रमानुसार वितरण कार्यक्रम के अनुप्रयोग द्वारा निरंतर वितरण प्रणालियों की तुलना में पर्याप्त मात्रा में जल की बचत होती है।

द्वितीयक भंडारण जलाशयः अतिरिक्त वर्षा जल और सिंचाई अपवाह को संग्रहीत करने के लिए द्वितीयक जलाशयों के निर्माण द्वारा शुष्क मौसम के दौरान जल की उपलब्धता को अनुकूलित किया जा सकता है।

भूजल भारत की अर्थव्यवस्था के विकास के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है, परन्तु अनियमित निष्कर्षण के कारण हरियाणा, पंजाब और राजस्थान जैसे क्षेत्रों में, जहां निष्कर्षण की मात्रा पुनः पूरण से अधिक है, इसका अतिशय प्रयोग हुआ है। भारत में उपलब्ध वार्षिक पुनःपूरण योग्य भूजल संसाधन 433 बिलियन घन मीटर एवं शुद्ध वार्षिक भूजल उपलब्धता 399 बिलियन घन मीटर है, जिसमें से 245 बीसीएम जल सिंचाई के लिए उपयोग किया जाता है, जो शुद्ध वार्षिक उपलब्ध जल का 62% है। भूजल पुनर्भरण क्षेत्रीय रूप से भिन्न होता है, पूर्वी भारत में उच्चतम पुनर्भरण होता है लेकिन यहां विकास स्तर सबसे कम (40.7%) है। राष्ट्रीय स्तर पर, भूजल विकास 63.3% है। 2005 और 2020 की अवधि में, उत्तरी और पूर्वी भारत में उपयोगी भूजल में तेजी से कमी पाई गई, जिससे क्रमशः 8.5 किमी^{3}/वर्ष और 5 किमी^{3}/वर्ष की हानि हुई। भारत में 85% से अधिक भूजल का उपयोग गैर-मानसून महीनों के दौरान सिंचाई के लिए किया जाता है। वर्तमान में, भारत के 3% ब्लॉक गंभीर और 11% अर्ध-गंभीर चरण में हैं। वृहत्त पैमाने पर भूजल की निरंतर कमी भविष्य की खाद्य सुरक्षा को खतरे में डाल सकती है, गर्मियों में सूखे के कारण भूजल के प्रभावित होने और 2050 तक सभी मौसमों के संभावित रूप से प्रभावित होने का अनुमान है।

स्प्रिंकलर (फुहार) सिंचाई प्रणाली का उपयोग

3. बेहतर जल वितरण की तकनीकें

वाराबंदी प्रणालीः इस अवधि में एक निश्चित चक्रानुसार किसानों के मध्य समान रूप से जल वितरित करके यह सुनिश्चित किया जाता है कि प्रत्येक किसान को प्रति यूनिट क्षेत्र में समान सिंचाई जल प्राप्त हो सके।

माध्यम से उर्वरकों का उपयोग करने के लिए फर्टिगेशन के उपयोग द्वारा पोषक तत्वों की अवशोषण दर में वृद्धि की जा सकती है और अपवाह और लीचिंग को कम कर सकते हैं। इस पद्धति के उपयोग द्वारा उपज में काफी सुधार प्राप्त हुआ है, जैसे कि टमाटर की पैदावार में 71% की वृद्धि प्राप्त हुई है।

सुधार दर्शाया है। उदाहरण के लिए, केले की फसलों में स्वचालित ड्रिप सिंचाई के परिणामस्वरूप मैनुअल सिंचाई प्रणालियों की तुलना में उच्च पैदावार और बेहतर जल उत्पादकता पाई गयी है।

निष्कर्ष

भविष्य की पीढ़ियों के लिए स्वच्छ जल संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित

कार्यान्वित करके सतही जल उपयोग में सुधार किया जा सकता है। द्वितीयक जलाशयों के विकास से जल की उपलब्धता में वृद्धि हो सकती है।

ड्रिप और स्प्रिंकलर सिस्टम, ड्रिप फर्टिगेशन, और आंशिक जड़ क्षेत्र को शुष्क बनाने जैसी उन्नत सिंचाई तकनीकें, जल और पोषक तत्वों के उपयोग को अनुकूलित करती हैं, जिससे दक्षता और फसल की पैदावार में वृद्धि होती है। सेंसर-आधारित स्वचालित सिंचाई प्रणाली के उपयोग द्वारा जल उपयोग दक्षता में अधिक वृद्धि हुई है।

क्षेत्रीय असमानताओं को संबोधित करने में पूर्वी क्षेत्र में भूजल विकास और पश्चिमी क्षेत्र में पुनर्भरण पर ध्यान केंद्रित करना शामिल है। उपयुक्त तकनीकों के साथ जलभराव और बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों के प्रबंधन द्वारा कृषि पर नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है। इन कार्यनीतियों को लागू करने से सिंचित कृषि-पारिस्थितिक तंत्र के जल प्रबंधन में काफी सुधार किया जा सकता है। सतत भूजल निष्कर्षण, कुशल नहर जल उपयोग, दबावयुक्त सिंचाई प्रणालियों के व्यापक उपयोग और सेंसर-आधारित सिंचाई जैसी उन्नत तकनीकों के उपयोग द्वारा जल उपयोग दक्षता में वृद्धि की जा सकती है। इसके अतिरिक्त इन तकनीकों से फसल की पैदावार में सुधार किया जा सकता है और कृषि में जल संसाधनों की दीर्घकालिक स्थिरता को सुनिश्चित किया जा सकता है।

सपंर्क करें:

डॉ. चन्द्र प्रकाश

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,

रुड़की।

ड्रिप सिंचाई के माध्यम से कृषि के क्षेत्र में वृद्धि

भूतल से उच्च या निम्न तलीय सिंचाई प्रणालीः उपलब्ध जल के उपयोग को अनुकूलित करने और फसल की पैदावार में सुधार लाने के लिये जलभराव वाले क्षेत्रों में भूतल से उच्च या निम्न तलीय क्यारियों को लागू किया जा सकता है।

दबावयुक्त सिंचाई प्रणाली

1. ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई को अपनानाः

ड्रिप एवं स्प्रिंकलर विधि को अपनाने के लिये सब्सिडीः ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई प्रणालियों के उपयोग को बढ़ावा देने के लिये सरकारी सब्सिडी प्रदान की जानी चाहिए जिसमें उच्च अनुप्रयोग क्षमता, जल की बचत, पैदावार में वृद्धि और कम श्रम और ऊर्जा लागत जैसे कई लाभ प्राप्त होते हैं।

2. ड्रिप फर्टिगेशन

पोषक तत्व दक्षताः ड्रिप सिंचाई के

3. आंशिक जड़ क्षेत्रों को शुष्क बनाना

जल उपयोग दक्षता में सुधारः विशेष रूप से बागवानी फसलों के लिए उपयुक्त, जड़ क्षेत्र के विभिन्न भागों के मध्य बारी-बारी से सिंचाई करके जल के उपयोग को अनुकूलित करने के लिए जल उपयोग दक्षता में सुधार आवश्यक है।

4. सेंसर आधारित सिंचाई परिशुद्धता के लिए स्वचालन

वास्तविक समय जल अनुप्रयोगः वास्तविक समय में मिट्टी की आर्द्रता के स्तर के आधार पर उपयुक्त जल अनुप्रयोग प्रदान करने के लिए मिट्टी की आर्द्रता मापने वाले सेंसर के साथ स्वचालित सिंचाई प्रणालियों का उपयोग किया जाना चाहिए। यह तकनीक जल उपयोग दक्षता को बढ़ाती है और फसल की पैदावार में सुधार करती है।

अनुसंधान और कार्यान्वयनः अध्ययनों ने सेंसर-आधारित सिंचाई प्रणालियों के साथ महत्वपूर्ण जल बचत और उपज में

करने के लिए वैज्ञानिक जल प्रबंधन अत्यधिक आवश्यक है। कृषि विस्तार तथा शहरीकरण और औद्योगिक विकास के कारण जल की बढ़ती मांग के कारण सतही और भूजल दोनों संसाधनों का अत्यधिक दोहन हुआ है, जिससे भूजल स्तर में कमी और जल गुणवत्ता का ह्रास हुआ है। जलभराव, लवणता, समुद्री जल के अन्तर्वेधन, आर्द्रभूमि के शुष्कीकरण, और निम्न धारा प्रवाह जैसे पर्यावरणीय मुद्दे इन चुनौतियों में वृद्धि करते हैं। जलवायु परिवर्तन और लगातार चरम मौसम की घटनाओं के कारण अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए, भूजल निष्कर्षण को विनियमित करना, कृत्रिम पुनर्भरण को बढ़ावा देना और वर्षा जल संचयन और उन्नत उपचार विधियों का उपयोग आवश्यक है। जल प्रयोक्ता संघों को सुदृढ़ बनाकर और चक्रीय जल आपूर्ति अनुसूचियों को

पूनम पाण्डेय

महिला सशक्तिकरण: कृषि उद्यमिता व तकनीकी क्षेत्र में महिलाओं का योगदान

भारत सरकार ने किसानों सहित ग्रामीण समाज की आजीविका में सुधार और प्रति व्यक्ति आमदनी में वृद्धि के लिए कृषि उद्यमिता के विकास को एक प्रमुख रणनीतिक क्षेत्र माना है। इसके लिए गहन प्रयास भी जारी हैं। विगत कुछ वर्षों के दौरान कृषि अपने परंपरागत 'खेत खलिहान' के दायरे से आगे निकलकर व्यवसाय और उद्यम के क्षेत्र में प्रवेश कर गई है। कृषि में उद्यमिता के विकास से सामान्य कृषक को 'उत्पादक' से 'उद्यमी' बनने का अवसर प्राप्त हुआ है। साथ ही, तकनीकी रूप से कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्ति भी अपने नए विचारों के माध्यम से लीक से हटकर कृषि उद्यम स्थापित कर रहे हैं। यह निःसंदेह कृषि क्षेत्र में उद्यमिता की अपार सम्भावनाओं को दर्शाता है।

देश के कुल कार्य बल का 54.6 प्रतिशत भाग कृषि क्षेत्र में कार्यरत है। अर्थात देश की आधी आबादी को कृषि क्षेत्र से रोजगार प्राप्त होता है। नाबार्ड द्वारा प्रकाशित एक शोध पत्र के अनुसार भारत में 22 करोड़ लोग आज भी गरीबी रेखा से नीचे हैं। देश की आबादी लगातार बढ़ रही है और कृषि ही लोगों के रोजगार का सबसे बड़ा स्रोत है। दूसरी तरफ कृषि क्षेत्र में न्यून और अनिश्चित आय नीति निर्धारकों के लिए चुनौती भी है। कृषि उद्यमशीलता एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा कृषि के क्षेत्र में उद्यमिता की संभावना को अवसर में परिवर्तित किया जा सकता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में उद्यमिता के पदचिन्ह सैकड़ों वर्षों से मौजूद हैं। लेकिन मांग और आपूर्ति का दायरा बहुत सीमित होने के कारण यह क्षेत्र अधूरा ही रहा है।

आज भारतीय कृषि का चेहरा और प्रकृति दोनों तेजी से बदल रहे हैं। कृषि क्षेत्र में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में योगदान के साथ-साथ बड़ी संख्या में लोगों को प्रत्यक्ष रोजगार प्रदान करने की अपार क्षमता है। कृषि समाज के कमजोर वर्ग को भी आजीविका प्रदान करती है। आज हम कृषि एवं उससे संबंधित क्षेत्रों में उत्पादन और उत्पादकता की दृष्टि से दिन-प्रतिदिन मजबूत स्थिति में पहुंच रहे हैं। वित्तीय वर्ष 2021-22 के लिए कृषि उत्पाद का निर्यात 50 बिलियन डालर को पार कर गया था। यह कृषि उत्पाद के क्षेत्र में अब तक का सबसे अधिक निर्यात है। वाणिज्यिक आसूचना (Intelligence) एवं सांख्यिकी महानिदेशालय द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार 2021-22 के दौरान कृषि निर्यात 19.92% से बढ़कर 50.21 बिलियन डालर हो गया। जो एक शानदार वृद्धि दर है। भारत सरकार ने किसानों सहित ग्रामीण समाज की आजीविका में सुधार और प्रति व्यक्ति आमदनी में वृद्धि के लिए कृषि उद्यमिता के विकास को एक प्रमुख रणनीतिक क्षेत्र माना है। इसके लिए गहन प्रयास भी जारी हैं। विगत कुछ वर्षों के दौरान कृषि अपने परंपरागत 'खेत खलिहान' के दायरे से आगे निकलकर व्यवसाय और उद्यम के क्षेत्र में प्रवेश कर गई है। कृषि में उद्यमिता के विकास से सामान्य कृषक को 'उत्पादक' से 'उद्यमी' बनने का अवसर प्राप्त हुआ है। साथ ही, तकनीकी रूप से कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्ति भी अपने नए विचारों के माध्यम से लीक से हटकर कृषि उद्यम स्थापित कर रहे हैं। यह निःसंदेह कृषि क्षेत्र में उद्यमिता की अपार सम्भावनाओं को दर्शाता है।

आधी आबादी और अर्थव्यवस्था

देश की कुल जनसंख्या की आधी आबादी महिलाओं की है और वह राष्ट्रीय एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आज देश में हर रोज खेतों में करोड़ों की संख्या में महिलाएं कृषि कार्य में संलग्न हैं। देश के गांव में रहने वाले परिवारों में से 85% लोगों की आजीविका का स्रोत कृषि है और उसमें महिलाओं का योगदान 65% से 70% तक है। वे गृह कार्य करते हुए भी खेतों में काम कर रही हैं। कृषि जनगणना 2010-11 के अनुसार 118.7 मिलियन किसानों में से 30.3% महिलाएं थीं और 144.3 मिलियन कृषि श्रमिकों में से 42.6% महिलाएं कृषि श्रमिक थीं। जिनकी संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। वार्षिक सर्वेक्षण 2020-21 के अनुसार देश में कुल 33% महिलाएं खेतिहर

श्रमिक का कार्य करती हैं, जबकि 48% महिलाएं स्वरोजगार कृषक हैं। यह कृषि उद्यमिता क्षेत्र में महिला सशक्तिकरण का स्पष्ट संकेत है। खेतिहर श्रमिक से कृषि उद्यमी बनने तक का सफर महिलाओं के उत्थान का प्रतीक तो है ही, इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास की स्वर्णिम संभावनाएं भी प्रबल हुई हैं। कृषि ही नहीं बल्कि कृषि से संबंधित रोजगार में भी महिलाओं की संख्या काफी अधिक है। वार्षिक सर्वेक्षण 2020-21 के अनुसार लगभग 7.8 करोड़ महिलाएं दूध उत्पादन और पशुधन व्यवसाय से संबंधित गतिविधियों में सार्थक भूमिका निभा रही हैं। विश्व बैंक द्वारा संकलित 2014-15 के आंकड़े दर्शाते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में भारत की आबादी वास्तव में 65.13% है जिसमें 48% महिलाएं हैं। अर्थात 135 करोड़ आबादी वाले भारत देश की 42 करोड़ महिलाएं गांव में जीवन निर्वहन कर रही हैं और उनमें से लगभग 31.05 करोड़ महिलाएं कृषि कार्य में संलग्न हैं अर्थात ग्रामीण महिलाओं के लिए कृषि उद्यमिता के क्षेत्र में व्यापक संभावनाएं उपलब्ध हैं। ये उद्योग तुलनात्मक रूप से कम निवेश वाले क्षेत्रों और ग्रामीण क्षेत्रों में आय स्थापित करने तथा रोजगार प्रदान करने वाले हैं।

स्टार्टअप ग्राम उद्यमिता कार्यक्रम

उद्यमियों को कृषि कार्य में सहयोग के अतिरिक्त बाजार उपलब्ध करवाने हेतु कृषि सहयोग एवं किसान कल्याण विभाग द्वारा कृषि विपणन एवं संरचना योजना तैयार की गई है। इसके अंतर्गत महिला कृषि उद्यमियों को 33.33% की दर से अनुदान राशि उपलब्ध कराई जाती है। वार्षिक सर्वेक्षण 2020-21 के अनुसार राज्य सरकारों को आबंटित धन का लगभग 30% महिला लाभार्थी को देना निर्धारित किया गया है। महिलाओं को कृषि उद्यमिता विकास के लिए एकल विंडो पद्धति के माध्यम से कृषि तकनीक, मशीनीकरण और विपणन आदि सभी उत्तम प्रक्रियाओं में सहायता प्रदान की जाती है।

इसे देखते हुए विगत दो दशकों से सरकारी योजनाओं द्वारा ग्रामीण महिलाओं को कृषि उद्यमियों के रूप में परिवर्तित करने हेतु अनेक योजनाएं क्रियान्वित की गई हैं। ऐसी कुछ योजनाएं निम्नलिखित हैं -

राष्ट्रीय कृषि लिंग संसाधन केंद्र- कृषि सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग द्वारा 2005-06 में इस केंद्र की स्थापना की गई थी। इस योजना में कृषि उद्यमिता के लिए क्षमता निर्माण, कृषि इनपुट व आधुनिक मशीनों तक पहुंच तथा तकनीकी प्रशिक्षण के द्वारा महिला कृषकों की भागीदारी बढ़ाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इस योजना हेतु लगभग सभी मुख्य कृषि योजनाओं के लिए आबंटित धन के लगभग 30% भाग को महिला कृषकों के लिए आवंटित करने का फैसला लिया गया है।

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन- इस मिशन के अंतर्गत स्वयं सहायता केंद्र की स्थापना द्वारा कृषि व अन्य उद्यमिता को बढ़ावा देने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसके तहत 1998 में केरल में पहले सरकारी स्वयं सहायता महिला समूह के रूप में 'कुटुंबश्री' नामक संस्था की स्थापना हुई। इसी तर्ज पर महाराष्ट्र में महिला आर्थिक विकास महामंडल गठित हुआ था। यद्यपि भारत में स्वयं-सहायता समूह

महिला सशक्तिकरण में उच्च शिक्षा की भूमिका

महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम

आज विभिन्न राज्यों में चल रहे स्वयं सहायता केंद्र के कारण महिला कृषि उद्यमिता केन्द्रों ने महिला सशक्तिकरण को नए आयाम दिए हैं। महिलाओं के सामाजिक और आर्थिक उत्थान व सशक्तिकरण के लिए उनकी अनभिज्ञता, उदासीनता और अंधविश्वास के अधिकारों को दूर करने तथा एक नई चेतना प्रसारित किये जाने की आवश्यकता है। महिलाएं जैसे-जैसे कारोबार में सफल होंगी उनका स्वयं पर विश्वास बढ़ेगा और वह अपनी अंदर छिपी हुई प्रतिभा को पहचान सकेंगी।

के रूप में पहली संस्था 'सेवा' (SEWA) 1970 में ही गठित हुई थी जिसके साथ 'नाबार्ड' ने लिंक परियोजना स्थापित कर ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्य हेतु ऋण उपलब्ध कराने का प्रावधान किया था।

कृषि विपणन अवसंरचना (AMI)-उद्यमियों को कृषि कार्य में सहयोग के अतिरिक्त बाजार उपलब्ध करवाने हेतु कृषि सहयोग एवं किसान कल्याण विभाग द्वारा कृषि विपणन एवं संरचना योजना तैयार की गई है। इसके अंतर्गत महिला कृषि उद्यमियों को 33.33% की दर से अनुदान राशि उपलब्ध कराई जाती है। वार्षिक सर्वेक्षण 2020-21 के अनुसार राज्य सरकारों को आबंटित धन का लगभग 30% महिला लाभार्थी को देना निर्धारित किया गया है। महिलाओं को कृषि उद्यमिता विकास के लिए एकल विंडो पद्धति के माध्यम से कृषि तकनीक, मशीनीकरण और विपणन आदि सभी उत्तम प्रक्रियाओं में सहायता प्रदान की जाती है।

शिक्षण विस्तार संस्था (EIS)-इस परियोजना के द्वारा महिलाओं को कृषि उद्यमिता के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है। उनके लिए कार्यशाला, आधुनिक मशीनों के तकनीकी प्रयोग का प्रदर्शन, खुली सभाएं, सम्मेलन आदि के आयोजन द्वारा कृषिगत आवश्यक सूचना प्रणाली, नई तकनीकों व विधियों के प्रयोग आदि पर चर्चाएं होती हैं। इस योजना के तहत कृषि उद्यमिता क्षेत्र में ज्ञान संवर्धन व प्रशिक्षण हेतु 2015 से कृषि विज्ञान केंद्र एवं राज्य कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा विभिन्न उद्योगों में ट्रेनिंग के लिए अनुदान के साथ कम दर पर DISI (कृषि अन्तर्वेश के लिए कृषि विस्तार विज्ञान में डिप्लोमा) के अंतर्गत प्रशिक्षण दिया जाता है। वार्षिक सर्वेक्षण 2020-21 के अनुसार वर्ष 2021 में महिलाओं के लिए 106 प्रकार के उद्यमिता प्रशिक्षण कार्यक्रम हेतु देशभर में 1446 प्रशिक्षण विस्तार केंद्र आरंभ किए गए थे।

महिलाओं के लिए खाद्य सुरक्षा समूह-इस योजना के अन्तर्गत खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के लिए प्रति ब्लॉक दो महिला कृषि कामगार समूह का गठन कर उन्हें रु. 10000 दिए जाते हैं। प्रत्येक राज्य में एक जेंडर समन्वयक के द्वारा कृषि क्षेत्र में लगी महिलाओं को उनकी आवश्यकता अनुरूप सहायता अनुदान राशि उपलब्ध कराई जाती है। सन् 2005-06 से आरंभ हुई इस योजना में दिसंबर 2020 तक लगभग 1.37 करोड़ महिला कृषकों को लाभ हुआ है। वर्ष 2020-21 में प्रशिक्षण, किसान मेला, तकनीकों के प्रदर्शन आदि के द्वारा तकरीबन 32.4 लाख महिलाएं लाभान्वित हुई हैं।

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम-इसमें महिला सहकारी समितियों की सहायता से अनाज प्रसंस्करण, तिलहन प्रसंस्करण, कटाई मिलों, हथकरघा, पावरलूम बुनाई और समेकित विकास परियोजनाओं आदि से संबंधित कार्य कर रही महिलाओं को प्रशिक्षण दिया जाता है। वित्तीय वर्ष 2020-21 में विशेष रूप से स्वीकृत 6 परियोजनाओं में 90.26 लाख महिलाएं लाभान्वित हुई हैं। इसके अलावा, राष्ट्रीय सहकारी प्रशिक्षण संघ का गठन किया गया है जिसके तहत वर्ष 2020-21 के दौरान 38.78 लाख महिलाओं को प्रशिक्षण दिया गया है।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन - महिलाओं की कृषि उद्यमिता की आवश्यकता अनुरूप क्षमता निर्माण हेतु राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के अन्तर्गत उन्हें कृषि से संबंधित तकनीकी ज्ञान जैसे उच्च कोटि बीज, खाद, कीटनाशक, मशीन टूल्स एवं तकनीकी के क्रियान्वयन से संबंधित प्रशिक्षण दिए जाने का प्रावधान है। इस योजना के तहत महिला कृषि उद्यमिता के साथ-साथ देश में खाद्यान्न के उत्पादन में अच्छी समृद्धि हुई है। वर्तमान में यह योजना 28 राज्यों और 6 केंद्र शासित प्रदेशों में चल रही है।

दीनदयाल अंत्योदय योजना- इसके अंतर्गत 58,295 कृषि सखियों को और 735 राज्यस्तरीय संसाधकों को प्रशिक्षित किया गया है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के वर्ष 2021 के आंकड़ों के अनुसार 2020-21 में देश भर में कृषि विकास केंद्रों (KVK) के द्वारा 1.23 लाख महिला कृषकों को विशिष्ट कृषि उद्यमिता के लिए प्रशिक्षण दिया गया है। इस योजना के अधीन ग्रामीण महिलाओं के कौशल विकास और क्षमता निर्माण के लिए अलग से महिला किसान सशक्तिकरण की भी

शुरुआत की गई है।

महिला उद्यमिता विकास स्टार्टअप

इसका लक्ष्य ग्रामीण महिलाओं को एक ही छत के नीचे वित्तीय सहायता, ऋण, प्रशिक्षण, डोमेन एवं फंक्शनल निर्यात द्वारा प्रबोधन, विपणन प्रबंधन और प्रोत्साहन राशि व सहायता आदि उपलब्ध कराना है। इन्हीं स्टार्टअप के जरिए भारत विश्व भर में दूध, केला, आम, मसाले, झींगा मछली, चाय, दाल और सब्जियों का बड़ा निर्यातक देश बन कर उभरा है। नेसकॉम के एक अध्ययन के मुताबिक भारत में कृषि क्षेत्र में 2250 से अधिक स्टार्टअप हैं। जिसके जरिए नवंबर 2021 तक लगभग 24.1 बिलियन अमेरिकी डालर जुटाए गए थे।

वार्षिक सर्वेक्षण 2020 के अनुसार

ग्राम उद्यमिता कार्यक्रमः स्टार्टअप से महिला सशक्तीकरण

ग्राम उद्यमिता कार्यक्रमः स्टार्टअप से महिला सशक्तीकरण

देशभर के 30 राज्यों व 06 केंद्र शासित प्रदेशों के 6769 विकास खंडों के अंतर्गत लगभग 8.01 करोड़ महिलाओं के द्वारा 73.19 लाख स्वयं सहायता समूह संचालित हैं। जिसके अंतर्गत महिलाएं सफलता से कृषि उद्यमी के रूप में व्यवसाय कर रही हैं। सरकार द्वारा महिलाओं का उत्साहवर्धन करने और उद्यमिता के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों की पिछड़ी हुई महिलाओं को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने हेतु 2021 में महिला किसान दिवस पर 75 सफल महिला कृषि उद्यमियों की कहानी प्रकाशित की गई। ऐसी प्रगतिशील महिला उद्यमियों की कथा गांव के अशिक्षित महिलाओं तक पहुंचाने के उद्देश्य से दो लघु फिल्मों जैसे 'प्रगतिशील कृषक महिलाओं की कहानियां' और 'वैश्विक स्तर पर महिला किसानों की सफलता की कहानी' का निर्माण कराया गया। जिसकी कहानी कृषि क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका पर केंद्रित थी। ये दोनों फिल्में कृषि राज्य मंत्री के द्वारा 15 अक्टूबर 2020 को रिलीज की गईं। महिला कृषि उद्यमी 'किसान चाची' के प्रेरणादाई जीवन पर बनी बायोपिक 'कस्तूरी' भी इसी श्रृंखला की अगली कड़ी है। इसके अतिरिक्त महिला उद्यमिता को प्रोत्साहन देने हेतु महिला उद्यमियों के लिए अलग से पुरस्कार वर्ग भी निर्धारित किये गये हैं।

निष्कर्ष

आज विभिन्न राज्यों में चल रहे स्वयं सहायता केंद्र के कारण महिला कृषि उद्यमिता केन्द्रों ने महिला सशक्तिकरण को नए आयाम दिए हैं। महिलाओं के सामाजिक और आर्थिक उत्थान व सशक्तिकरण के लिए उनकी अनभिज्ञता, उदासीनता और अंधविश्वास के अधिकारों को दूर करने तथा एक नई चेतना प्रसारित किये जाने की आवश्यकता है। महिलाएं जैसे-जैसे कारोबार में सफल होंगी उनका स्वयं पर विश्वास बढ़ेगा और वह अपनी अंदर छिपी हुई प्रतिभा को पहचान सकेंगी।

संपर्क करें:

पूनम पाण्डेय

हाउस नं. 70, बड़ी बाग कॉलोनी,
निकट मजार लंका मैदान,
गाजीपुर-233 001
(उत्तर प्रदेश)
मो. 6265083116

डॉ. प्रशान्त कुमार साहू

माइक्रोप्लास्टिक-पर्यावरण में एक उभरता हुआ प्रदूषक

माइक्रोप्लास्टिक्स का निर्माण बड़ी प्लास्टिक वस्तुओं के टूटने, मौसम के प्रभाव, और विघटन के माध्यम से होता है, साथ ही कपड़ों और अन्य स्रोतों से सिंथेटिक फाइबर के रिलीज़ से भी होता है। माइक्रोप्लास्टिक्स विभिन्न पर्यावरणों में प्रचलित हैं, जिनमें महासागर, स्वच्छ जल के स्रोत, मिट्टी, और हवा शामिल हैं। इनका पारिस्थितिक तंत्र और मानव स्वास्थ्य पर पड़ता प्रभाव एक बढ़ती हुई चिंता का विषय है। माइक्रोप्लास्टिक्स मुख्यतः प्राथमिक और द्वितीयक दो प्रकार के होते हैं। प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक्स जानबूझकर छोटे बनाए जाते हैं, जैसे कि सौंदर्य प्रसाधन और व्यक्तिगत देखभाल के उत्पादों में इस्तेमाल होने वाले माइक्रोबीड्स, जबकि द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक्स बड़े प्लास्टिक वस्तुओं के टूटने से उत्पन्न होते हैं। द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक्स पर्यावरण में पाए जाने वाले सबसे सामान्य प्रकार के माइक्रोप्लास्टिक्स हैं।

प्लास्टिक के छोटे कण, जिन्हें माइक्रोप्लास्टिक्स कहा जाता है, सामान्यतः 5 mm से छोटे होते हैं और हाल के वर्षों में एक महत्वपूर्ण पर्यावरणीय और स्वास्थ्य संबंधी चिंता का विषय बन गए हैं। ये विभिन्न पर्यावरणों में पाए जा सकते हैं, जिनमें महासागर, स्वच्छ जल के स्रोत, मिट्टी, और यहां तक कि हमारी सांस में भी शामिल हैं। माइक्रोप्लास्टिक्स के सबसे सामान्य स्रोतों में अनुपयुक्त प्लास्टिक उत्पाद जैसे कि बैग, बोतलें, और पैकेजिंग सामग्री शामिल हैं। जब ये प्लास्टिक टूटते हैं, तो वे छोटे कण छोड़ते हैं जो मिट्टी और जल में पहुंच जाते हैं। इसके अलावा, माइक्रोप्लास्टिक्स कपड़ों में सिंथेटिक फाइबर से भी आ सकते हैं, जो धुलाई और सुखाने की प्रक्रियाओं के दौरान प्राप्त होते हैं।

माइक्रोप्लास्टिक्स का निर्माण बड़ी प्लास्टिक वस्तुओं के टूटने, मौसम के प्रभाव, और विघटन के माध्यम से होता है, साथ ही कपड़ों और अन्य स्रोतों से सिंथेटिक फाइबर के रिलीज़ से भी होता है। माइक्रोप्लास्टिक्स विभिन्न पर्यावरणों में प्रचलित हैं, जिनमें महासागर, स्वच्छ जल के स्रोत, मिट्टी, और हवा शामिल हैं। इनका पारिस्थितिक तंत्र और मानव स्वास्थ्य पर पड़ता प्रभाव एक बढ़ती हुई चिंता का विषय है। माइक्रोप्लास्टिक्स मुख्यतः प्राथमिक और द्वितीयक दो प्रकार के होते हैं। प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक्स जानबूझकर छोटे बनाए जाते हैं, जैसे कि सौंदर्य प्रसाधन और व्यक्तिगत देखभाल के उत्पादों में इस्तेमाल होने वाले माइक्रोबीड्स, जबकि द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक्स बड़े प्लास्टिक वस्तुओं के टूटने से उत्पन्न होते हैं। द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक्स पर्यावरण में पाए जाने वाले सबसे सामान्य प्रकार के माइक्रोप्लास्टिक्स हैं।

माइक्रोप्लास्टिक के कुछ स्रोत

माइक्रोप्लास्टिक्स विविध स्त्रोतों से प्राप्त होते हैं, जिनमें बड़े औद्योगिक उत्पादों से लेकर दैनिक उपयोग के घरेलू सामान शामिल होते हैं। माइक्रोप्लास्टिक्स के कुछ सबसे सामान्य स्रोतों में शामिल हैं:

वस्त्रः सिंथेटिक कपड़े, जैसे नायलॉन, एक्रेलिक, और पॉलिएस्टर, धोने पर माइक्रोफाइबर छोड़ते हैं, जिससे पर्यावरण में माइक्रोप्लास्टिक्स का उत्सर्जन होता है।

सिंथेटिक पेंट और टायर धूलः कई स्रोतों से सिंथेटिक पॉलिमर (जिनमें पेंट, जलीय कृषि गियर का घर्षण, टायर धूल, और मत्स्य पालन के अनुपयुक्त उपकरण और रस्सियाँ शामिल हैं) के टूटने से महासागरों में माइक्रोप्लास्टिक्स का उच्च स्तर उत्पन्न होता है। सड़क

चिन्हों का क्षरण और घर्षण भी माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है।

महासागर में प्लास्टिकः महासागर में प्लास्टिक मलबा माइक्रोप्लास्टिक्स के निर्माण का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इसमें प्लास्टिक की बोतलें, बैग और समय के साथ सूर्य के प्रकाश और अन्य पर्यावरणीय कारकों के कारण टूटने वाले रैपिंग प्रावधान शामिल हैं।

व्यक्तिगत देखभाल संबंधी उत्पादः माइक्रोबीड्स, जो एक्सफोलिएटिंग स्क्रब, टूथपेस्ट, और अन्य व्यक्तिगत देखभाल उत्पादों में इस्तेमाल होने वाले छोटे प्लास्टिक मोती होते हैं, अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों के माध्यम से पर्यावरण में प्रवेश कर सकते हैं और समुदी और ताजे जल के पारिस्थितिक तंत्र में मिल सकते हैं।

औद्योगिक उत्पादः कई औद्योगिक प्लास्टिक उत्पादों के निर्माण में उपयोग होने वाले प्लास्टिक के कण, भी माइक्रोप्लास्टिक्स का स्रोत होते हैं।

पर्यावरण पर माइक्रोप्लास्टिक्स के प्रभाव

माइक्रोप्लास्टिक्स का समुद्री जीवन और अन्य पारिस्थितिक तंत्रों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, जो सबसे छोटे जीवों से लेकर बड़े समुद्री जानवरों तक को प्रभावित करता है। समुद्री जीव-जन्तु माइक्रोप्लास्टिक्स को भोजन समझकर आहार बना लेते हैं, जिससे उनके शरीर में इसका संचय हो जाता है। यह समुद्री जीवन को शारीरिक रूप से नुकसान पहुंचाता है, जिसमें पाचन तंत्र में रुकावट और आंतरिक अंगों की हानि शामिल है। इसके अतिरिक्त, माइक्रोप्लास्टिक्स के सेवन से समुद्री जीव-जन्तुओं का पेट भर जाता है और उन्हें कोई पोषक तत्व नहीं मिलता, जिससे वे कुपोषण से ग्रस्त हो सकते हैं। ये माइक्रोप्लास्टिक्स समुद्री जीव-जन्तुओं की प्रजनन प्रणाली में भी हस्तक्षेप करते हैं, जिससे उनकी जनसंख्या में गिरावट आती है। अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि माइक्रोप्लास्टिक्स समुद्री जीव-जन्तुओं के व्यवहार और शारीरिक क्रिया को भी बाधित कर सकते हैं, उदाहरणतः उनकी तैरने की क्षमता को कम करना और शिकारियों के प्रति उनकी संवेदनशीलता में वृद्धि करना आदि।

समुद्री जीवन के अतिरिक्त, माइक्रोप्लास्टिक्स अन्य पारिस्थितिक तंत्रों पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते हैं। मिट्टी में मिश्रित माइक्रोप्लास्टिक्स, मिट्टी की जल धारण क्षमता को कम करके और पोषक चक्र को प्रभावित करके मिट्टी के गुणों में परिवर्तन कर सकते हैं। माइक्रोप्लास्टिक्स, स्वच्छ जल के पारिस्थितिक तंत्रों में, खाद्य श्रृंखला को बाधित कर सकते हैं और जलीय जीवों के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं। इसके अतिरिक्त, माइक्रोप्लास्टिक्स मानव स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक हैं, क्योंकि वे खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर सकते हैं और दूषित समुद्री भोजन या जल का सेवन करने वाले जनमानस या जीव-जन्तुओं को संभावित रूप से हानि पहुंचा सकते हैं। माइक्रोप्लास्टिक्स, वायु गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते हैं, यद्यपि इस क्षेत्र में और अधिक शोध की आवश्यकता है। मुख्य रूप से, महासागरीय जीवन और अन्य पारिस्थितिकियों पर माइक्रोप्लास्टिक्स के प्रभाव अधिक गंभीर होते जा रहे हैं, और पारिस्थितिकी तंत्र में माइक्रोप्लास्टिक्स के निर्वहन को कम करने और उन्हें दूर करने के लिए प्रभावी रणनीतियाँ विकसित करने हेतु अधिक प्रयासों की आवश्यकता है।

दुर्भाग्यवश, समुद्री वातावरण में माइक्रोप्लास्टिक्स की उपस्थिति का मत्स्य पालन और पर्यटन जैसे उद्योगों पर महत्वपूर्ण आर्थिक प्रभाव पड़ता है। माइक्रोप्लास्टिक्स, मछलियों और शंखों के ऊतकों में एकत्रित हो सकते हैं, जिससे उनकी गुणवत्ता और बाजार मूल्य में कमी आ सकती है। समुद्री भोजन में माइक्रोप्लास्टिक्स की उपस्थिति, उपभोक्ताओं में खाद्य सुरक्षा के प्रति चिंता उत्पन्न कर सकती है, जिससे मत्स्य पालन उद्योग की आर्थिक व्यवहार्यता पर अधिक प्रभाव पड़ सकता है। मत्स्य पालन उद्योग के अतिरिक्त, पर्यटन भी माइक्रोप्लास्टिक्स से प्रभावित हो सकता है। तटीय पर्यटन मुख्यतः समुद्री पारिस्थितिक तंत्रों की प्राकृतिक सुंदरता और स्वास्थ्य पर निर्भर करता है, और माइक्रोप्लास्टिक्स की उपस्थिति इन क्षेत्रों के समग्र सौंदर्य और पारिस्थितिक मूल्य को कम कर सकती है। माइक्रोप्लास्टिक्स से प्रदूषित समुद्र तट पर्यटकों को हतोत्साहित कर सकते हैं जिससे प्रभावित क्षेत्रों में पर्यटन से उत्पन्न राजस्व में कमी हो सकती है। इन उद्योगों और समग्र पर्यावरण पर माइक्रोप्लास्टिक्स के प्रभाव को कम करने के लिए अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, प्लास्टिक कचरे को कम करने और अपशिष्ट प्रबंधन प्रथाओं में सुधार करने की पहल पर्यावरण में माइक्रोप्लास्टिक्स के निर्वहन को रोकने में सहायता कर सकती है। इसके अतिरिक्त, जल से माइक्रोप्लास्टिक्स को दूर करने के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकियों को विकसित किया जा रहा है, जिससे माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण के आर्थिक प्रभाव को कम करने में सहायता मिलेगी। मत्स्य पालन और पर्यटन जैसे उद्योगों पर माइक्रोप्लास्टिक्स के आर्थिक प्रभाव महत्वपूर्ण हैं और यह इस विषय को व्यापक और सक्रिय विधि द्वारा समाधान करने के महत्व को उजागर करते हैं।

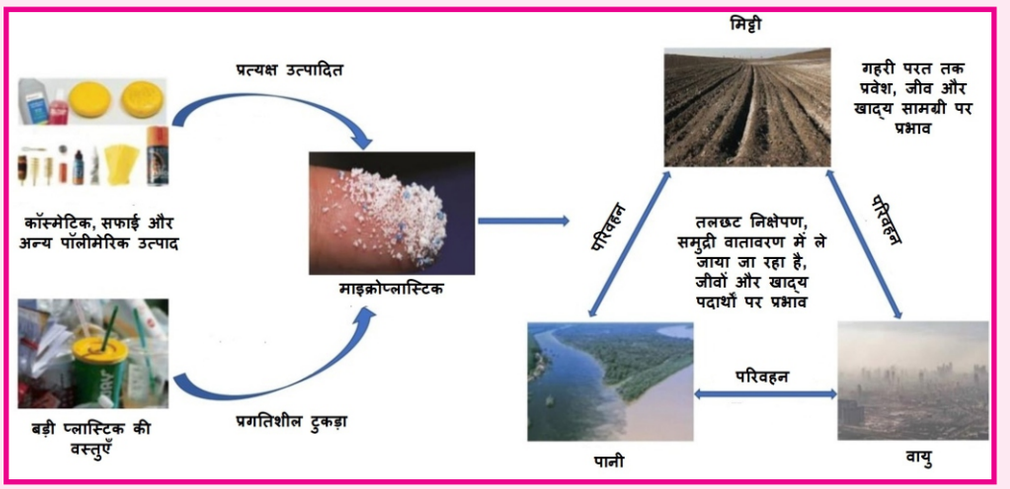

माइक्रोप्लास्टिक प्राप्ति के स्रोत

भारत में माइक्रोप्लास्टिक्स का प्रभाव

भारत में प्लास्टिक उद्योग एक तेजी से बढ़ता हुआ उद्योग है, जिसमें पश्चिमी भारत प्लास्टिक का सबसे बड़ा उपभोक्ता (47%) है। पश्चिमी भारत के गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, दमन और दीव, छत्तीसगढ़, और दादरा और नगर हवेली राज्यों में प्लाटिक का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। इस प्लास्टिक कचरे की पारदर्शिता और इसके सूक्ष्म भागों में टूटने के कारण अंततः माइक्रोप्लास्टिक उत्पन्न होता है। और इसकी उपस्थिति का अध्ययन भारतीय पर्यावरण के विभिन्न क्षेत्रों में

कई वैज्ञानिकों द्वारा किया जा रहा है। भारत में माइक्रोप्लास्टिक्स पर एम. श्रीनिवास रेड्डी प्रतिवेदन, केंद्रीय नमक और समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान, गुजरात, 2006 द्वारा किए गए शोध में दर्शाया गया है कि गुजरात तट के समुद्री अवसादों में प्लास्टिक कचरे (81 मिग्रा/किग्रा) जैसे पॉलीयूरीथेन, नायलॉन, पॉलीस्टाइरीन, पॉलीएस्टर कणों की उपस्थिति पायी गयी है। केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, पंच मार्ग, मुंबई के अनुसार, मुंबई के समुद्री तट पर, प्लास्टिक कचरे की अधिकता (7.49 ग्राम/मी^{2} और 68.83 कण/मी^{2}) पाई गई। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, नई दिल्ली 2014 की रिपोर्ट के अनुसार, औसत मात्रा 664 ± 114 कण/किग्रा थी।

अन्य देशों में माइक्रोप्लास्टिक्स का प्रभाव

न्यूयॉर्क राज्य विश्वविद्यालय द्वारा हाल ही में किए गए एक विश्लेषण में प्लास्टिक की जल की बोतलों पर एक चौंकाने वाली रिपोर्ट दी गई है, जिसमें बोतलबंद जल में दोगुने माइक्रोप्लास्टिक्स पाए गए। इस विश्लेषण के लिए जल के नमूने भारत, ब्राजील, चीन, केन्या, लेबनान, मेक्सिको, थाईलैंड, अमेरिका और इंडोनेशिया सहित विभिन्न देशों के 19 स्थानों से एकत्र किए गए थे। अध्ययन में यह पाया गया कि एकत्र किए गए 93 प्रतिशत जल के नमूनों में 0 से 10,000 तक के माइक्रोप्लास्टिक्स कण जल की बोतल में उपस्थित थे। बिजनेस स्टैंडर्ड में 17.03.2018 को दिए गए एक हालिया साक्षात्कार में, भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) के मुख्य कार्यकारी अधिकारी श्री पवन कुमार अग्रवाल ने कहा कि भारतीय बोतलबंद जल के मानक, कीटनाशकों और सूक्ष्म जीवों के कारण होने वाले संदूषण पर केंद्रित हैं। उन्होंने कहा, "माइक्रोप्लास्टिक्स के परीक्षण के लिए कोई पैरामीटर उपलब्ध नहीं हैं। हमें नए मानक तैयार करने या मौजूदा मानकों को अपडेट करने से पहले इस मुद्दे को और अधिक विस्तार से समझने की आवश्यकता है।"

माइक्रोप्लास्टिक्स का आकार 5 मिमी से कम होता है और इसे पूरी

भारत में प्लास्टिक उद्योग एक तेजी से बढ़ता हुआ उद्योग है, जिसमें पश्चिमी भारत प्लास्टिक का सबसे बड़ा उपभोक्ता (47%) है। पश्चिमी भारत के गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, दमन और दीव, छत्तीसगढ़, और दादरा और नगर हवेली राज्यों में प्लास्टिक का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। इस प्लास्टिक कचरे की पारदर्शिता और इसके सूक्ष्म भागों में टूटने के कारण अंततः माइक्रोप्लास्टिक उत्पन्न होता है। और इसकी उपस्थिति का अध्ययन भारतीय पर्यावरण के विभिन्न क्षेत्रों में कई वैज्ञानिकों द्वारा किया जा रहा है।

के प्रसिद्ध प्रोफेसर हेनरी ने बताया है, कि ये माइक्रोप्लास्टिक्स अन्य विषैले तत्व जैसे डी.डी.टी. और हेक्साक्लोरोबेंजीन के लिए एक परिवहन माध्यम के रूप में भी कार्य कर सकते हैं और अंततः जीवित जीवों द्वारा उसका सेवन किये जाने पर उनके शरीर में ही समाप्त हो जाते हैं।

माइक्रोप्लास्टिक को नियंत्रित करने के उपाय

- पर्यावरण में प्लास्टिक और माइक्रोप्लास्टिक के प्रभाव को कम करने के लिए विभिन्न देशों और संगठनों द्वारा मजबूत और प्रभावी नीतियां और कानून बनाए जाने चाहिए।
- प्लास्टिक कचरे को नियंत्रित करने के लिए एक उचित निगरानी निकाय का गठन किया जाना चाहिए।
- यदि कोई नीतियों का उल्लंघन करता है तो कानून में उसके लिए उचित दंड का प्रावधान किया जाना चाहिए।
- सरकार और गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से बायोडिग्रेडेबल बैग और गैर-प्लास्टिक सामग्री के उपयोग के लिए सार्वजनिक जागरूकता और सार्वजनिक

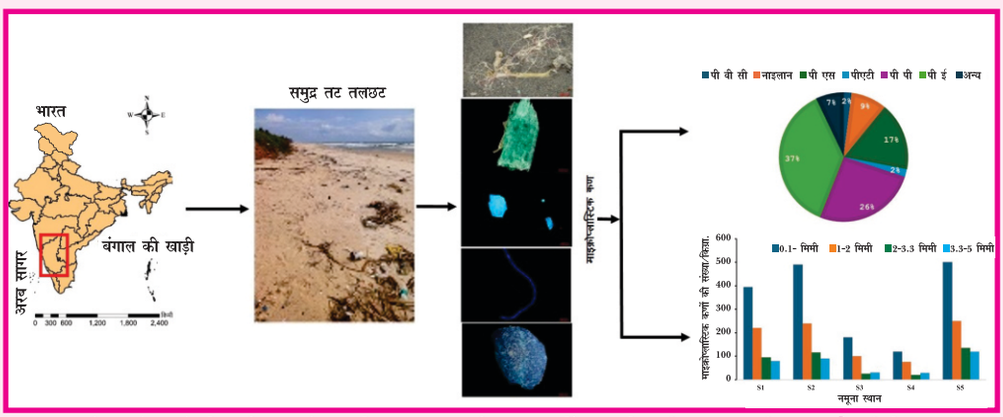

कर्नाटक (भारत) के तटीय पर्यावरण से समुद्र तट की तलछट में माइक्रोप्लास्टिक्स का वितरण और विशेषता

भारत दुनिया के प्रमुख प्लास्टिक उपभोक्ताओं में से एक है, जो वार्षिक औसतन 5.6 मिलियन टन प्लास्टिक का उत्पादन करता है। वेम्बनाड झील, केरल में माइक्रोप्लास्टिक्स की अधिकता पाई गई, जिसका अधिकतम माध्य मान 252.80 ± 25.76 कण/मी^{2} पाया गया। मुख्य पॉलिमर यौगिक निम्न घनत्व वाला पॉलीइथाइलीन था। भारतीय समुद्री तटों का तलछट माइक्रोप्लास्टिक्स से प्रदूषित हो गया है। मई 2021 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान गुवाहाटी द्वारा कर्नाटक राज्य के पांच विभिन्न समुद्री तटों (अरब सागर तट) से माइक्रोप्लास्टिक कणों की उपस्थिति की रिपोर्ट प्रस्तुत गई थी। उनकी रिपोर्ट के अनुसार, समुद्र तट के रेतीले भाग में माइक्रोप्लास्टिक की अवस्थिति 264 ± 62 कण/किग्रा से 1002 ± 174 कण/किग्रा तक थी, और पांचों समुद्री तटों में माइक्रोप्लास्टिक की एफसीए, ईयूएफए आदि सहित सभी उन्नत विकसित देशों के खाद्य सुरक्षा प्राधिकरणों के पास वर्तमान में माइक्रोप्लास्टिक के लिए कोई अवशेष सीमा नहीं है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने प्लास्टिक प्रदूषक के संभावित जोखिमों की समीक्षा प्रारंभ कर दी है जिससे प्लास्टिक के उपयोग को कम किया जा सके।

दुनिया में समुद्री पर्यावरण के लिए सबसे बड़े खतरों में से एक माना जाता है। वे इतने हल्के होते हैं कि आसानी से जल में तैर सकते हैं और कई जलजीवों को यह भोजन जैसे प्रतीत होते हैं जिससे वे इसका सेवन कर लेते हैं। परिणामतः यह प्लास्टिक, जीव-जन्तुओं के पेट में जमा हो जाता है। हेरियट-वाट विश्वविद्यालय प्रेरणा को बढ़ावा देना सबसे महत्वपूर्ण है।

प्रोफेसर राजगोपालन वासुदेवन, रसायन विभाग, थिआगराजार कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग, मदुरै, को भारत में पर्यावरण से प्लास्टिक कचरे के प्रभाव को कम करने में उनके व्यापक योगदान के लिए "प्लास्टिक मैन ऑफ इंडिया" के रूप में भी जाना जाता है। उन्होंने

कॉलेज सीमा के अंदर एक सड़क का निर्माण किया जो प्लास्टिक कचरे और बिटुमेन यौगिक के मिश्रण से बनी थी। उनके द्वारा किये गये इस कार्य का परिणाम अत्यधिक सफल रहा और उन्होंने उपयोग की गई तकनीक में पेटेंट प्राप्त किया। अब भारत सरकार सड़कों के निर्माण में प्लास्टिक कचरे के उपयोग को अनिवार्य बना रही है क्योंकि इस कार्य में कम प्लास्टिक का उपयोग, सामग्री का सुदृढ़ बंधन, सड़क जीवन की दीर्घकालिक स्थिरता, अनुकूल पर्यावरण और रख-रखाव की कम लागत पाई जाती है। भारत के जमशेदपुर, में किये गए एक अन्य प्रयोग में बिटुमेन और प्लास्टिक कचरे को मिलाकर सड़कों का निर्माण किया गया था। दुनिया भर में प्लास्टिक कचरे की वर्तमान स्थिति और प्लास्टिक और माइक्रोप्लास्टिक कचरे को नियंत्रित करने के उपाय संलग्न चित्र में दर्शाए गए हैं।

केके प्लास्टिक वेस्ट मैनेजमेंट लिमिटेड (भारत) द्वारा एक नेक पहल

स्वच्छ भारत अभियान, भारत सरकार के तहत भारतीय पेट्रोलियम संस्थान द्वारा एक पहल, प्लास्टिक कचरे को गैसोलीन या डीजल में परिवर्तित करना

एनडीटीवी स्वच्छ भारत अभियान भारत सरकार की एक पहल

प्लास्टिक कचरा संग्रहण, असम, भारत

शिलांग, मेघालय, भारत में प्लास्टिक कचरे (गैर-बायोडिग्रेडेबल कचरा) का पृथक्करण

इंदौर, भारत में प्लास्टिक कचरे (गैर-बायोडिग्रेडेबल कचरा) का पृथक्करण

प्लास्टिक और माइक्रोप्लास्टिक कचरे को नियंत्रित करने के उपाय।

निष्कर्ष

माइक्रोप्लास्टिक एक ऐसा प्रदूषक है जिसकी मात्रा में हो रही निरन्तर वृद्धि पूरे विश्व को प्रभावित कर रही है। यह मुख्य रूप से शहरी और उपनगरीय क्षेत्रों में प्लास्टिक प्रदूषण का मुख्य स्रोत हैं, जो अंततः नदियों, झीलों, समुद्रों और महासागरों जैसे जल निकायों में जा मिलते हैं। अपने आकार और जल निकायों में उपलब्धता के कारण, अक्सर समुद्री जीवों द्वारा तथा अप्रत्यक्ष रूप से मानव द्वारा समुद्री भोजन के रूप में इसका उपभोग किया जाता है। माइक्रोप्लास्टिक विषैले तत्वों जैसे DDT और हेक्साक्लोरोबेंजीन के वाहक या परिवहन के माध्यम होते हैं। दीर्घावधि तक माइक्रोप्लास्टिक का सेवन हमारे मानव गुणसूत्रों में परिवर्तन कर सकता है और यह बांझपन, मोटापा और यहां तक कि कैंसर का भी कारण बन सकता है। पर्यावरण में माइक्रोप्लास्टिक की उपस्थिति का पता लगाने के लिए ऑप्टिकल माइक्रोस्कोपी, इलेक्ट्रॉनिक माइक्रोस्कोप, एनएमआर, एफटीआईआर, रमन स्पेक्ट्रोस्कोपी उपकरणों का उपयोग किया जाता है। विभिन्न देशों और संगठनों द्वारा प्लास्टिक और माइक्रोप्लास्टिक के प्रभाव को कम करने के लिए विभिन्न नीतियां और कानून बनाए गए हैं। प्लास्टिक कचरा प्रबंधन नियम 2016 के अन्तर्गत, भारत सरकार ने 50 माइक्रोन से कम मोटाई वाले प्लास्टिक बैग के उपयोग पर प्रतिबंध लगा दिया है। इस क्षेत्र में सार्वजनिक जागरूकता और सरकार और गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से बायोडिग्रेडेबल बैग और गैर-प्लास्टिक सामग्री के उपयोग के लिए सार्वजनिक प्रेरणा को बढ़ावा देना अत्यंत आवश्यक है। कोई भी व्यक्ति प्लास्टिक के उपयोग सम्बन्धी कानून का उल्लंघन न करे, यह सुनिश्चित करने के लिए सख्त दंड प्रावधानों का लागू किया जाना परम आवश्यक एवं अपरिहार्य है।

सपंर्क करें:
डॉ. प्रशान्त कुमार साहू
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की।

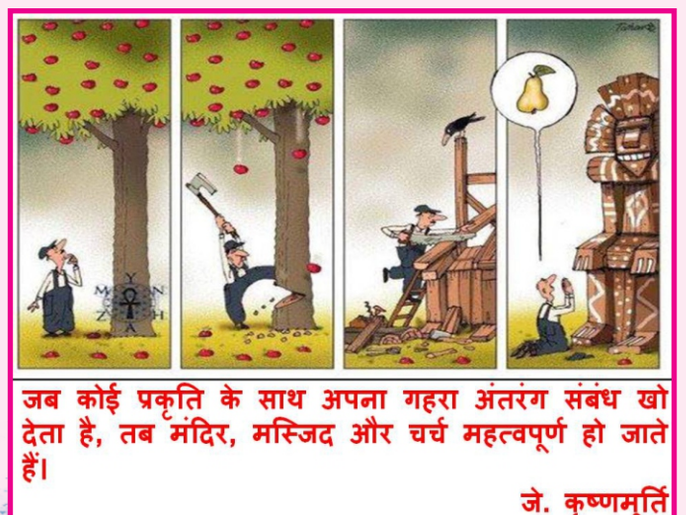

जब कोई प्रकृति के साथ अपना गहरा अंतरंग संबंध खो देता है, तब मंदिर, मस्जिद और चर्च महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

जे. कृष्णमूर्ति

हरी-भरी धरती

सुनीता अग्रवाल

जब हरी-भरी होगी धरा
हर ओर होगा जीवन खुशियों भरा।
अंग-अंग में रंग भरा।
रंगों की होगी बौछार।।

पेड़ों को आज काट कर।
धरती रख दी उसने उजाड़ कर।।
अपने स्वार्थ की देखो खातिर।
मानव प्रकृति को बर्बाद रहा कर।।

प्रकृति ने हमें खाद्य-संपदा देकर।
किया है देखो महान उपकार।।
हम ही न बन पाए समझदार।
स्वयं को क्यों नहीं करते खबरदार।।

प्रगति के हमने नाम पर
प्रकृति का कर दिया निरादर।।
पहाड़, झील, झरने, नदियां, सरोवर।
सब होते हम पर न्यौछावर।।

इनकी सुरंदरता देख देखकर।
खुश होते इनको निहार कर।।

अपने आप को तरो-ताजा कर।
खुशियां बेतहाशा पाकर।।

प्रकृति की खूबसूरती निहार कर।
अपना जीवन सफल बनाकर।।
उसके प्रति अपना फर्ज निभा लिया।
उसको अपने बच्चों-सा प्यार कर लिया।।

प्रकृति सदा अच्छा ही परिणाम देगी।
उसके खजाने में कोई कमी नहीं होगी।।
पर खजाने का रक्षक तो हमें बनना होगा।
प्रकृति की खूबसूरती को और निखारना होगा।

सोना-चांदी, हीरे-मोती।
सब कुछ इसके वक्ष-स्थल पर।।
इतनी अनमोल, अतुल्य संपदा पर।
इतराए क्यों न यह इन पर।।

प्रकृति हमसे वादा करती।
हमको सब कुछ है वह देती।।
हमको सब सुख-समृद्धि ऐश्वर्य है देती।
कैसे इसे संजोये है यह।।

कितना निर्मल कितना उज्जवल।
झर-झर झर-झर बहता है जल।।
कल-कल कल-कल करता है जल।
पर्वत की श्रृंखलाओं से आता है जल।।

उद्गमित हुआ जहां से जल।
कितना उजला होता वहां यह जल।।
जैसे-जैसे नीचे आता।
वैसे-वैसे गंदला होता जाता।।

पानी अमृत, पानी जीवन।
पानी बिन कैसा जीवन।।
जैसे सांस की कीमत जीवन।
वैसे ही यह अनमोल पावन।।

पानी है अनमोल, पानी का न करो
मोल तुम।
इसकी कीमत जानो तुम।।
व्यर्थ कभी न इसको करो तुम।
जरूरत होजितना, उतना उपयोग करो तुम।।

भावी जल संकट के लिए होंगे जिम्मेदार तुम।
अगर यूं ही इसे व्यर्थ गवाँओगे तुम।।
जिनको मिलता आसानी से जल।
उनके लिए कुछ नहीं है यह जल।।

जल संकट के कारण ही।
उजड़ गई थी दुनिया उनकी।।
अपने प्यार की खातिर ही।
दशरथ मांझी ने अकेले राह निकाली।।

पहाड़ काटकर राह निकाली।
पानी के बिन न कोई जान गंवाए।।
यही सोच पहाड़ों में राह बनवाए।
अकेले ही एक असंभव काम कर
"माउंटेन मैन" कहलाए।।

वर्षा जल का संचयन करो।
भूजल स्तर अधिक करो।।
पानी हमको देता जीवनदान।
इसको बचा कर बनो महान।।

सपंर्क करें:
सुनीता अग्रवाल,
KG-13 न्यू कवि नगर
गाजियाबाद।
मो. 7503363166

गोपाल कृष्ण एवं अंजू चौधरी

भूजल संसाधनों का महत्व एवं आंकलन

मानव द्वारा उत्पादित प्रत्येक वस्तु के निर्माण में जल एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जबकि यह नवीकरणीय है फिर भी इसकी एक निश्चित राशि ही मानव के उपयोग हेतु उपलब्ध है। इस तथ्य से कोई बचा नहीं है कि स्वच्छ और भेद्य जल की आवश्यकता और मांग का विस्तार जारी है एवं जिसके लिए प्रतिस्पर्धा बनी रहती है। जलवायु में परिवर्तन भविष्य में जलीय घटनाओं और जल की मांग के संपूर्ण संभाव्यता वितरण के आकार को बदल सकते हैं। जलीय चक्र में परिवर्तन एवं जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप भूमि उपयोग एवं भविष्य में जल के उपयोग का प्रारूप परिवर्तित हो जाएगा। जलवायु परिवर्तन के अतिरिक्त, कृषि के लिए जल की मांग तकनीकी विकास, शहरीकरण तथा मानवीय प्रतिक्रियाओं से प्रभावित होगी।

परिचय

किसी भी देश, राज्य एवं क्षेत्र की सम्पन्नता एवं सभ्यता के विकास में जल का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। विकास एवं समृद्धि के पैमाने को निर्धारित करते समय वर्तमान समाज की संभावनाओं एवं आवश्यकताओं पर विचार करना अति आवश्यक है। वर्तमान परिवेश में भूजल का गिरता स्तर एक गंभीर समस्या की चेतावनी दे रहा है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा भूजल उपयोगकर्ता है। यहां सिंचाई के लिए 230 अरब घन मीटर भूजल का प्रतिवर्ष दोहन होता है। आने वाले वर्षों में सिंचित कृषि के विस्तार तथा खाद्य उत्पादन के राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति के लिए भूजल प्रयोग में कई गुणा वृद्धि होने की संभावना है। भारत में कुल अनुमानित भूजल 433 अरब घन मीटर पाया गया है। भारत की कुल 143 मिलियन हैक्टेयर कृषि योग्य भूमि का लगभग 55 प्रतिशत भाग वर्षा पर आधारित तथा बारानी खेती के अंतर्गत आता है। देश के कुल सिंचित क्षेत्रफल के 60 प्रतिशत से अधिक भू-भाग में सिंचाई के लिए भूजल का ही उपयोग किया जाता है। ऐसे क्षेत्रों में सिंधु-गंगा के मैदान और भारत के उत्तर-पश्चिमी, मध्य और पश्चिमी भाग आते हैं। कुछ क्षेत्रों (पश्चिमी भारत और सिंधु-गंगा के मैदान) में 90 प्रतिशत से अधिक भाग भूजल द्वारा सिंचित किया जाता है। हालांकि भूजल वार्षिक आधार पर पुनःपूरण योग्य स्रोत है फिर भी स्थान और समय की दृष्टि से इसकी उपलब्धता असमान है। इसलिए भूजल संसाधन के विकास की योजना तैयार करने के लिए भूजल संसाधन और सिंचाई क्षमता का सटीक आंकलन करना अति आवश्यक है। भारत के अधिकांश भागों में भूजल का अत्यधिक दोहन होना एक प्रमुख पर्यावरणीय चुनौती है। भूजल के अंधाधुंध दोहन से भूमिगत जल स्तर में तेजी से आ रही गिरावट के साथ-साथ कार्बन उत्सर्जन में भी वृद्धि हो रही है। भारत में पेय जल एवं सिंचाई हेतु जल प्रबंधन एक चुनौती बनता जा रहा है। भारत में वार्षिक औसत वर्षा 1160 मिमी होने के बावजूद भी देश का एक बहुत बड़ा भू-भाग सूखा ग्रस्त है एवं वर्षा पर निर्भर है। देश में 80 से 85 प्रतिशत पेयजल की आपूर्ति भूजल से होती है। पिछले कई दशकों से कृषि उद्योगों, विकास कार्यों एवं अन्य उपयोगों में भूजल पर निर्भरता बढ़ी है। भूजल के उचित प्रबन्धन एवं भूजल पुनर्भरण क्षमता की योजना एवं कार्यान्वयन हेतु सतही जल की क्षमता के आंकलन के साथ-साथ भूजल संसाधनों का आंकलन भी अति आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है।

भूजल के आंकलन के अंतर्गत जलभृतों का चयन, जलभृत का प्रकार, भूजल निकासी अध्ययन, भूजल मानचित्रण, जल की उपलब्ध मात्रा एवं गुणवत्ता का आंकलन किया जाता है। भारत में जलभृत की स्पष्ट जानकारी होने पर ही स्थानीय स्तर पर उनका प्रबंधन एवं नियमन हो सकता है।

मानव द्वारा उत्पादित प्रत्येक वस्तु के निर्माण में जल एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जबकि यह नवीकरणीय है फिर भी इसकी एक निश्चित राशि ही मानव के उपयोग हेतु उपलब्ध है। इस तथ्य से कोई बचा नहीं है कि स्वच्छ और भेद्य जल की आवश्यकता और मांग का विस्तार जारी है एवं जिसके लिए प्रतिस्पर्धा बनी रहती है। जलवायु में परिवर्तन भविष्य में जलीय घटनाओं और जल की मांग के संपूर्ण संभाव्यता वितरण के आकार को बदल सकते हैं। जलीय चक्र में परिवर्तन एवं जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप भूमि उपयोग एवं भविष्य में जल के उपयोग का प्रारूप परिवर्तित हो जाएगा। जलवायु परिवर्तन के अतिरिक्त, कृषि के लिए जल की मांग तकनीकी विकास, शहरीकरण तथा मानवीय प्रतिक्रियाओं से प्रभावित होगी। तृतीय संयुक्त राष्ट्र विश्व जल विकास रिपोर्ट ''संयुक्त राष्ट्र विश्व जल मूल्यांकन कार्यक्रम, 2009'' यह चेतावनी देती है कि जल के वर्तमान असमान एवं असतत उपयोग के अत्यंत गंभीर परिणाम हो सकते हैं। भौतिक और सामाजिक प्रक्रियाओं तथा प्रवृत्तियों, भविष्य के संभावित परिवर्तनों, प्रौद्योगिकियों और प्रबंधन विकल्पों के बारे में मानव की बेहतर समझ, एवं तंत्र के रूप में उन्हें मॉडल करने की क्षमता, ऐसे समाधान खोजने में सहायक तथा प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं और जल की उपलब्धता के लिए भविष्य की संभावित अवस्थाओं की एक विस्तृत श्रृंखला में अनुकूलनीय सिद्ध हो सकते हैं।

खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) तथा विश्व जल परिषद ने यह निष्कर्ष निकाला है कि, उचित निवेश और नीतिगत हस्तक्षेप से वर्ष 2050 तक 9-10 बिलियन की वैश्विक आबादी के लिए खाद्य उत्पादन करना संभव होगा, हालांकि कई देशों में खाद्य और पोषण संबंधी असुरक्षा बनी रहेगी। भारत में अपने जल संसाधनों का प्रबंधन करने के लिए प्रभावी ज्ञान, प्रौद्योगिकी और आर्थिक संसाधन उपलब्ध हैं। बढ़ती आबादी के लिए पर्याप्त जल एवं अन्य वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन और वितरण भविष्य में भी हो सके इसके लिए 'प्रति बूंद अधिक फसल', 'प्रति बूंद अधिक रोजगार', 'बेहतर पर्यावरण प्रति बूंद', और 'प्रति बूंद बेहतर पोषण' प्राप्त करना आवश्यक है।

भारत सरकार द्वारा अपनाई गई 'राष्ट्रीय जल नीति' विकास योजना जल को सबसे महत्वपूर्ण तत्वों में से एक मानती है। यह राष्ट्रीय जल नीति देश में भूजल संसाधनों की मात्रा और गुणवत्ता पुनर्भरण की जानकारी के लिए जलभृतों के मानचित्रण एवं अति-शोषित क्षेत्रों में भूजल स्तर को गिरने से रोकने की आवश्यकता पर बल देती है। एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन (IWRM) इस जल नीति के कार्यान्वयन की एक ऐसी तकनीक है, जो जल, भूमि और संबंधित संसाधनों के समन्वित विकास और प्रबंधन को बढ़ावा देती है, जिससे महत्वपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता से समझौता किए बिना ही न्यायसंगत तकनीक से आर्थिक और सामाजिक कल्याण को अधिकतम किया जा सके। वैश्विक जल भागीदारी द्वारा स्थानिक एवं कालिक दोनों अवस्थाओं में वर्षा के असमान वितरण के परिणामस्वरूप सतही जल संसाधनों का असमान वितरण पाया जाता है। इसके अतिरिक्त, केवल सतही जल का सिंचाई हेतु उपयोग किये जाने से भूजल स्तर में अत्यधिक वृद्धि हो सकती है, जिससे जलग्रसनता और लवणता की समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं, जिसका फसल की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है एवं भू-भाग अनुत्पादक हो सकते हैं। इसके परिणामस्वरूप सतही और भूजल संसाधनों के संयुग्मी उपयोग पद्धति का विकास हुआ है जो ऊर्ध्वाधर जल निकासी में सहायता करती है और इस प्रकार जलग्रसनता और लवणता की समस्या को दूर करती है। जलभृतों से पुनर्भरण मात्रा से अधिक जल की निकासी के परिणामस्वरूप जल स्तर का नियमित रूप से ह्रास हो सकता है।

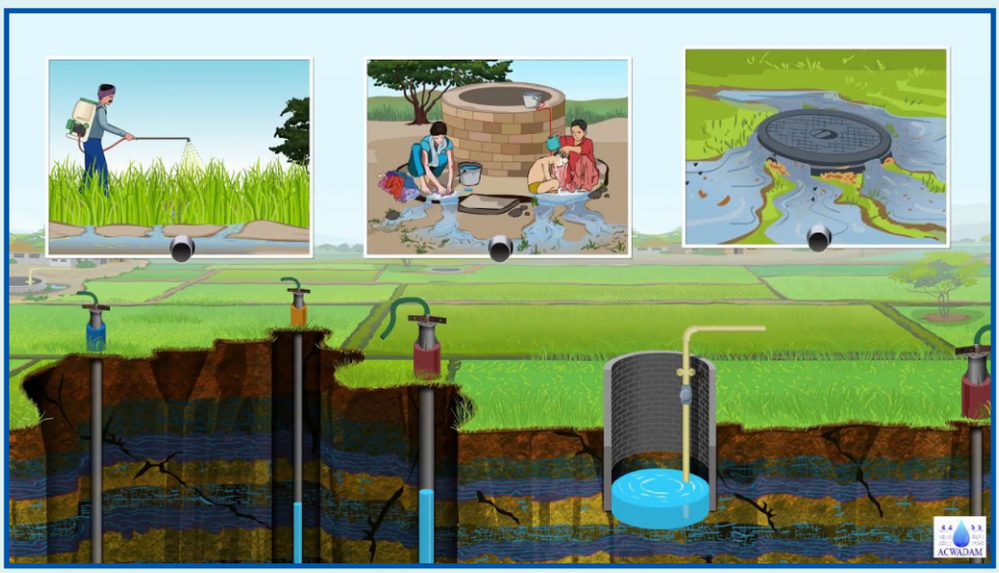

भूजल पुनःपूरण के स्रोत

कार्य प्रणाली

भूजल संसाधन आंकलन समिति, 2015 (GEC-15) द्वारा अनुशंसित संशोधित कार्यप्रणाली के अनुसार जलभृत में भूजल संसाधन मूल्यांकन की संस्तुति की गई है। GEC-15 ने एक जलभृत-वार भूजल संसाधन मूल्यांकन को शामिल किया है जिसके लिए पार्श्व के साथ-साथ ऊर्ध्वाधर सीमा और विभिन्न जलभृतों के सीमांकन की आवश्यकता होती है। सॉफ्ट रॉक क्षेत्रों में, जब तक इसके मानचित्रण के माध्यम से जलदायक ज्यामिति को सुदृढ़ता से स्थापित नहीं किया जाता है, तब तक भूजल संसाधनों का आंकलन 300 मीटर की गहराई तक किया जा सकता है। यह अपरिष्कृत और सीमित जलभृतों के लिए पुनःपूरण एवं भंडारण योग्य भूजल संसाधनों के आंकलन की संस्तुति करता है। वर्षा रिसाव घटक, विशिष्ट उपज, नहरों के द्वारा पुनर्भरण और सिंचाई से पुनर्भरण के मानदंडों को परिष्कृत किया गया है। यह भी बताया गया है कि मात्र भूजल स्तर की प्रवत्तियों को ही वर्गीकरण के मानदंडों के रूप में उपयोग नहीं किया जाना चाहिए बल्कि उन्हें अनुमान के सत्यापन के लिए उपयोग किया जाना चाहिए। भूजल संतुलन समीकरण के विभिन्न अंतर्वाह/बहिर्वाह घटकों के आंकलन के लिए GEC मानदंडों का उल्लेख उपयुक्त स्थानों पर किया गया है, साथ ही उपयोग में आने वाली अन्य पद्धतियों/सूत्रों का भी

उल्लेख किया गया है।

GEC-15, संसाधनों का मूल्यांकन प्रत्येक तीन वर्षों में एक बार किए जाने की अनुशंसा करता है। भूजल प्रबंधन कार्यक्रमों की योजना बनाने में स्थानीय प्रशासन की सुविधा के लिए जलविभाजक को एक इकाई के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

बंधनमुक्त जलभृत का भूजल आंकलन

GEC-15 के अनुसार भूजल के आंकलन में गतिशील और भंडारित भूजल संसाधनों का आंकलन शामिल है। विकास योजना मुख्य रूप से गतिशील संसाधनों पर ही निर्भर होनी चाहिए क्योंकि यह प्रतिवर्ष पुनः-पूरित हो जाता है। स्थिर या इन-स्टोरेज संसाधनों में परिवर्तन भूजल खनन के प्रभावों को दर्शाता है। ऐसे संसाधनों की वार्षिक रूप से पुनः पूर्ति नहीं की जा सकती है और अधिक वर्षा वाले आगामी वर्ष में उचित पुनर्भरण योजना के साथ केवल आवश्यकताओं के दौरान ही भूजल उपयोग की अनुमति दी जा सकती है।

गतिशील भूजल संसाधन

भूजल संसाधनों के आंकलन की पद्धति जल संतुलन के सिद्धांत पर आधारित है जैसा कि नीचे दिया गया है:

अंतर्वाह-बहिर्वाह = जलदायक के भंडारण में परिवर्तन

इस समीकरण में प्रयोग किये जाने वाले कुछ प्राचलों में भंडारण में परिवर्तन, वर्षा पुनर्भरण, सरिता वाहिकाओं से पुनःपूरण, नहरों से पुनःपूरण, सतही जल सिंचाई से पुनःपूरण, भूजल सिंचाई से पुनःपूरण, टैंक एवं तालाब से पुनःपूरण, जल संरक्षण संरचनाओं से पुनःपूरण, जलदायक प्रणाली में ऊर्ध्वाधर प्रवाह, भूजल निष्कर्षण, वाष्पोत्सर्जन, वाष्पीकरण और आधार प्रवाह प्रमुख हैं।

यह प्राथमिकता दी जाती है कि जल संतुलन समीकरण के सभी घटकों का आंकलन, एक आंकलन इकाई में संकुलित आंकलन दृष्टिकोण का उपयोग करके किया जाना चाहिए। वर्तमान में विभिन्न एजेंसियों के पास उपलब्ध डेटाबेस अधिकांश मूल्यांकन इकाइयों में विस्तृत भूजल बजट तैयार करने के लिए पर्याप्त नहीं है। इसलिए, वर्तमान में कुछ उचित मान्यताओं को ध्यान में रखते हुए, जल बजट को केवल प्रमुख घटकों तक ही सीमित रखा जा सकता है।

भारत सरकार द्वारा अपनाई गई 'राष्ट्रीय जल नीति' विकास योजना जल को सबसे महत्वपूर्ण तत्वों में से एक मानती है। यह राष्ट्रीय जल नीति देश में भूजल संसाधनों की मात्रा और गुणवत्ता पुनर्भरण की जानकारी के लिए जलभृतों के मानचित्रण एवं अति-शोषित क्षेत्रों में भूजल स्तर को गिरने से रोकने की आवश्यकता पर बल देती है।

मानसून के मौसम में पुनःपूरण

भूजल स्तर के उतार-चढ़ाव और विशिष्ट उपज के दृष्टिकोण पर भूजल पुनर्भरण पद्धति का उपयोग किया जाना चाहिए क्योंकि यह विधि भूजल इनपुट और आउटपुट घटकों के लिए भूजल स्तर की प्रतिक्रिया को ध्यान में रखती है। हालांकि, इसके लिए पर्याप्त रूप से दीर्घावधि के लिए प्रतिनिधि जल स्तर मापन की आवश्यकता होती है अर्थात कम से कम 5 साल की अवधि में तीन स्थानिक रूप से वितरित अवलोकन कुएं, या प्रति 100 वर्ग किमी में एक अवलोकन कुआँ होना आवश्यक है।

भूजल स्तर में उतार-चढ़ाव विधि

मानसून के मौसम में वर्षा पुनर्भरण के आंकलन के लिए भूजल स्तर में उतार-चढ़ाव विधि का उपयोग किया जाता है। चूंकि सभी सिंचित क्षेत्रों में सतही और भूजल का संयुग्मी उपयोग होता है, जिसे भूजल संतुलन समीकरण द्वारा ज्ञात किया जाता है

यद्यपि, वर्तमान अध्ययन में, राष्ट्रीय जल संतुलन समिति के निर्णय के अनुसार, भूजल संतुलन समीकरण में जलीय प्रणाली के साथ पार्श्व प्रवाह पर विचार नहीं किया गया है क्योंकि ऐसे अनुमान उपलब्ध नहीं हैं। सीमा से अधिक अंतर्वाह और बहिर्वाह मानों का प्रयोग एक दूसरे को संतुलित करने के लिए किया जाता है। सरिता मापन स्थलों के प्रामाणिक आंकड़ों की कमी और विश्वसनीय अंकीय निदर्शन और विश्लेषणात्मक समाधानों की अनुपस्थिति के कारण आधार प्रवाह और सरिता पुनः पूरण का अध्ययन में उपयोग भी नहीं किया गया है। द्रवीय रूप से सम्बद्ध जलदायक से लंबवत प्रवाह पर भी ध्यान नहीं दिया गया है क्योंकि वर्तमान में जलीय ज्यामिति और अन्य प्राचल ज्ञात हैं। जीईसी-15 के अनुसार वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन हानि को नगण्य माना गया है क्योंकि जल स्तर की गहराई भूमि स्तर के नीचे 1.0 मीटर से अधिक है।

वर्षा पुनः पूरण का सामान्यीकरण

किसी वर्ष के लिए मानसून के मौसम में भूजल स्तर में वृद्धि, विशिष्ट उपज, पुनर्भरण की गणना के लिए क्षेत्र, मानसून के मौसम में भूजल निकासी, मानसून के मौसम में नहरों से पुनर्भरण, मानसून के मौसम में धारा वहिकाओं से पुनःपूरण, मानसून के मौसम में सतही जल सिंचाई से पुनर्भरण, मानसून के मौसम में भूजल सिंचाई से पुनर्भरण, मानसून के मौसम में जल संरक्षण संरचनाओं से पुनर्भरण, एवं मानसून के मौसम में टैंकों एवं तालाबों से पुनर्भरण को अनुमानित वर्षा पुनर्भरण के रूप में दर्शाया जाता है।

वर्षा पुनर्भरण को सामान्य मानसून वर्षा के अनुरूप पुनर्भरण का अनुमान लगाने के लिए पुनर्भरण और वर्षा के बीच एक रैखिक संबंध का उपयोग करके उसे सामान्यीकृत किया जाता है।

वर्षा रिसाव घटक विधि

वर्षा से पुनर्भरण का अनुमान निम्नलिखित संबंधों का उपयोग करके लगाया गया है-

$$Rrf = RF_F * A * (R-a)/1000$$

जहां, Rrf = हेक्टेयर मीटर में वर्षा पुनर्भरण, A = क्षेत्रफल हेक्टेयर में RF_F = वर्षा अन्तःस्पंदन गुणांक R = वर्षा (मिमी में) और a = न्यूनतम सीमा मान, जिसके ऊपर वर्षा (मिमी में) भूजल पुनर्भरण को प्रेरित करती है।

प्रतिशत विचलन

जल स्तर अस्थिरता और वर्षा अंतःस्यंदन कारक विधि का उपयोग करके सामान्य मानसून मौसम वर्षा के लिए वर्षा पुनर्भरण की गणना के बाद इन दोनों अनुमानों की एक दूसरे के साथ तुलना की जाती है। प्रतिशत विचलन (PD) जो पूर्व के प्रतिशत के रूप में व्यक्त दोनों प्राचलों के मध्य का अन्तर है, इसकी गणना के लिए अनिवार्य प्राचलों में सामान्य मानसून के मौसम के लिए पुनर्भरण, जल स्तर उतार-चढ़ाव विधि, वर्षा तथा वर्षा अन्तः स्यंदन गुणांक विधि द्वारा अनुमानित वर्षा प्रमुख हैं।

अन्य स्रोतों से पुनःपूरण

अन्य स्रोतों से पुनःपूरण में नहरों, सतही जल सिंचाई, भूजल सिंचाई, टैंकों और तालाबों और सिंचित क्षेत्रों में जल संरक्षण संरचनाओं से पुनर्भरण शामिल हैं, जबकि असिंचित क्षेत्रों में सतही जल सिंचाई, भूजल सिंचाई, टैंक और तालाबों के कारण और जल संरक्षण संरचनाओं द्वारा पुनर्भरण होता है।

सतही जल सिंचाई से पुनःपूरण

सतही जल सिंचाई के कारण पुनःपूरण के अन्तर्गत नहर आउटलेट के माध्यम से या लिफ्ट सिंचाई योजनाओं द्वारा पुनः पूरण का अनुमान लगाया जाता है। इसके अतिरिक्त इस पद्धति के अन्तर्गत टैंकों और तालाबों के कारण होने वाले पुनःपूरण का तथा जल संरक्षण संरचनाओं के कारण होने वाले पुनःपूरणः का भी अनुमान लगाया गया है:

भूजल पुनःपूरण की तकनीकें

गैर-मानसून सीजन के दौरान पुनःपूरण

जब गैर-मानसून मौसम की वर्षा सामान्य वार्षिक वर्षा के 10% से अधिक हो तब गैर-मानसून मौसम के दौरान वर्षा पुनर्भरण, का अनुमान केवल वर्षा अन्तःस्यंदन गुणांक विधि का उपयोग करके लगाया जाता है। गैर-मानसून मौसम के दौरान उप-इकाई के लिए कुल पुनर्भरण, गैर-मानसून वर्षा पुनर्भरण और अन्य स्रोतों से पुनर्भरण का योग होता है।

कुल वार्षिक भूजल पुनर्भरण

उप इकाई के लिए कुल वार्षिक भूजल पुनर्भरण, मानसून और गैर-मानसून मौसमों के दौरान पुनर्भरण का योग है।

वार्षिक निष्कर्षणीय भूजल पुनर्भरण

चूंकि, मूल्यांकन इकाइयों के लिए नदी के स्थिति आंकड़े और प्राकृतिक निस्सरण के मात्रात्मक मूल्यांकन के लिए विस्तृत आंकड़े उपलब्ध न होने के कारण वार्षिक पुनर्भरण के 10 प्रतिशत भाग को रोक कर शेष 90 प्रतिशत भाग को शुद्ध वार्षिक भूजल उपलब्धता के रूप में लिया गया है।

भूजल निष्कर्षण का अनुमान

भूजल ड्राफ्ट या निष्कर्षण का आंकलन सभी उपयोगों जैसेः भूजल निष्कर्षण सिंचाई के लिए भूजल निष्कर्षण, घरेलू उपयोग के लिए भूजल निष्कर्षण, और औद्योगिक उपयोगों के लिए भूजल निष्कर्षण द्वारा किया गया है।

सिंचाई के लिए भूजल निष्कर्षण (GE_{IRR}):

सिंचाई के लिए भूजल निष्कर्षण ज्ञात करने के लिए GEC-15 की संस्तुति के अनुसार, इकाई ड्राफ्ट विधि का उपयोग किया गया है। एक आंकलन इकाई में प्रत्येक प्रकार की भूजल संरचना के मौसम-वार इकाई प्रारूप का अनुमान लगाया गया और इस इकाई के मसौदे को उस विशेष संरचना द्वारा मौसम-वार भूजल निष्कर्षण प्राप्त करने के लिए प्रत्येक प्रकार की संरचनाओं की संख्या से गुणा किया गया। इस उद्देश्य के लिए 2005-06 के लघु सिंचाई जनगणना के आंकड़ों का उपयोग किया गया है।

घरेलू उपयोग के लिए भूजल निष्कर्षण (GE_{DOM}):

घरेलू उपयोग के लिए भूजल निष्कर्षण (GE_{DOM}), घरेलू उपयोग के लिए भूजल निष्कर्षण के आंकलन की तकनीके हैं। हालांकि, संयुग्मी उपयोग विधि, जिसमें जनसंख्या को प्रति व्यक्ति उपभोग से गुणा किया जाता है, को सामान्यतः प्रति व्यक्ति प्रतिदिन/लीटर में व्यक्त किया जाता है।

औद्योगिक उपयोग के लिए भूजल निष्कर्षण (GE_{IND}):

औद्योगिक उपयोग के लिए निष्कर्षण के आंकलन के लिए अपनाई गई विधि इकाई ड्राफ्ट विधि है। इस पद्धति में, औद्योगिक भूजल निष्कर्षण प्राप्त करने के औद्योगिक उद्देश्य के लिए उपयोग किए जाने वाले कुओं की संख्या से प्रत्येक प्रकार के कुओं के इकाई ड्राफ्ट को गुणा किया जाता है।

भूजल निष्कर्षण के विभिन्न चरण

सभी उपयोगों के लिए मौजूदा सकल भूजल निष्कर्षण, सिंचाई और अन्य सभी उद्देश्यों के लिए मौजूदा सकल भूजल निष्कर्षण को संदर्भित करता है। भूजल निष्कर्षण के चरण का अध्ययन निम्नानुसार किया गया है,

भूजल निष्कर्षण का चरण (%) = (सभी उपयोगों के लिए मौजूदा सकल भूजल निष्कर्षण X 100)/शुद्ध वार्षिक भूजल उपलब्धता

मूल्यांकन इकाइयों का वर्गीकरण

जैसा कि राष्ट्रीय जल नीति, 2012 में बल दिया गया है, एक आंकलन इकाई में भूजल की स्थिति का आंकलन करते समय भूजल संसाधनों की मात्रा और गुणवत्ता का सम्मिश्रण आवश्यक है। इसलिए, लवणता प्राचल के लिए जहां जल की गुणवत्ता अनुमेय सीमा से अधिक है वहां संसाधनों का आंकलन अलग से किया गया है। भूजल निकासी के विभिन्न चरणों द्वारा परिभाषित भूजल मात्रा की स्थिति के आधार पर वर्गीकरण के लिए निम्न मानदंडों का प्रयोग किया गया हैं।

भूजल निष्कर्षण का चरण वर्ग

$\leq 70\%$ सुरक्षित

$\geq 70\%$ and $<90\%$ अर्ध-संकटमय

$> 90\%$ and $\leq 100\%$ संकटमय

$> 100\%$ अत्यधिक शोषित

विशिष्ट परिस्थितियों में अतिरिक्त संभावित संसाधन

जलभराव और उथले जल स्तर वाले क्षेत्रों में संभावित संसाधन विकास के लिए उपलब्ध जल की मात्रा आमतौर पर दीर्घकालिक औसत पुनर्भरण या दूसरे शब्दों में ''गतिशील संसाधन'' तक सीमित होती है। लेकिन जिस क्षेत्र में भूजल स्तर, भूमि स्तर से 5 मीटर से कम है या जलभराव वाले क्षेत्रों में, भूमि स्तर से 5 मीटर नीचे तक के संसाधन उपलब्ध हैं वहां प्राकृतिक संसाधनों से पुनःपूरण प्राप्त करने के लिए पंपिंग द्वारा जल निकासी कर पुनर्भरण के लिए अतिरिक्त रिक्त स्थान बनाया जा सकता है।

इन-स्टोरेज भूजल संसाधनों या स्थैतिक भूजल संसाधनों का आंकलन

GEC-2015 में संस्तुति की गई है कि उपलब्ध गहराई तक जलभृतों के भूजल संसाधनों के भंडारण का अनुमान लगाया जाए। NAQUIM योजना के अनुसार जलभृत मानचित्र 300 मीटर गहराई तक तैयार किए गए हैं तथा जलदायकों का चयन किया गया है और इस प्रकार 300 मीटर तक की गहराई तक उपलब्ध जलदायकों के संसाधनों का अनुमान लगाया गया है। स्थिर या इन-स्टोरेज भूजल संसाधनों की गणना जलदायक की मोटाई और जलीय सामग्री की विशिष्ट उपज को चित्रित करने के बाद की जा सकती है। गणना निम्न प्रकार से की जा सकती हैः-

$SGWR = A * (Z_2 - Z_1) * S_Y$

जहां, SGWR = स्थिर या इन-स्टोरेज भूजल संसाधन, A: आंकलन इकाई का क्षेत्र, Z_2: अपरिष्कृत जलभृत का निचला भाग, Z_1: पूर्व-मानसून जल स्तर, और S_Y: भंडारण क्षेत्र में विशिष्ट उपज है।

सपंर्क करें:
गोपाल कृष्ण एवं अंजु चौधरी
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
रुड़की

विपिन कुमार त्यागी

वर्षा जल संग्रहण

भारत के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न समय पर बहुत अधिक वर्षा होती है ।इसकी अधिक मात्रा के कारण एक ही समय पर दो भिन्न स्थलों पर बाढ़ और सूखे की समस्याओं के कारण हानि का सामना करना पड़ता है । यदि हम वर्षा जल संग्रहण का उचित प्रबंधन करें तो हम पेय जल, कृषि जल एवं जल विद्युत का उचित ढंग से प्रबंधन कर सकते हैं ।

आज समस्त विश्व पेयजल की कमी से जूझ रहा है। पृथ्वी पर पीने योग्य जल की मात्रा 1% से भी कम है जबकि पृथ्वी पर जनसंख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। बढ़ती जनसंख्या के कारण पृथ्वी पर जल की मांग में भी दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है। इसी अनुपात में पीने योग्य जल की मांग में भी दिन-प्रतिदिन वृद्धि हो रही है। ऐसा नहीं है कि जल कम हो रहा है, जल तो पृथ्वी पर करीब 71% है, लेकिन पीने योग्य जल की मात्रा अब कम होती जा रही है। हमारे दैनिक कार्यों के कारण पेय जल कम होता जा रहा है। उपलब्ध जल भी हमारे दैनिक कार्यों, फैक्ट्रियों के प्रदूषित जल, पॉलिथीन् के प्रयोगों, दैनिक जीवन में रसायनों के प्रयोग तथा मानव एवं जानवरों के दैनिक अपशिष्ट को जल में प्रवाहित करने से प्रदूषित होता जा रहा है। कृषि, औद्योगिक तथा दैनिक आवश्यकताओं के लिए जल के अंधाधुंध दोहन से जल की उपलब्धता कम होती जा रही है। यदि हमने अभी से इसे नहीं रोका तो भविष्य में पीने योग्य जल उपलब्ध ही नहीं रहेगा। ऐसे में हमारा जीवन ही खतरे में होगा। अतः हमें दो मोर्चो पर एक साथ कार्य करना होगा। पहला मोर्चा; पीने योग्य जल का सही एवं उचित प्रयोग, इसमें जल की बर्बादी को रोकना, कृषि में सिचाई के आधुनिक तरीकों का प्रयोग करना, जल का प्रदूषण रोकना एवं आधुनिक बायोडिग्रेडेबल टॉयलेट का प्रयोग करना आदि शामिल हैं। दूसरा मोर्चा; जिसमें रेन वाटर हार्वेस्टिंग अर्थात वर्षा जल संरक्षण शामिल है। भारत के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न समय पर बहुत अधिक वर्षा होती है। इसकी अधिक मात्रा के कारण एक ही समय पर दो भिन्न स्थलों पर बाढ़ और सूखे की समस्याओं के कारण हानि का सामना करना पड़ता है। यदि हम वर्षा जल संग्रहण का उचित प्रबंधन करें तो हम पेय जल, कृषि जल एवं जल विद्युत का उचित ढंग से प्रबंधन कर सकते हैं। इसके लिए हमें निम्नलिखित कार्य करने होंगे।

1. अपने पुराने जलाशयों का नवीनीकरण करना एवं जगह-जगह पर नए जलाशयों का निर्माण करना

इससे हम जगह-जगह वर्षा जल को एकत्रित कर सकते हैं। यह जल पृथ्वी के जल को पुनःपूरित करके भूजल की मात्रा में वृद्धि करेगा। यह जल कृषि तथा जानवरों के पीने के लिए भी उपलब्ध होगा। इसमें हमें ज्यादा जगह की भी जरुरत नहीं होगी तथा यह बाढ़ को रोकने में भी सहायक सिद्ध होगा।

2. वर्षा जल पुनः पूरण कूपों का निर्माण

पहले कृषि के लिए कुओं का निर्माण किया जाता था। कालान्तर में इन कुओं को बन्द कर दिया गया। हम इन कुओं का नवीनीकरण करके एवं जगह-जगह नए कुओं का निर्माण करके वर्षा जल का प्रयोग पृथ्वी जल को पुनःपूरित करने में कर सकते हैं। ये कुएं रिचार्ज वेल का काम करेंगे जिनसे वर्षा जल सीधे पृथ्वी के अंदर जा सकेगा यह कुएं वर्षा जल संग्रहण में मील का पत्थर साबित होंगे।

3. जगह-जगह छोटे बांध बनाना और उनसे वर्षा जल संग्रहण करना

वर्षा जल संग्रहण के लिए हमें

जगह-जगह नदियों पर छोटे-छोटे बांध बनाने होंगे। भारत नदियों का देश है, वर्षा का जल इन्हीं नदियों से होकर बाढ़ का रूप ले लेता है जिससे हमें जान-माल की भयंकर हानि का सामना करना पड़ता है। छोटे-छोटे बांधों के निर्माण में पूंजी भी कम लगती है तथा इनका निर्माण भी सरल है। इनसे बाढ़ की समस्या, सिंचाई हेतु आवश्यकतानुसार जल की उपलब्धता, भूजल का पुनःपूरण, लघु जल विद्युत परियोजनाओं से विद्युत उत्पादन तथा हमारी पेय जल की समस्या का समाधान होगा।

वर्षा जल संग्रहण के लिए हमें जगह-जगह नदियों पर छोटे-छोटे बांध बनाने होंगे। भारत नदियों का देश है, वर्षा का जल इन्हीं नदियों से होकर बाढ़ का रूप ले लेता है जिससे हमें जान-माल की भयंकर हानि का सामना करना पड़ता है। छोटे-छोटे बांधों के निर्माण में पूंजी भी कम लगती है तथा इनका निर्माण भी सरल है। इनसे बाढ़ की समस्या, सिंचाई हेतु आवश्यकतानुसार जल की उपलब्धता, भूजल का पुनःपूरण, लघु जल विद्युत परियोजनाओं से विद्युत उत्पादन तथा हमारी पेय जल की समस्या का समाधान होगा।

4. बड़े-बड़े बाँधों का निर्माण करना

वर्षा जल संरक्षण में बड़े-बड़े बाँधों का निर्माण भी महत्त्वपूर्ण है। बड़े बाँध बाढ़ को रोकने में सहायक होते हैं। इनसे वृहत्त मात्रा में विद्युत उत्पादन होता है। यह भूजल को पुनः पूरित भी करते हैं। इनसे पूरे वर्ष कृषि के लिए जल उपलब्ध रहता है तथा यह शहरों के लिए पेय जल आपूर्ति का एक प्रमुख साधन भी है। हम पहाड़ों पर भी आसानी से बड़े बाँधों का निर्माण कर सकते हैं।

5. नदियों के अन्तःयोजन से वर्षा जल संग्रहण

यदि हम नदियों को आपस में जोड़ दें तो हमें पूरे देश में पूरे वर्ष जल मिलता रहेगा तथा बाढ़ की समस्या का निदान भी हो जायेगा। भारत में अलग-अलग समय में अलग-अलग जगह पर वर्षा होती है। जिसके कारण देश को एक ही समय पर बाढ़ एवं सूखे का सामना करना पड़ता है। यदि देश की मुख्य नदियों को परस्पर जोड़ दिया जाए तो बाढ़ की समस्या का निदान भी हो जायेगा और वर्षा जल संग्रहण भी हो जायेगा। इससे पूरे भारत में पेय जल की समस्या का निदान भी हो जायेगा।

6. मकान के नीचे वर्षा जल संग्रहण टैंक का निर्माण करना

यदि सरकार नियम बना दे तथा लोगों को प्रेरित करे कि वह अपने मकान के बेसमेंट में (भूतल से नीचे) एक बड़ा जल संचयन टैंक बनाना शुरू कर दें तो इससे हमारी अनेक समस्याओं का समाधान हो सकता है। इसमें वर्षा के समय जल संग्रहण किया जा सकता है। इसमें दो टैंक बनाने होंगे एक टैंक में जल संग्रहण होगा दूसरे टैंक से अतिरिक्त जल भूजल को पुनःपूरित करेगा। इस जल का प्रयोग हम पेड़-पौधों को जल देने में, कार को धोने में, फ्लोर को धोने में तथा टॉयलेट फ्लश करने आदि में कर सकते हैं।

7. स्कूल, कॉलेजों एवं सरकारी बिल्डिंग में जल संग्रहण

यदि हम सभी स्कूल, कॉलेज और सरकारी भवनों में जल संचयन अनिवार्य कर दें तो हम वृहत्त मात्रा में जल का संरक्षण और संग्रहण कर सकते हैं। इस कार्य के लिए हमें सभी को प्रेरित करना होगा। भवन निर्माण में इसे आवश्यक बनाना होगा ताकि सभी भवनों में जल संरक्षण किया जा सके। इस जल का प्रयोग नर्सरी में पानी देने, पेड़ पौधों में पानी देने, फर्श की सफाई करने एवं टॉयलेट फ्लश करने आदि में किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त हम ऑनलाइन/ऑफलाइन शपथ एवं क्विज, रैलियों, नुक्कड़ नाटकों, सोशल मीडिया, वाल पेंटिंग, वाद-विवाद, प्रदर्शनी आदि के द्वारा भी जन जागरूकता फैला सकते हैं।

हमने अभी तक करीब 36,000 से ज्यादा व्यक्तियों, छात्रों एवं शिक्षकों के साथ ऑनलाइन जल संरक्षण शपथ तथा विभिन्न स्कूलों में करीब 20,000 छात्रों एवं शिक्षकों के साथ ऑफलाइन शपथ का आयोजन किया है तथा मैं फेसबुक पर ''सेव वाटर सेव फ्यूचर'' नामक एक अन्तर्राष्ट्रीय समूह का संचालन कर रहा हूँ। जिसमें 859 सदस्य हैं तथा एक पेज सेव वाटर सेव फ्यूचर है। जन जागरूकता के लिए हम ऑनलाइन एवं ऑफलाइन दोनों माध्यम से शपथ, क्विज, पेंटिंग प्रतियोगिता, वाल पेंटिंग, प्रदर्शनी, वेबिनार, वाद-विवाद, विशेषज्ञ सत्र, रैली आदि का भी आयोजन कर रहे हैं ताकि ज्यादा से ज्यादा लोगों को इस मुहिम से जोड़कर जल संरक्षण कर सकें। जन जागरूकता से ही यह कार्य संभव हो सकता है।

सपंर्क करें:
विपिन कुमार त्यागी
केन्द्रीय विद्यालय, बावली, बागपत
उत्तर प्रदेश-250 621

डॉ. लवकुश पटेल

21 वीं शताब्दी में वैश्विक ऊष्णता और हिमनद गलन में वृद्धिः एक वैश्विक समस्या

वैश्विक तापमान में वृद्धि के कई तात्कालिक और दीर्घकालिक परिणामों में चरम मौसम की घटनाओं की बढ़ती आवृत्ति और तीव्रता, हीटवेव, सूखा, भारी वर्षा और तूफान आदि प्रमुख हैं। जिनके कारण मानव स्वास्थ्य, कृषि, मूल संरचनाओं और प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों को महत्वपूर्ण जोखिमों का सामना करना पड़ रहा है। उदाहरणार्थः हाल ही में यूरोप और उत्तरी अमेरिका में अत्यधिक तापमान ने जंगल की आग और सार्वजनिक स्वास्थ्य और कृषि पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है।

हाल के वर्षों में, पृथ्वी की जलवायु प्रणाली में अप्रत्याशित रूप से परिवर्तन हो रहा है और वर्ष 2023 को इस परिवर्तन के लिए एक महत्वपूर्ण वर्ष माना गया जिसमें वैश्विक तापमान में वृद्धि देखी गई जो विगत वर्षों की तुलना में अधिक रही। NASA के अनुसार वर्ष 2023 में पृथ्वी का माध्य सतही तापमान सबसे गर्म पाया गया। पिछले दशक को विशेष रूप से सर्वाधिक गर्म अवधि के रूप में रिकार्ड किया गया है। वातावरण में ऊष्णता में निरन्तर वृद्धि, पृथ्वी की जलवायु में दीर्घकालिक परिवर्तन का स्पष्ट संकेत प्रदान करती है। जलवायु परिवर्तन की इस प्रवृत्ति का समर्थन राष्ट्रीय महासागरीय और वायुमंडलीय प्रशासन (NOAA) जैसे अन्य प्रतिष्ठित संगठनों द्वारा स्वतंत्र रूप से किये गये विश्लेषणों में भी किया गया है। वर्ष 2023 में माध्य तापमान, 19वीं सदी के अंत (1850-1900) के माध्य तापमान की तुलना में लगभग 2.45 डिग्री फारेनहाइट (1.36 डिग्री सेल्सियस) अधिक रिकार्ड किया गया था। विगत दशक में रिकार्ड किया गया अधिकतम तापमान वैश्विक तापमान में चिंताजनक वृद्धि को प्रदर्शित करता है। वैश्विक सतही तापमान में उल्लेखनीय वृद्धि, जलवायु परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण संकेत है। तापमान में वृद्धि की प्रवृत्ति के व्यापक प्रभाव, समुद्र जल स्तर और पारिस्थितिक तंत्रों को प्रभावित कर रहे हैं। पृथ्वी की जलवायु प्रणाली में परिवर्तन का प्रमुख कारण जीवाश्म ईंधन का जलना, वनों की अत्यधिक कटाई और औद्योगिक प्रक्रियाओं से उत्पन्न ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन जैसी मानवीय गतिविधियां हैं।

वैश्विक तापमान में वृद्धि के कई तात्कालिक और दीर्घकालिक परिणामों में चरम मौसम की घटनाओं की बढ़ती आवृत्ति और तीव्रता, हीटवेव, सूखा, भारी वर्षा और तूफान आदि प्रमुख हैं। जिनके कारण मानव स्वास्थ्य, कृषि, मूल संरचनाओं और प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों को महत्वपूर्ण जोखिमों का सामना करना पड़ रहा है। उदाहरणार्थः हाल ही में यूरोप और उत्तरी अमेरिका में अत्यधिक तापमान ने जंगल की आग और सार्वजनिक स्वास्थ्य और कृषि पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है।

वातावरण में CO_2 के स्तर में हो रही निरन्तर वृद्धि ऊष्णता वृद्धि प्रवृत्ति का एक प्रमुख चालक है। CO_2 एक ग्रीनहाउस गैस है जिसके कारण पृथ्वी के वातावरण के तापमान में वृद्धि होती है परिणामतः इसका ग्रीनहाउस पर प्रभाव पड़ता है। हाल ही में CO_2 का स्तर 400 ppm से अधिक पाया गया जो विशेष रूप से चिंताजनक है क्योंकि यह लाखों वर्षों में प्रथम बार इस स्तर पर पहुंचा है। वर्ष 2022 में मानव गतिविधियों के कारण CO_2 के तापमान का वार्षिक माध्य 417 ppm. तक पहुंचना, CO_2

स्तर में तीव्र वृद्धि को दर्शाता है। CO_2 स्तर और वैश्विक तापमान के मध्य पारस्परिक संबंध जलवायु विज्ञान में प्रदर्शित किया गया है। CO_2 और अन्य ग्रीनहाउस गैसों (जैसे मीथेन (CH_4) और नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O)) की उच्च सांद्रता ग्रीनहाउस प्रभाव में वृद्धि करती है जिससे सतही तापमान में वृद्धि होती है। हाल के वर्षों में CO_2 के स्तर में वृद्धि के कारणों में जीवाश्म ईंधन (कोयला), तेल और प्राकृतिक गैस का जलना, वनों की कटाई और औद्योगिक प्रक्रियाएं शामिल हैं। जीवाश्म ईंधन जलने पर वातावरण में बड़ी मात्रा में

पैट्रोल-डीजल वाहनों से बढ़ता वायु प्रदूषण

CO_2 उत्सर्जित करता है जबकि वनों की कटाई के माध्यम से CO_2 को अवशोषित करने की पृथ्वी की क्षमता घटती है। सीमेंट उत्पादन जैसी औद्योगिक प्रक्रियाएं भी CO_2 उत्सर्जन में योगदान करती हैं।

वैश्विक तापमान में वृद्धि का एक सबसे स्पष्ट और महत्वपूर्ण कारण हिमनदों का तेजी से पिघलना है। हिमनद पृथ्वी की जलवायु प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे बड़ी मात्रा में स्वच्छ जल संग्रहीत करते हैं और समुद्र जल स्तर और स्थानीय जलवायु को नियंत्रित करने में सहायता करते हैं। तापमान बढ़ने के कारण, विश्व के हिमनद अभूतपूर्व दरों पर सिकुड़ रहे हैं। उपग्रह आंकड़ों के उपयोग द्वारा किये गये हाल के अध्ययन हिमनदों के हिमगलन की एक विस्तृत और व्यापक तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। वर्ष 2000 और 2019 के बीच, हिमनद गलन के परिणामस्वरूप हिमनदों में प्रति वर्ष लगभग 267 गीगाटन एकत्रित हिम की हानि हुई है। इस हिम-हानि की मात्रा समुद्र स्तर में वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान प्रदर्शित करती है जो कुल वृद्धि का लगभग 21% है। इससे भी अधिक चिंताजनक विषय है कि हिमगलन की गति में निरन्तर वृद्धि हो रही है। प्रत्येक दशक में, हिमनदों में प्रति वर्ष 48 गीगाटन अतिरिक्त बर्फ की हानि हो रही हैं, जो समुद्र स्तर में वृद्धि को और तीव्र कर रही है।

हिमनदगलन की दर विभिन्न क्षेत्रों में काफी भिन्न होती है। यह विविधताएं स्थानीय जलवायु स्थितियों, भौगोलिक विशेषताओं और अन्य कारकों द्वारा प्रभावित होती हैं। उदाहरणार्थ, उत्तर-पश्चिमी अमेरिका में हिमनद तेजी से पिघल रहे हैं, जबकि उत्तर अटलांटिक क्षेत्र में हिमनद हानि की दर धीमी है। हिमालय में, यहां तक कि एक ही क्षेत्र के भीतर हिमनद हानि की दर व्यापक रूप से भिन्न होती है। उत्तर-पश्चिमी अमेरिका में, हिमनद तेजी से पिघल हो रहे हैं। इस क्षेत्र में पिछले कुछ दशकों में तापमान में उल्लेखनीय वृद्धि पाई गई है, जिससे हिमनद की हानि में तेजी आई है। इन हिमनदों के तेजी से पिघलने के कारण क्षेत्रीय जल संसाधनों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है जो समुद्र जल स्तर की वृद्धि में योगदान प्रदान करता है। इस क्षेत्र में हिमनद-हिम की हानि का प्रभाव स्थानीय पारिस्थितिक तंत्रों और समुदायों पर भी पड़ता है, जो स्वच्छ जल के लिए हिमनद-द्वारा पोषित नदियों पर निर्भर हैं। इसके विपरीत, उत्तरी अटलांटिक क्षेत्रों में हिमनद हानि की दर धीमी है। इस धीमी हानि का आंशिक कारण क्षेत्रीय जलवायु स्थितियाँ हैं, जो हिमनद के तेजी से गलित होने के लिए कम अनुकूलित हैं। हिमालय जिसे उनके विशाल हिम भंडारों के कारण अक्सर "तीसरा ध्रुव" कहा जाता है, हिमनद गतिशीलता की एक जटिल तस्वीर प्रस्तुत करता है। इस क्षेत्र में हिमनद हानि की दर व्यापक रूप से भिन्न होती है, जो स्थानीय जलवायु स्थितियों, सतह पर मलबे के आवरण और हिमनदीय झीलों के गठन से प्रभावित होती है। हिम हानि दरों में उच्च अंतः-क्षेत्रीय परिवर्तनशीलता, हिमालय के साथ-साथ जलवायु परिवर्तन से परे हिमनद हानि को बढ़ाने वाले अतिरिक्त कारकों के प्रभाव को दर्शाती है।

हिमनदीय झीलों का गठन और विस्तार हिमनद हानि को तीव्र करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हिमनद झीलें, हिमनदों के गलन के साथ बनती हैं जो अक्सर मलबे से आच्छादित गलित हिमनदों पर सतही तालाबों के सम्मिश्रण के परिणामस्वरूप निर्मित होती हैं। ये झीलें हिम हानि की प्रक्रिया को तीव्र कर सकती हैं, जैसे कि कैल्विंग के माध्यम से जहां बर्फ के टुकड़े जल में परिवर्तित होते हैं, और हिमनद गलन के माध्यम से, जहां हिम, जल में परिवर्तित होती है। यह प्रतिक्रिया लूप हिमनद के पीछे हटने और झील के विस्तार को और अधिक बढ़ा देती है, जिससे कुल हिम हानि और अधिक होती है। हिमनदीय झीलों का विस्तार कई प्रभाव डाल सकता है। सबसे पहले, यह कैल्विंग और हिम गलन की दर को बढ़ा सकता है, जिससे हिम हानि की दर तीव्र होती है। दूसरा, इन झीलों का विस्तार आस-पास के क्षेत्रों को अस्थिर कर सकता है, जिससे हिमनदीय झील विस्फोट बाढ़ (GLOFs) का खतरा बढ़ जाता है। यह बाढ़ अनुप्रवाह समुदायों, मूल संरचनाओं और पारिस्थितिक तंत्रों पर विनाशकारी प्रभाव डाल सकती है। हिमनदीय झीलों से सम्बद्ध आपदा प्रबंधन के लिए विस्तृत निगरानी और सुदृढ़ भविष्यवाणी निदर्श को विकसित करने की आवश्यकता है जिससे संभावित आपदाओं का अनुमान लगाया जा सके और उन्हें कम किया जा सके।

तीव्र हिमनद गलन के परिणामस्वरूप समुद्र जल स्तर, में वृद्धि हो रही है। समुद्र जल स्तर में वृद्धि, तटीय समुदायों, पारिस्थितिक तंत्रों और मूल संरचनाओं के लिए महत्वपूर्ण खतरा है। इसके अतिरिक्त समुद्र स्तर में वृद्धि उच्च समुद्र जल स्तर बाढ़, कटाव, और तूफानी लहरों का खतरा बढ़ाती है जो संवेदनशील तटीय क्षेत्रों पर विनाशकारी प्रभाव डाल सकती है। समुद्र स्तर में वृद्धि में हिमनदों का योगदान विशेष रूप से चिंताजनक है। यह प्रवृत्ति जलवायु परिवर्तन से निपटने और इसके प्रभावों को कम करने के उपायों को तत्काल लागू करने की तात्कालिकता को प्रदर्शित करती है।

तीव्र हिमनद गलन के परिणामस्वरूप समुद्र जल स्तर, में वृद्धि हो रही है। समुद्र जल स्तर में वृद्धि, तटीय समुदायों, पारिस्थितिक तंत्रों और मूल संरचनाओं के लिए महत्वपूर्ण खतरा है। इसके अतिरिक्त समुद्र स्तर में वृद्धि उच्च समुद्र जल स्तर, बाढ़, कटाव, और तूफानी लहरों का खतरा बढ़ाती है जो

संवेदनशील तटीय क्षेत्रों पर विनाशकारी प्रभाव डाल सकती है। समुद्र स्तर में वृद्धि में हिमनदों का योगदान विशेष रूप से चिंताजनक है। यह प्रवृत्ति जलवायु परिवर्तन से निपटने और इसके प्रभावों को कम करने के उपायों को तत्काल लागू करने की तात्कालिकता को प्रदर्शित करती है।

हिमनदों से हिम हानि की पद्धति और चालकों को समझना, इसकी भविष्यवाणी के लिए उपयुक्त निदर्श को विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण है। ये निदर्श हिमनद गतिशीलता, समुद्र जल स्तर में वृद्धि और जल संसाधनों और प्राकृतिक खतरों के संभावित प्रभावों पर भविष्य के परिवर्तनों की भविष्यवाणी करने के लिए अति आवश्यक हैं। श्रेष्ठ निदर्श वैज्ञानिकों और नीति निर्माताओं को हिमनद गलन और जलवायु परिवर्तन के परिणामों का अनुमान लगाने और उनके परिणामों से बचाव की तैयारी करने में सहायता कर सकते हैं। उपग्रह आंकड़ों और उच्च-रिजॉल्यूशन अवलोकनों में हाल की प्रगति ने हिमनद गतिशीलता में बहुमूल्य अंतदृष्टि प्रदान की है। यद्यपि भविष्यवाणी के लिए निदर्श को और अधिक उपयुक्त बनाने के लिए अभी भी अधिक व्यापक और विस्तृत आंकड़ों की आवश्यकता है। विशेष रूप से दूरस्थ और अध्ययन रहित हिमनदों का प्रबोधन, हिमनद के व्यवहार और जलवायु परिवर्तन के प्रति उनकी प्रतिक्रिया को बेहतर ढंग से समझने के लिए आवश्यक है।

हिमनद से हिम हानि और वैश्विक तापमान में वृद्धि के निष्कर्ष जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को प्रबंधित करने के लिए आवश्यक रणनीतियों की आवश्यकता को दर्शाते हैं। इन रणनीतियों में स्थानीय और वैश्विक चुनौतियां, उदाहरणतः जल संसाधन प्रबंधन आपदा जोखिम में कमी और समुद्र जल स्तर में वृद्धि को कम करना शामिल हैं। कई क्षेत्रों के लिए, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ हिमनद-पोषित नदियाँ कृषि, पेयजल और जलविद्युत के

तापमान में वृद्धि के कारण जंगल की आग का एक दृश्य

लिए जल प्रदान करती हैं, हिमनद स्वच्छ जल के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। ऐसी अवस्था में जब हिमगलन जल की मांग की आपूर्ति के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन होता है, हिमनद से हिम की हानि, शुष्क मौसम के दौरान जल की उपलब्धता को कम कर सकती है। सतत जल प्रबंधन पद्धतियों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए जल भंडारण की मूल संरचनाओं में सुधार, जल उपयोग दक्षता में वृद्धि और जल संरक्षण उपायों में वृद्धि महत्वपूर्ण तकनीकें हैं। हिमनदीय झील विस्फोट बाढ़ (GLOFs) जैसी प्राकृतिक आपदाओं के कारण बढ़ते जोखिमों में कमी के लिए आवश्यक उपायों की आवश्यकता होती है। इनमें हिमनदीय झीलों का प्रबोधन, प्रारंभिक चेतावनी प्रणाली को लागू करना और आपातकालीन प्रतिक्रिया योजनाओं को विकसित करना शामिल है। जन-जागरूकता और बाढ़ से पूर्व आवश्यक तैयारियाँ भी इन खतरों के प्रभाव को कम करने के लिए महत्वपूर्ण हैं। समुद्र स्तर में वृद्धि, तटीय समुदायों और पारिस्थितिक तंत्रों के लिए एक महत्वपूर्ण खतरा है। समुद्र जल स्तर में वृद्धि को कम करने के लिए अनुकूलन रणनीतियों में तटीय रक्षा में वृद्धि, उच्च जोखिम वाले क्षेत्रों में आवासों को प्रबंधित और प्राकृतिक तटीय पारिस्थितिक तंत्रों, जैसे मैंग्रोव और आर्द्रभूमि, जो तूफानी लहरों और कटाव के खिलाफ प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं, को विकसित करना शामिल है।

यद्यपि अनुकूलन रणनीतियाँ जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए आवश्यक हैं, तथापि वैश्विक शमन प्रयास, बढ़ते तापमान और हिमनद गलन के मूल कारणों के समाधान के लिए महत्वपूर्ण हैं। ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करना, तापमान में वृद्धि और हिमनद गलन की दर को धीमा करने की सबसे प्रभावी तकनीक है। समुद्र जल स्तर में वृद्धि, के प्रभावों के समाधान के लिए अधिक महत्वाकांक्षी वैश्विक शमन नीतियों की आवश्यकता है। शमन नीतियों को लागू करने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का विस्तार, ऊर्जा दक्षता में सुधार और वनों की कटाई को प्रतिबंधित किया जाना आवश्यक है। पेरिस समझौते जैसे अंतर्राष्ट्रीय समझौते, जलवायु परिवर्तन के समाधान के वैश्विक प्रयासों को समन्वित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। देशों को उनके ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों में निवेश करने के लिए प्रतिबद्धता प्रदर्शित करने की आवश्यकता है। निजी क्षेत्र और जन मानस को भी सतत पद्धतियों को अपनाने और जलवायु अनुकूलन और शमन प्रयासों का समर्थन करने में एक महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करना चाहिए। समय के साथ, इन नीतियों और प्रथाओं को लागू करना जलवायु परिवर्तन के दीर्घकालिक प्रभावों को कम करने में सहायता कर सकता है, जिससे हमारी पृथ्वी को और अधिक स्थिर और सुरक्षित भविष्य की ओर अग्रसर किया जा सकता है।

पृथ्वी के तापमान में वृद्धि, और हिमनद गलन, जलवायु परिवर्तन के सबसे स्पष्ट और चिंताजनक विषय हैं। हिमनद गलन से समुद्र स्तर में वृद्धि हो रही है जिससे तटीय समुदायों और पारिस्थितिक तंत्रों पर जोखिम बढ़ रहा है। तापमान में वृद्धि और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए तत्काल कार्रवाई किये जाने की आवश्यकता है। अनुकूलन रणनीतियाँ और वैश्विक शमन प्रयास दोनों ही जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के समाधान और उनके दीर्घकालिक प्रभावों को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर सकते हैं। भविष्यवाणी के लिए उपयुक्त निदर्श, विस्तृत प्रबोधन और समन्वित नीतियाँ हमें एक स्थायी और सुरक्षित भविष्य की ओर ले जाने में मदद कर सकती हैं।

सपंर्क करें:
डॉ. लवकुश पटेल
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
रुड़की-247667

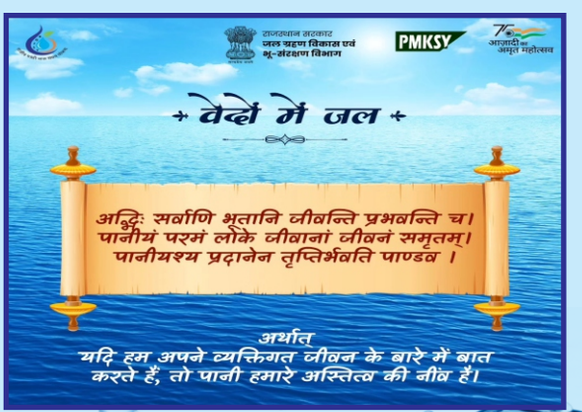

क्रुद्ध नदी

डॉ. दीपक सिंह बिष्ट

प्रचंड जल प्रवाह में, अवरोध ध्वस्त कर चली,
प्रवाहिणी अब क्रुद्ध हो, विध्वंस कर आगे बढ़ी,
आया जो मार्ग में उसे, समग्र लील ही लिया,
अवशेष भी नहीं रहे, आकार रौद्र यूं किया,
बाँध हों या हों नगर, चल पड़ी वो जिस डगर
विनाश ही विनाश था, काल का वो ग्रास था,
दृश्य सब वीभत्स हुए, ध्वनि में करूण नाद था,
सर्वत्र त्राहि-त्राहि ही, एकमात्र सत्य था,
जीवन बना असत्य था, काल ही अब सत्य था,
शवों को नोंचने को अब, खगों को भी धरा नहीं,
प्रलय का रूप जल हुआ, जल रहा जीवन नहीं,
धृष्ट जो खड़ा रहा, दम्भ उसका तोड़ कर,
क्रोध में नदी बढ़ी, उखाड़ उसको फेंक कर,
धरा हो या पहाड़ हों, वन हों या उद्यान हों,
सभी के रूप रंग में, विकार ही विकार था,
जो कभी साकार था, उसका न अब आकार था।

मुनष्य! मेरे मार्ग को, अवरुद्ध तूने क्यों किया?
मेरे प्रेम भाव का, अपमान बोल क्यों किया?
मुझको बांध भी दिया, पथ भी तूने कस दिया,
मेरे तटों को छीन-छीन, अपना तूने कर लिया,
स्वार्थ अपना साधने में, तूने सीमा लाँघ दी,
मान मेरा भंग कर, दण्ड को आवाज दी,
अपराध ही तेरे यहाँ, कारण विनाश का हुए,
स्वर भी चीत्कार के, तेरे ही कारणवश हुए,
शक्ति मेरी जान ले, सीमाएं तू पहचान ले,
मान मेरा करना अब, दायित्व अपना मान ले,
तज के अपना लोभ तू, आदर यदि दर्शाएगा,
करती हूँ आश्वस्त मैं, पुनः नहीं पछताएगा!!
करती हूँ आश्वस्त मैं, पुनः नहीं पछताएगा!!

सपंर्क करें:
डॉ. दीपक सिंह बिष्ट
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
रुड़की-247 667 उत्तराखंड

संकलनकर्ता : पी.के. अग्रवाल

जल समाचार

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की में ''हिमनदों के प्रबोधन'' पर संचालन समिति की दूसरी बैठक का आयोजन

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की में ''हिमनदों के प्रबोधन'' विषय पर 25 अप्रैल, 2024 को संचालन समिति की दूसरी बैठक का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता सुश्री देबाश्री मुखर्जी, सचिव, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार ने की। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक डॉ० मनमोहन कुमार गोयल द्वारा आगंतुक सदस्यों का स्वागत किया गया। इस बैठक में उपस्थित सदस्यों में श्री एस. के. सिन्हा, आयुक्त (बी एंड बी), जल शक्ति मंत्रालय, संयुक्त सचिव (प्रशासन, आईसी और भूजल), जल शक्ति मंत्रालय, डॉ. संजय कुमार जैन, विजिटिंग प्रोफेसर, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की, सुश्री अपर्णा शुक्ला, वरिष्ठ वैज्ञानिक, पृथ्वी मंत्रालय आदि प्रमुख थे।

इस अवसर पर अध्यक्ष महोदया ने अपने उद्घाटन भाषण में हिमालय में हिमनदों के महत्व पर बल दिया और जलवायु परिवर्तन के कारण हिमनद गलन दर में वृद्धि पर चिंता व्यक्त की। उन्होंने इस बात पर भी प्रकाश डाला कि हिमालयी क्षेत्र में हिमनद झील विस्फोट बाढ़ (GLOF) तथा बादल फटने आदि जैसी चरम घटनाएं निरंतर हो रही हैं। उन्होंने कहा कि राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की में ''हिमनदों के प्रबोधन'' पर स्थापित हिममंडल और जलवायु परिवर्तन अध्ययन केंद्र का मुख्य उद्देश्य हिम और हिमनदों के क्षेत्र में कार्यरत संगठनों/एजेंसियों के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करना है जिससे हिमालय में हिममंडलीय संसाधनों के साथ-साथ उनके रुझानों, विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में व्यापक जानकारी विकसित करने में सहायता प्राप्त हो सके। इससे भारत सरकार को नीति निर्माण के लिए आवश्यक अन्तर्वेश प्रदान करने में भी सहायता मिलेगी।

अध्यक्ष महोदया ने हिममंडल क्षेत्र में कार्यरत विभिन्न संगठनों के आउटपुट को समग्र रूप से संकलित करने के लिए हर छह महीने में संचालन समिति की बैठक बुलाने का निर्देश दिया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि हिमालयी नदियों से प्राप्त मौसमी जल प्रवाह पर बहुत बड़ी जनसंख्या निर्भर है और हमें जलवायु परिवर्तन से संदर्भित क्षेत्रों का चयन करने की आवश्यकता है। अध्यक्ष महोदया ने विभिन्न हिमनदों और हिमनद झीलों के मानचित्रण की सलाह दी। बैठक में उपस्थित सदस्यों में श्री एस के सिन्हा, आयुक्त (बी एंड बी) ने विभिन्न एजेंसियों द्वारा किए जा रहे कार्यों की विस्तृत सूची बनाने का अनुरोध किया। संयुक्त सचिव (प्रशासन, आईसी और भूजल) ने सभी सदस्य संस्थानों को संकलन के लिए एक महीने के भीतर हिमनदों पर उपलब्ध जानकारी साझा करने को कहा। डॉ. संजय कुमार जैन, विजिटिंग प्रोफेसर, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुडकी, और पूर्व सदस्य सचिव ने बताया कि हिमनदों पर एक स्थिति रिपोर्ट तैयार की गई थी और समिति के सभी सदस्यों को प्रसारित की गई थी। अध्यक्ष महोदया ने इस रिपोर्ट को सभी सदस्यों को उनके अवलोकन के लिए फिर से परिचालित करने की सलाह दी। सुश्री अपर्णा शुक्ला, वरिष्ठ वैज्ञानिक, पृथ्वी मंत्रालय ने भूगणितीय द्रव्यमान संतुलन के लिए सलाह दी।

राष्ट्रीय जल-विज्ञान संस्थान, रुड़की में उत्तराखंड ''सेतु'' आयोग के उपाध्यक्ष श्री राज शेखर जोशी का दौरा

दिनांक 14.06.2024 को राज्य सशक्तिकरण और परिवर्तन आयोग ''सेतु'' उत्तराखंड के उपाध्यक्ष श्री राज शेखर जोशी ने राष्ट्रीय जलविज्ञान

संस्थान, रुड़की द्वारा किए जा रहे शोधकार्यों पर जानकारी प्राप्त करने के लिए निदेशक डॉ. एम.के. गोयल से शिष्टाचार भेंट की, इस अवसर पर निदेशक महोदय ने संस्थान में हो रहे शोधकार्यों का प्रभागवार विवरण दिया तथा साथ ही क्षेत्रीय केंद्रों पर हो रहे शोधकार्यों पर भी प्रकाश डाला।

श्री जोशी ने बताया कि सेतु आयोग का मुख्य उद्देश्य राज्य में स्थानीय पर्वतीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के साथ-साथ उत्तराखण्ड में मौजूद विविध संभावनाओं के साथ देश व विदेश के निवेशकों को जोड़कर स्थानीय जन-मानस को लाभ पहुंचाने वाली नीतियों का निर्धारण करना है। उत्तराखंड राज्य जल संसाधनों से समृद्ध है और हमारी अर्थव्यवस्था काफी हद तक कृषि, जल विद्युत, जल निकायों (जैसे नदियाँ, झीलें, गर्म झरने), के आसपास पर्यटन, उच्च जल उपयोग वाले उद्योग जैसे खाद्य प्रसंस्करण, पेय पदार्थ और फार्मास्यूटिकल्स आदि पर निर्भर है। कुशल जल प्रबंधन से जल की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित हो सकती है और इन क्षेत्रों में उत्पादकता में वृद्धि हो सकती है, जिससे राज्य की अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिल सकता है। उन्होने संस्थान द्वारा किए जा रहे शोधकार्यों की प्रशंसा भी की साथ ही भविष्य में जल संसाधनों के बेहतर प्रबंधन एवं विकास हेतु भागीदारी से कार्य करने की बात कही, इस अवसर पर संस्थान के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. ए.के. लोहनी, इं. ओमकार सिंह, डॉ. सुरजीत सिंह एवं डॉ. एस.एम. पिंगले उपस्थित रहे।

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की द्वारा ज्वालापुर, हरिद्वार में स्वयं सहायता समूह की महिलाओं के लिए ''जल संरक्षण तथा जल सुरक्षा'' विषय पर एक जन-जागरूकता कार्यक्रम

भारत सरकार के जल शक्ति मंत्रालय के अंतर्गत स्थित जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा संरक्षण विभाग के निर्देशानुसार राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की के तकनीकी प्रकोष्ठ द्वारा दिनांक 24 मई, 2024 को ज्वालापुर, हरिद्वार में स्वयं सहायता समूह की महिलाओं के लिए ''जल संरक्षण तथा जल सुरक्षा'' विषय पर एक जन-जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ इं. ओमकार सिंह, डॉ. संतोष मुरलीधर पिंगले, श्री रविन्द्र दयाल, सहायक नगर आयुक्त, श्री पवन कुमार, श्री सुमित भारद्वाज द्वारा संयुक्त रूप से दीप प्रज्जवलित करके किया गया। इं. ओमकार सिंह ने जल संरक्षण एवं तालाबों के जीर्णोधार पर अपना व्याख्यान प्रस्तुत किया तथा सुझाव दिया कि हम सभी को दैनिक कार्यों में जल की बचत करनी चाहिए तथा तालाबों में गंदगी नहीं फैलानी चाहिए। डॉ. संतोष मुरलीधर पिंगले ने अन्न एवं जल सुरक्षा में जन भागीदारी विषय पर व्याख्यान देते हुए कहा कि हम सभी का दायित्व है कि जल सुरक्षा का विशेष ध्यान रखें तथा कम से कम उर्वरकों एवं दवाइयों का प्रयोग करें जिससे कीटनाशक जल में जाकर उसको दूषित न कर पायें। मुख्य अतिथि श्री रविन्द्र दयाल, सहायक नगर आयुक्त, हरिद्वार ने जलवायु परिवर्तन पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि वैज्ञानिकों को इस विषय पर अतिरिक्त शोध करने की आवश्यकता है तथा महिलाओं से अनुरोध किया कि दैनिक कार्यों में उपयोग किये गए जल का प्रयोग हम दूसरे कार्यों में करके भी जल की बचत कर सकते हैं। श्री राजेश अग्रवाल द्वारा राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान के बारे में जानकारी प्रदान की गई। श्रीमती बबीता शर्मा एवं श्रीमती बीना प्रसाद ने महिलाओं द्वारा अपने घरों से लाये गये जल का परीक्षण किया तथा जल गुणवत्ता के बारे में जानकारी प्रदान की। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के कर-कमलों द्वारा स्वयं सहायता समूह की महिलाओं को प्रशिक्षण प्रमाणपत्र वितरित किये गये। इस अवसर पर महिलाओं ने अपने हस्त निर्मित उत्पादों की प्रदर्शनी भी लगाई जिसकी सभी प्रतिभागियों ने काफी प्रशंसा की।

रोटरी क्लब रुड़की द्वारा विश्व पर्यावरण दिवस 2024 का आयोजन

29 मई, 2024 को ''रोटरी क्लब रुड़की'' के सहयोग से ''288 मीडियम रेजिमेंट, रुड़की'' द्वारा विश्व पर्यावरण दिवस 2024 के अवसर एक व्याख्यान का आयोजन किया गया जिसमें राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की में कार्यरत डॉ. संतोष मुरलीधर पिंगले वैज्ञानिक ''डी'' ने जल संरक्षण के लिए ''कैच द रेन'' अभियान और वर्षा जल संचयन के महत्व पर व्याख्यान दिया। डॉ. पिंगले ने इस वर्ष ''विश्व पर्यावरण दिवस'' की थीम ''भूमि बहाली, मरुस्थलीकरण और सूखे से निपटने'' के बारे में विस्तार से बताया और भूमि को बहाल करने, मरुस्थलीकरण को रोकने और सूखे से निपटने की विभिन्न तकनीकों पर चर्चा की। उन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला कि हमारे जल संसाधन अंधाधुंध दोहन, जलवायु परिवर्तन, भूमि उपयोग/भूमि आवरण में बदलाव और जल की बढ़ती मांग से ग्रसित हैं। उन्होंने जल संरक्षण के लिए ''कैच द रेन'' अभियान के महत्व पर चर्चा की। उन्होंने किसी भी क्षेत्र में उचित संचालन और रखरखाव प्रावधानों के साथ वर्षा जल संचयन प्रणालियों को सावधानीपूर्वक अपनाने की सिफारिश की। केन्द्रीय भू-जल बोर्ड द्वारा अनुमोदित मानदंडों और वैज्ञानिक क्षेत्र जांच के आधार पर वर्षा जल संचयन रणनीतियों (पुनर्भरण या भंडारण या दोनों) के उचित चयन पर भी बल दिया। जिनके अभाव में क्षेत्र को भविष्य में जल जमाव की समस्या, एक जलभृत के भीतर स्वच्छ भूजल भंडार के संदूषण और अन्य हानियों का सामना करना पड़ सकता है। देश में जल सुरक्षा और खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने के लिए भविष्य के उपयोगों के लिए भूजल पुनर्भरण और भंडारण को बढ़ाने के लिए जल की कमी वाले क्षेत्र में वर्षा जल योजनाओं की आवश्यकता के साथ व्याख्यान का समापन हुआ।

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की के राजभाषा प्रकोष्ठ द्वारा हिन्दी कार्यशाला तथा रा.भा. कार्यान्वयन समिति की 91वीं बैठक का आयोजन

संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 90वीं बैठक में लिए गए निर्णय के अनुपालन में राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की के संगणक केन्द्र एवं राजभाषा प्रकोष्ठ द्वारा संयुक्त रूप से दिनांक 27 जून 2024 को ''गूगल इनपुट/वॉइस टाइपिंग'' विषय पर एक हिन्दी/यूनिकोड कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में संस्थान में कार्यरत 22 अधिकारियों/कर्मचारियों ने प्रतिभाग किया। इस अवसर पर कार्यशाला में व्याख्यान देने के लिए भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड, रानीपुर हरिद्वार के वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी श्री विनीत वशिष्ठ को मुख्य व्याख्यानदाता के रूप में आमंत्रित किया गया। अपने व्याख्यान में श्री वशिष्ठ द्वारा प्रतिभागियों को राजभाषा के नियमों, अधिनियमों, पत्र लेखन, अनुवाद आदि की जानकारी प्रदान की गयी। साथ ही साथ गूगल इनपुट/वॉइस टाइपिंग विषय का कंप्यूटर पर प्रशिक्षण प्रदान किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. सोबन सिंह रावत, वैज्ञानिक एफ एवं राजभाषा प्रभारी द्वारा की गयी। इस अवसर पर राजभाषा प्रभाग में कार्यरत वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी श्री प्रदीप कुमार उनियाल, एवं राजभाषा प्रकोष्ठ में कार्यरत अन्य अधिकारी/कर्मचारी उपस्थित थे।

दिनांक 27 जून 2024 को सायंकालीन सत्र में संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 91वीं बैठक का आयोजन किया गया। बैठक की अध्यक्षता राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की के निदेशक डॉ मनमोहन कुमार गोयल द्वारा की गयी। डॉ सोबन सिंह रावत वैज्ञानिक ''एफ'' एवं राजभाषा प्रभारी इस समिति के सदस्य सचिव हैं। समस्त प्रभागों के प्रभागाध्यक्ष तथा समस्त प्रभारी अधिकारी इस बैठक में उपस्थित थे। इस बैठक में विगत

बैठक में लिए गए निर्णयों पर की गई अनुवर्ती कार्रवाई की समीक्षा की गयी। इसके अतिरिक्त विगत बैठक के बाद किये गए हिंदी कार्यो की समीक्षा एवं अगले तिमाही तक किये जाने वाले कार्यों का लक्ष्य निर्धारण किया गया।

हिममंडल निदर्शन और आपदा आंकलन पर प्रशिक्षण कार्यक्रम

हिममंडल और जलवायु परिवर्तन अध्ययन केंद्र, राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की और आपदा न्यूनीकरण एवं प्रबंधन उत्कृष्टता केंद्र, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की के संयुक्त प्रयास से 6-11 मई, 2024 के दौरान ''हिममंडल निदर्शन और आपदा आंकलन" विषय पर 5 दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की के टीम सदस्य डॉ. अजंता गोस्वामी (प्रशिक्षण समन्वयक), डॉ. संजय के जैन (प्रशिक्षण संयोजक), डॉ. सुमित सेन (अध्यक्ष, आपदा न्यूनीकरण एवं प्रबंधन उत्कृष्टता केंद्र) और राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की के टीम सदस्य डॉ. विशाल सिंह (प्रशिक्षण समन्वयक), डॉ. सुरजीत सिंह (प्रभागाध्यक्ष, C4S) और डॉ. अतर सिंह (प्रशिक्षक), प्रशिक्षण कार्यक्रम को सफल बनाने में सक्रिय रूप से शामिल थे। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, बॉम्बे, भारतीय विज्ञान संस्थान बैंगलोर, जवाहरलाल नेहरु विश्वद्यालय, नई दिल्ली, राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थानों तथा, SJVNL और THDC आदि जैसे भारत के विभिन्न संस्थानों से लगभग 20 प्रतिभागियों ने भाग लिया।

जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में SWAT के उपयोग द्वारा जलविज्ञानीय निदर्शन पर प्रशिक्षण पाठ्यक्रम

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुडकी द्वारा छात्रों, शोधार्थियों, केंद्र और राज्य सरकार के तकनीकी और वैज्ञानिक कर्मचारियों और जल संसाधन के क्षेत्र में कार्यरत पेशेवरों के लिए ''जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में SWAT का उपयोग करके ''जलविज्ञानीय निदर्शन'' विषय पर 03 जून, 2024 से 06 जून 2024 तक छह दिवसीय प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम के समन्वयक डॉ. मनीष कुमार नेमा वैज्ञानिक 'ई' थे। कार्यक्रम का उद्घाटन डॉ. वाई.आर.एस. राव, वैज्ञानिक 'जी' और कार्यवाहक निदेशक, राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान (NIH) द्वारा 03 जून, 2024 को राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान रुड़की के समिति कक्ष में किया गया। उद्घाटन सत्र में, डॉ. ए.आर. सेंथिल कुमार, प्रभागाध्यक्ष, जल संसाधन तंत्र प्रभाग, डॉ. सुरजीत सिंह, प्रभागाध्यक्ष, सी4एस केन्द्र, डॉ. सुहास खोब्रागड़े, प्रभागाध्यक्ष, जलविज्ञानीय अन्वेषण प्रभाग, एवं इं. ओमकार सिंह, प्रभागाध्यक्ष, तकनीकी प्रकोष्ठ, तथा संस्थान के अन्य वरिष्ठ वैज्ञानिकों की उपस्थिति रही। प्रशिक्षण के दौरान प्रशिक्षुओं को SWAT के विभिन्न प्रशिक्षण मॉड्यूल और विषयों के बारे में प्रशिक्षण दिया गया तथा सभी प्रशिक्षण मॉड्यूलों का प्रशिक्षुओं को पूर्ण अभ्यास कराया गया जिससे वे अपने शोध कार्यों में इसका उपयोग कर सकें।

सपंर्क करें:
पी.के. अग्रवाल
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
रुड़की-247667

जल चेतना (जुलाई 2024)

समीक्षक

डॉ मुकेश कुमार शर्मा
वैज्ञानिक 'एफ'

डॉ मनीष कुमार नेमा
वैज्ञानिक 'ई'

डॉ राजेश सिंह
वैज्ञानिक 'ई'

डॉ दीपक सिंह बिष्ट
वैज्ञानिक 'सी'

डॉ. शक्ति सूर्यवंशी
वैज्ञानिक 'सी'

डॉ कलजंग छोड़न
वैज्ञानिक 'सी'

डॉ अजीत कुमार बेहेरा
वैज्ञानिक 'सी'

डॉ प्रविन रंगराव पाटील
वैज्ञानिक 'सी'

डॉ कुलदीप शर्मा
वैज्ञानिक 'सी'

डॉ पिंटू कुमार गुप्ता
वैज्ञानिक 'बी'

डॉ शैलेन्द्र कुमार कुमरे
वैज्ञानिक 'बी'

डॉ सतेन्द्र कुमार
वैज्ञानिक 'बी'

श्री प्रदीप कुमार उनियाल
वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी

सम्पादन सहयोग

श्री पुष्पेन्द्र कुमार अग्रवाल
वैज्ञानिक 'बी' (सेवानिवृत्त)

ठंकण सहयोग

श्री हंसराज
टंकण सहायक

HANDS - ON - TRAINING OF ICP - MS AND GC - MS
FOR
CWC OFFICERS
17th – 21st June 2024
Organized by
NATIONAL INSTITUTE OF HYDROLOGY ROORKEE

NATIONAL INSTITUTE OF HYDROLOGY, ROORKEE
Jointly with
INDIAN INSTITUTE OF TECHNOLOGY ROORKEE
THE INSTITUTION OF ENGINEERS (INDIA)
ROORKEE LOCAL CENTRE, ROORKEE
Celebrates
WORLD WATER DAY

स्वच्छता पखवाड़ा
25 मार्च, 2024
कचरा मुक्त भारत

ISO 9001:2015
2nd YEAR SURVEILLANCE AUDIT
(20-21 March, 2024)

पंजीयन संख्या : UTTHIN/2012/46793

अभिकल्पित एवं मुद्रित : पैरामाउण्ट ऑफसैट प्रिंटर्स, रूड़की